Approved by UGC (Sr.5780)
Impact Factor 1.223 (IIFS)

ISSN 0975-4083

RESEARCH JOURNAL OF ARTS, MANAGEMENT & SOCIAL SCIENCES

Half Yearly, Bilingual (English / Hindi)

A Registered Reviewed/ Refereed Research Journal
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals International Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक : XVI-I	वर्ष– VIII	हिन्दी संस्करण	अप्रैल, 2017

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act, 1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN- 975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

अर्द्धवार्षिक, द्विभाषी (अंग्रेजी/हिन्दी)
पंजीकृत रिव्यूड/रेफर्ड रिसर्च जरनल

Impact Factor 1.223 (IIFS)

Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A.

Title Id : 715204

अंक-XVI-I	वर्ष-08	हिन्दी संस्करण	अप्रैल, 2017

प्रमुख सम्पादक

प्रोफेसर ब्रजगोपाल

प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित

ऑनरेरी सम्पादक

डॉ. एस. अखिलेश

प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित

डॉ. संध्या शुक्ल

प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीतिविज्ञान
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा

सम्पादक

डॉ. गायत्री शुक्ल

संयुक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका

म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

www.researchjournal.in

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -

अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
पांच वर्ष	2000.00	2500.00
आजीवन (15 वर्ष)	4500.00	5500.00

सदस्यता शुल्क बैंक ड्राफ्ट गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा के नाम से बनवाया जाकर सम्पादक प्रोफेसर ब्रजगोपाल शुक्ल, 41/42 रघुवंश सदन, बिछिया, रीवा– 486001 (म.प्र.) के पते पर भेजा जाय। राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच–रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667) के खाता क्रमांक 30016445112 में भी जमा की जा सकती है। नगद जमा की स्थिति में 50 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. रामलला शुक्ल, रीवा
2. डॉ. राजेश मिश्रा, लखनऊ
3. डॉ. सी.डी. सिंह, रीवा
4. डॉ. रामशंकर, जबलपुर
5. डॉ. प्रियंकर उपाध्याय, वाराणसी
6. डॉ. अरविन्द जोशी, वाराणसी
7. डॉ. दीपक पाचपोर, रामपुर
8. डॉ. दिवाकर शर्मा, सागर
9. डॉ. शैलजा दुबे, भोपाल
10. डॉ. डी. एस. राजपूत, सागर
11. डॉ. प्रहलाद मिश्रा, जबलपुर
12. डॉ. ए.के. श्रीवास्तव, रीवा
13. डॉ. एन.पी. पाठक, रीवा
14. डॉ. आनन्द कुमार, नई दिल्ली
15. डॉ. जी. के शर्मा, उज्जैन
16. डॉ. बी.पी. बडोला, धर्मशाला
17. डॉ. सुनीता द्विवेदी, नईदिल्ली
18. डॉ. ज्योति उपाध्याय, उज्जैन
19. प्रो. अंजली बहुगुणा, श्रीनगर
20. डॉ. के.के. शर्मा, रीवा
21. डॉ. आर.एन. शर्मा, रीवा
22. डॉ. सी.एम. शुक्ला, छतरपुर
23. डॉ. अलका श्रीवास्तव, रायपुर
24. डॉ. सीमा श्रीवास्तव, बालाघाट
25. डॉ. आरती झा, शहडोल
26. डॉ. पवन दुबे, कासगंज
27. प्रो. प्रमिला श्रीवास्तव, कोटा
27. डॉ. प्रमिला पूनिया, जयपुर

संपादकीय कार्यालय- **41/42, रघुवंश सदन, शांति कुंज, बिछिया रीवा- 486001**
मो.- 7974781746
E-mail - gresearchjournal@rediffmail.com
researchjournal.journal@gmail.com

प्रकाशक- **गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा- 486001 (म.प्र.)**
E-mail - gayatripublicationsrewa@rediffmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र) रहेगा।

अनुक्रमणिका

1. *सामाजिक सरोकारों के कवि रहीम* 05
आलोक कुमार सिंह

2. *विज्ञान व प्रौद्योगिकी के उभरते परिदृश्य मे राष्ट्रभाषा हिन्दी की दशा व दिशा* 22
अमित शुक्ल

3. *फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का लोकतात्विक अनुशीलन* 28
उमाकान्त मिश्र
अनुराधा श्रीवास्तव

4. *सतना जिले में ग्रामीण महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमान (एक समाज शास्त्रीय अध्ययन)* 35
अखिलेश शुक्ल

5. *छवि निर्माण में जनसंपर्क की महत्वपूर्ण भूमिका* 43
अदिति नामदेव

6. *विकेन्द्रित ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका : राजस्थान के विशिष्ट सन्दर्भ में एक अध्ययन* 50
रश्मि सोमवंशी

7. *पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जति के वृद्धजनों के सामाजिक–आर्थिक परिपेक्ष्य* 57
वसुधा कुलश्रेष्ठ

8. *संचार क्रान्ति एवं अपराध भारत के परिपेक्ष्य में* 61
रत्नावली गर्ग
पारुल कुमारी

9. *अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की आर्थिक स्थिति (जिला कटनी म.प्र. के विशेष संदर्भ में)* 68
सन्ध्या खरे

10. *छत्तीसगढ़ में सशक्तिकरण की दिशाएँ* 77
मंजुलता कश्यप, रामसेवक भगत

11. *महाभारत में निरूपित राजधर्म* *85*
राजरानी शर्मा

12. *मध्यप्रांत विधान परिषद का प्रथम निर्वाचन एवं कार्यकाल*
(सन् 1920 ई. से 1923 ई. तक)
महेन्द्र कुमार सार्वा

13. *डी.पी.आई.पी. विकासखण्ड अमहा जिला सीधी के सन्दर्भ में* *103*
संध्या शुक्ला

14. *भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास* *114*
अमृता सिंह

15. *राज्यों के विकास में स्थानीय स्वशासन की भूमिका* *119*
(राजनांदगांव नगर पालिक निगम के विशेष संदर्भ में)
भारती सोनी
डी.एन. सूर्यवंशी

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

सामाजिक सरोकारों के कवि रहीम

* आलोक कुमार सिंह

सारांश- रहीम की दोहावली के अधिकाँश दोहों में जीवन-दर्शन की चर्चा की गई है। रहीम अपने प्रशासन काल में देश के अनेक भागों में रहे। वे भारतीय भाषा और संस्कृति के अनन्य प्रेमी थे। ब्रज भाषा पर तो उनका अधिकार ही था, अवध में रहकर अवधी, राजस्थान में राजस्थानी, महाराष्ट्र में मराठी तथा दक्षिण की अन्य भाषाओं, उधर बंगला भाषियों से उनका सम्पर्क हुआ। ब्रज के पश्चात् अवधी तथा कौरवी खड़ी बोली में उन्होंने सर्वाधिक काव्याभिव्यक्ति की। रहीम ने ज्योतिष में एक स्वतंत्र ग्रन्थ की ही रचना कर डाली जिससे उनके गम्भीर ज्योतिष-ज्ञान और पाण्डित्य का सुन्दर परिचय मिलता है।नगर-शोभा में तो कवि ने अपने युग के सभी छोटे बड़े उद्योग-धन्धों से सम्बधित व्यवसायियों की शब्दावली का खूब प्रयोग किया है बरवै-नायिका भेद में अवध के ग्रामों की स्त्रियों के संयोग-वियोग के मर्मस्पर्शी चित्र ग्रामीण वातावरण के भीतर ही खींचे हैं। इस प्रकार लोक-जीवन का रहीम ने गम्भीर अध्ययन किया था, साथ ही अपने को तद्नुकूल ढ़ाल भी लिया, इसमें तिल मात्र भी सन्देह नहीं।निःसन्देह रहीम सामाजिक जीवन के दृष्टा थे, एवं उनका सम्पूर्ण जीवन सामाजिक सरोकारों से भरा हुआ है। उनके दोहे जीवन के प्रमाण हैं, इसलिए वे दोहे कालजयी हैं, और समाज में सतत ग्राह्य हैं।

रहीम बहुमुखी, प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे। वे अपने युग के सर्वप्रमुख योद्धा, कुशल राजनीतिज्ञ, सुयोग्य व्यवस्थापक और श्रेष्ठ कवि थे। अकबर के दरबार का कोई अन्य व्यक्ति इतना अधिक गुण-सम्पन्न नहीं था। वे हिन्दु-मुसलमान, तुर्क, अफगान सबको एक दृष्टि से देखते थे इसी कारण सब लोग समान रूप से उन्हें चाहते थे। उन्होंने कभी भी किसी याचक को अपने यहाँ से निराश नहीं लौटने दिया। अपने पास की सारी धन-दौलत को तुरन्त दान कर देने में उन्हें जरा भी संकोच नहीं होता था। खानखाना कूटनीतिक व्यवहार में भी अत्यधिक कुशल थे। अनेक अवसरों पर उन्होंने अपनी इस राजनीतिक कुशलता का परिचय दिया था। अब्दुर्रहीम सभी धर्मो के प्रति सहिष्णु थे। उन्होंने किसी भी धर्म या मजहब को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखा। धर्म के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण व्यापक था। ईसाई-मजहब के मानने वालों को उनसे कोई शिकायत नहीं थी और उन्होंने रहीम की प्रशंसा की है। हिन्दू-धर्म के प्रति उनकी विशेष आस्था थी, यह निष्कर्ष उनकी हिन्दी कविता में भगवान राम, कृष्ण के प्रति अभिव्यक्त भावनाओं से निकाला जा सकता है। उन्होंने 'रहीमी', 'करीमी' और 'सलारी' नामक तीन जहाज हज यात्रा हेतु निजी खर्चे से बनवाए थे।[1] उन्होंने बुरहानपुर से चार मील पर लालबाग से जुम्मा मस्जिद तक एक

★ असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, माँ मंशादेवी महाविद्यालय, चन्दौली

नहर बनवाई थी और मस्जिद के पास एक फव्वारा बनवाया था जिससे नमाजी जल लेकर हाथ पैर धो सकें।रहीम सच्चे अर्थ में भारतीय थे। उन्हें भारत को प्रत्येक वस्तु प्रिय थी। कला-कौशल के प्रति उनका अगाध प्रेम था। उन्होंने दक्षिण में सरखेज के पास फतेहबाग और बुरहानपुर के पास लालबाग बनवाए। बुरहानपुर की घनी आबादी को कम करने के लिए उसके समीप ही जहाँगीरपुर नाम का नया नगर बसाया था। मआसिरे-रहीमी में खानखाना द्वारा निर्मित अनेक भवनों और स्नानागारों का विस्तृत उल्लेख मिलता है।[2] ललित कलाओं के प्रति भी रहीम की समान अभिरूचि थी। वे संगीतज्ञों, चित्रकारों, कवियों का यथेष्ट सम्मान करते थे और उनके संरक्षक थे।

अब्दुर्रहीम खानखाना कई भाषाएँ जानते थे। उनका लोक-प्रचलित और साहित्यिक दोनों कोटि की भाषाओं पर समान अधिकार था। अरबी, फारसी, तुर्की, संस्कृत, हिन्दी में उनकी समान गति थी। मरासिरूल-उमरा में लिखा है कि खानखाना अरबी, फारबी और तुर्की भाषाएँ बहुत अच्छी तरह जानता था और अनेक भाषाएँ जो संसार में प्रचलित हैं उनमें भी बातें करता था।[3] उनकी काव्य-प्रतिभा हिन्दी-काव्य रचना में विशेष रूप से प्रस्फुटित हुई हैं। वे उच्च कोटि के अनुवादक भी थे। कम उम्र में ही उन्होंने तुर्की से फारसी में बाबरनामा का अनुवाद प्रस्तुत किया था। वे फारसी, अरबी, हिन्दी को समान गति से पढ़ सकते थे और पढ़ते ही एक भाषा का अनुवाद दूसरी भाषा में इस प्रकार करते थे कि जैसे कि वह भाषा मूल रूप में ही पढ़ रहे हों। हिन्दी को फारसी और अरबी-फारसी को अरबी व हिन्दी तथा अरबी को फारसी व हिन्दी में समान गति से पढ़ देना उनकी एक विशेषता थी।[4] हिन्दू-शास्त्रों का भी उन्हें यथेष्ट ज्ञान था। उन्होंने अपनी सभी कविताओं में 'रहीम' तखल्लुस (उपनाम) रखा था। यह कहा जाता है कि अकबरी दरबार के पदाधिकारियों में जितनी अधिक काव्य-रचना उन्होंने की उतनी सम्भवतः किसी ने नहीं की और काव्य-कला की दृष्टि से भी वह सबसे बढ़-चढ़कर थी।[5]

खानखाना की प्रशंसा उनके दरबारी कवियों ने तो की ही जो बिल्कुल स्वाभाविक ही था क्योंकि रहीम स्वयं भी उनके पोषक और प्रशंसक थे किन्तु ऐसे अन्य कवियों ने भी रहीम की प्रशंसा की है जिनका उनके निजी अथवा अकबरी दरबार से कोई सम्बन्ध नहीं था। केवल वे दो-एक बार ही उनके सम्पर्क में आए थे और उसी से वे खानखाना के व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित हो गए थे। खानखाना के सम्पर्क में जो भी कवि आया उसे उनमें कोई न कोई विशेषता अवश्य दृष्टिगत हुई जिसका उसने छन्दोबद्ध रूप में भाव-प्रकाशन कर दिया।

रहीम तथा संस्कृत के कवि-

रहीम का संस्कृत कवियों से यथेष्ठ परिचय था। उनके समकालीन श्रीकृष्ण दैवज्ञ 'दैवज्ञराज' की उपाधि से विभूषित थे। रहीम तथा दैवज्ञराज श्रीकृष्ण दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में अद्वितीय थे। दोनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध था इसका परिचय हमें दैवज्ञराज श्री कृष्ण की प्रसिद्ध कृति जातक-पद्धति-उदाहरण से मिलता है। इसी ग्रन्थ में रहीम की प्रामाणिक जन्मतिथि एवं जन्म-कुंडली दी हुई है। उनके संरक्षक अकबर महान् की प्रशस्ति लिखने के पश्चात् उनका भी पर्याप्त गुणगान किया है।

आकबरपातसाहमहाप्रतापस्यअपराप्रतिकृतिरतिप्रणयपात्रं

वित्रासितानैकषात्रवस्त्रीनेत्रकादाम्बिनीप्रसृमरबहलवाष्पपाथोधिसमिद्धयद्धमानः प्रतापवऽवानलः

सकलषिष्टोपजुष्टपादपीठःनिखिललिपिषिल्पदेषभाषाविषारदःसर्वानवद्यहृद्यविधाविनोदभोदमानसः सकलपंडितमण्डलीसमाश्रयविश्रान्तिकल्पपादपःश्रीखानखानापरनामधेयः प्रधानपुरषः।तस्य सकलकल्याणपरम्पराभाजनस्थ
धर्ममार्गप्रवर्तकधुरीणस्य जन्मसमयमधिकृत्स उदाहरणक्रमो लिख्यते।[6]

सम्राट जहाँगीर के शासन-काल में सन् 1609 ई0 में नारायणशाह के पुत्र प्रतापशाह के आश्रय में रूद्र कवि ने खानखाना चरित की रचना की। प्राचीन परम्परागत शैली में खानखाना के पराक्रम, शौर्य, दानवीरत्व तथा विशेषतः युद्ध-वीरत्व आदि का ही वर्णन है परन्तु किसी घटना का उल्लेख-मात्र भी नहीं किया गया। कृति की भाषा बड़ी उत्कृष्ट एवं ओजस्वी है। गद्य-पद्यमय यह रचना चम्पूकाव्य शैली में लिखी गई है।[7]

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि आचार्य केशवदास का रहीम से घनिष्ठ परिचय बताया जाता है। उन्होंने जहाँगीर-जस-चन्द्रिका में रहीम की प्रशंसा निम्नलिखित छन्द में की है-

साहि जू की साहिबी को रक्षक अनंत गति
कीनो एक भगवंत हनुवंत बीर सों।
जाको जस केसोदास भूतल के आसपास
सोहत छबीलो क्षीर सागर के क्षीर सों।
अमित उदार अति पावन विचारि चारू
जहाँ तहाँ आदरियो गंगा जी के तीर सों।
खलन के धालिबे को खलक के पालिबे को
खानखाना एक रामचन्द्र जू के तीर सों।।[8]

मुंशी देवीप्रसाद ने खानखाना की प्रशंसा में 'प्रसिद्ध' कवि रचित निम्नलिखित छन्द का उल्लेख किया है-

सात दीप सात सिंधु थरक-थरक करैं
जाके उर टूटत अखूट गढ़ राना के।
कंपत कुबेर बेर मेर मरजाद छांड़ि
एक-एक रोम झर पड़े हनुमाना के।
धरनि धसक धस मुसक गई
भनत प्रसिद्ध खम्भ डोले खुरसाना के।
सेस फल फूट फूट चूर चकत्तर भए
चले पेस खाना जू नवाब खानखाना के।।[9]

खानखाना की अतुलित वीरता और उनके वैभव एवं उत्कर्ष का कवि ने बड़ा मनोरम वर्णन उक्त छन्द में कर दिया है।

शिवसिंह-सरोज में भी 'प्रसिद्ध' कवि रचित खानखाना का आतंक सम्बन्धी एक छन्द उपलब्ध होता है-

गाजी खानखाना तेर धौसा की धुकार सुनि
सुत तजि पति तजि भाजी बैरी बाल हैं।
कटि लचकत बार भमार न सम्भारि जात
परी विकराल जहं सघन तमाल हैं।
कवि परिसिद्ध तहां खगन खिजाओ आनि

जल भरि भरि लेती दृगन विलास हैं।
वैनी खैचे मोर सीस फूल को चकोर खैंचे
मुकता की माल ऐचि खैंचत मराल हैं।।[10]

पं मया शंकर याज्ञिक ने रहीम-रत्नावली में रहीम की प्रशंसा का 'प्रसिद्ध' कवि रचित एक छप्पय उद्धृत किया है-

जलद चरन संचरहिं सबर सोहैं समत्य गति
रूचिर रंग उतंग जंग मंडहि विचित्र अति
वैरम सुवन नित बकसि बकसि हत्थ देत मंगिनन
करत राग परसिद्ध रोस छंडहि न एक दिन
थरहरहिं पलट्टहिं उच्छलहिं, नच्चत धावत तुरंग इमि।
खंजन जिमि नागरि-नैन जिमि नट जिमि मृग जिमि पवन जिमी।।[11]

नरहरि ने भी एक छन्द में "परम प्रबीन शानिशाना सो उजीर जाके, नयाहि विलसत साहि अकबर" द्वारा खानखाना के गुणों की प्रशंसा की है।[12]

रहीम और गंग-

रहीम को हिन्दी काव्य-क्षेत्र में प्रवेश कराने का श्रेय कवि गंग को दिया जाता है। गंग और रहीम का पारस्परिक सम्बन्ध बड़ा ही घनिष्ठ सर्वप्रथम वह खानखाना के निजी दरबार के सर्वप्रतिष्ठित कवि थे। गंग की काव्य-प्रतिभा से रहीम को हिन्दी-काव्य रचना की प्रेरणा मिली। स्वयं गंग भी रहीम के वीरोचित तथा अन्य विशिष्ट गुणों से प्रभावित हुए थे। उन्होंने कई छन्दों में रहीम का गुणगान मुक्तकण्ठ से किया है।

चकित भंवर रहि गयो गमन नहीं करत कमल बन।
अहिफनि मनि नहिं लेत तेज नहिं बहत पवन धन।।
हंस मानसर तज्यो चक्क चक्की न मिले अति।
बहु सुन्दरि पदिमिनी पुरूष न चहैं न करैं रति।।
खलमलित सेस कवि गंग मन अमित तेज रवि रथ खस्थो।
खानखाना बैरम सुवन जबहि क्रोध करि तँग कस्यो।।[13]

एक दोहे में गंग ने रहीम को प्रयागराज की उपमा से विभूषित किया है-

गंग गौछ मौछै जमुन अधर सरसुती राग
प्रकट खानखाना भयो कामद बदन प्रयाग।।[14]

प्रयाग राज जिस प्रकार अनेक मनोरथों की पूर्ति करता है वैसे खानखाना सब इच्छाओं की पूर्ति करने वाले हैं अतः उनके लिए कवि की यह उपमा उचित ही है।

रहीम और तुलसी-

गोस्वामी तुलसीदास और खानखाना समकालीन थे और दोनों में घनिष्ठ परिचय भी था। बाबा श्रेणी माधवदास रचित 'मूलगुसाईचरित' में उल्लेख मिलता है कि रहीम के बरवै छन्द की प्रेरणा से तुलसीदास ने 'बरवै-रामायाण' की रचना की।

कवि रहीम बरबै रचे पठये मुनिवर पास।
लखि तेइ सुंदर छन्द में, रचना कियेउ प्रकास।।[15]

गोस्वामी तुलसीदास और रहीम के दोहों में भी भाव-साम्य मिलता है।[16]

बिन प्रपंच छल भीख भलि लहिय न हिये कलेस।

बामन हवै को छल्यो भलो दियो उपदेस।। (तुलसीदास)
परि रहिबो मरिबो भलो सहिबो कठिन कलेस।
बामन ह्वै बलि को छल्यो भलो दियो उपदेस।।(रहीम)

गोस्वामी तुलसीदास और रहीम की रचनाओं में अन्यत्र भी भाव-साम्य मिलता है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि दोनों ने एक-दूसरे की रचनाओं का अवलोकन किया था और उनसे पारस्परिक प्रेरणा ग्रहण की थी। रहीम का गोस्वामी जी से साक्षात्कार हुआ और वे उनके व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित हुए थे।

रहीम का पांडित्य और भाषा सम्बन्धी ज्ञान-

मुगल शासन में रहीम ने सर्वोच्च पदों को सुशोभित किया और इतने उच्च पदों पर रहते हुए भी विविध विषयक कृतियों का सृजन करके जिस साहित्यिक अभिरूचि का परिचय दिया, वह उनके विशिष्ट व्यक्तित्व और बहुमुखी प्रतिभा का परिचायक है। बाल्यावस्था में उन्होंने फारसी, अरबी, संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की थी। सम्भवतः इन भाषाओं के वाड्मय से अभिभूत होकर उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में पदार्पण किया उनके काव्य और कला-प्रेम के कारण अनेक कवि और कलाकार उनके सम्पर्क में आए। उनसे भी रहीम को काव्य-सृजन की प्रेरणा अवश्य मिली होगी। उनको संस्कृत, हिन्दी-भाषाओं और साहित्य के अध्ययन तथा कवियों के सम्पर्क के अतिरिक्त अकबर जैसे उदार शासक से भी उन्हें प्रेरणा मिली होगी, परिणामस्वरूप भारतवर्ष की भारती, हिन्दी से उन्होंने अटूट और गहरा सम्बन्ध जोड़ लिया। उस युग में हिन्दी भाषा की ब्रज और अवधी बोलियाँ अधिक व्यापक थीं।

मुगलों के उत्कर्ष काल 1551-1640 ई0 तक के सर्वेक्षण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस युग में संस्कृत की सर्वांगीण उन्नति हुई। संस्कृत वाड्.मय को कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था जिसमें इन साहित्यकारों ने रचनाएँ न प्रस्तुत की हों यथा काव्य, रीति, अलंकार, छन्द, कोश, विश्वकोश, व्याकरण, स्मृति, धर्म, नक्षत्र-विज्ञान, ज्योतिष, भक्ति, दर्शन, वैधक, तन्त्र, वैदिक साहित्य, श्रृंगार, नीति-उपदेश आदि। मौलिक ग्रन्थों के अतिरिक्त टीकाएँ, उदाहरण-ग्रन्थ, वार्तिक, भाष्य, कारिकाएँ आदि भी बड़ी संख्या में लिखी गईं। अत्यधिक कार्य-व्यस्त रहने के कारण रहीम संस्कृत साहित्य के कुछ थोड़े से अंगों में ही रचनाएँ प्रस्तुत कर पाए, जिसमें प्रधानता ज्योतिष और काव्य को मिली। ज्योतिष में मुगलों की विशेष रूचि थी। खानखाना की ज्योतिष-विषयक खेट-कौतुक कई दृष्टियों से असाधारण कृति है। इनसे रहीम का संस्कृत-भाषा के प्रति विशेष प्रेम झलकता है। इसके अतिरिक्त कुछ स्फुट श्लोक भी लिखे जिनका विषय मुख्यतः भक्ति व श्रृंगार है।[17]

खानखाना और हिन्दी-

रहीम ने भी उत्तर-भारत की सर्वप्रचलित ब्रज भाषा को प्रश्रय दिया। उन्होंने दोहावली की रचना ब्रजभाषा में की। रहीम की भावानुभूति ब्रजभाषा के मिश्रण से अपना स्थायी प्रभाव डालती है। रहीम ने ब्रजभाषा में सवैया, कवित्त, पद की भी रचना की, यद्यपि उनकी ये रचनाएँ अत्यल्प मात्रा में मिलती हैं। अवधी का परिमार्जन और परिशोधन गोस्वामी तुलसीदास के द्वारा किया गया। इतिहासकारों ने रहीम को भी इस दृष्टि से तुलसीदास के समकक्ष रखा है।बरवा छन्द का हिन्दी काव्य में सर्वप्रथम प्रयोग रहीम ने ही किया। उन्होंने अपना प्रसद्धि नायिका-भेद इसी बरवा छन्द में लिखा। बरवा छन्द

अवधी में जितना सुन्दर और भावपूर्ण बन पड़ा है। सम्भवतः और किसी बोली में उतने मधुर रूप में व्यक्त नहीं हो सकता। रहीम के बरवों की प्रधान भाषा अवधी है किन्तु उसके साथ हिन्दी, ब्रज व भोजपुरी तथा संस्कृत, फारसी भाषाओं के शब्द भी यथास्थान प्रयुक्त हुए हैं जिनसे उनकी रोचकता ओर बढ़ गई है। नायिका भेद के अतिरिक्त रहीम के स्फुट बरवै भी मिलते है जिनमें श्रृंगारेत्तर भावों की अभिव्यक्ति हुई है। रहीम के पूर्व तक खड़ी बोली की कोई उल्लेखनीय रचना अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी है। रहीम ने ब्रज और अवधी के साथ खड़ी बोली को भी मान्यता दी। उनकी 'मदनाष्टक' रचना खड़ी बोली मे मिलती है।

खानखाना और फारसी–

फारसी में रहीम की केवल स्फुट कविताएँ ही उपलब्ध होती हैं। उनका कोई दीवान फारसी में लिखा नहीं मिलता। उनकी जो स्फुट फारसी-रचनाएँ उपलब्ध होती हैं वे उस युग की श्रेष्ठ फारसी रचनाओं के समकक्ष हैं। उनकी सर्वप्रसिद्ध फारसी कृति 'तुजुक-बाबरी' तुर्की रचना की फारसी आवाज है। यह अनुवाद उनकी विद्वता और फारसी की गहन अध्ययन का परिचायक है।[18]

रहीम ने संस्कृत, हिन्दी के साथ-साथ उर्दू फारसी मिश्रित भाषा रेख्ता का प्रयोग किया है। उनका यह प्रयोग अपने ढ़ंग का अनूठा है क्योंकि उनके पूर्व किसी अन्य कवि ने संस्कृत, हिन्दी और उर्दू का मिश्रित प्रयोग काव्य रचना के लिए नहीं किया। रहीम ने अपनी अन्य रचनाओं में भी उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि रहीम ने कविता में उर्दू का प्रयोग आरम्भ करके जिस नए मार्ग का अवलम्बन किया अनेक आगामी कवियों ने उसका अनुसरण कर उसे काव्य-रचना के लिए बिल्कुल प्रशस्त बन दिया। इस दृष्टि से काव्य-क्षेत्र में उर्दू को लाने का विशेष श्रेय रहीम को है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

शील और स्वभाव–

रहीम दानी तो इतने थे कि अपने आपे से भी बाहर होकर व्यय कर देते थे। वे पुरस्कार और दान के अवसर ढूँढते रहते थे। कोई निर्धन या गुणी व्यक्ति उनके द्वार से कभी विमुख नहीं लौटा। एक बार जो भी उनके सम्पर्क में आता था उसे वे इतना धन दे देते थे कि उसे किसी और दरबार में जाने की आवश्यकता नहीं होती थी। खानखाना ने बिना किसी भेदभाव के सभी वर्ग और जाति के लोगों को उन्मुक्त हाथ से दान दिया। उनकी इसी उदारता और गुण-ग्राहकता के कारण उनके निजी दरबार में विद्वानों और गुणियों का जमघट लगा रहता था।

रहीम की हिन्दी–रचनाएँ–

रहीम का हिन्दी से अपार प्रेम था। सम्पूर्ण भारत की जनता में हिन्दी का एक छत्र राज्य था। साहित्य के क्षेत्र में रहीम की प्रसिद्धि एवं लोकप्रियता का प्रमुख कारण उनकी हिन्दी रचनाएँ ही हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में जनसाधारण की रूचि का आद्योपान्त ध्यान रखा है। जनता का साथ उन्होंने आदि से अन्त तक कहीं नहीं छोड़ा। गम्भीर से गम्भीर बात भी वे सरल एवं स्पष्ट शब्दों में कह देने में हिन्दी के कवियो में सबसे अधिक सफल हुए हैं। उनके कथन में न कहीं आडम्बर है न विस्मयकारी चमत्कार ही। उन्होंने जितनी भी रचनाएँ लिखीं वे या तो भगवद्विषयक हैं या श्रृंगारिक अथवा अधिकाँश उपदेश एवं

नीतिपरक। अब्दुर्रहीम खानखाना की रचनाएँ हिन्दी साहित्य-जगत में 'रहीम' के नाम से प्रचलित हैं। रहीम की रचनाओं के अनेक संग्रह पच्चीस-तीस वर्षों से समय-समय पर छपते रहे हैं। इनमें ब्रजरत्नदास का 'रहिमन-विलास', हिन्दी-साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रकाशित 'रहिमन-विनोद' सुरेन्द्रनाथ तिवारी द्वारा संपादित 'रहीम-कवितावली', पं0 रामनेरश त्रिपाठी का 'रहीम', श्री रामनाथ सुमन का 'रहिमन-चन्द्रिका', लाला भगवानदीन का 'रहिमन-शतक' और पंडित मयाशंकर याज्ञिक द्वारा संपादित 'रहीम-रत्नावली' विशेष उल्लेखनीय हैं। इन सब संग्रहों में याज्ञिक जी का संग्रह पूर्ण और प्रामाणिक ज्ञात होता है।

दोहावली–

रहीम की कृतियों में सभी संग्रहकारों ने सर्वप्रथम उनकी दोहावली का वर्णन किया है। जिसमें लगभग तीन सौ से अधिक दोहों का परिचय किसी भी संग्रह ग्रन्थ में नहीं मिलता।

नगर शोभा–

रहीम रचित 'नगर-शोभा' नामक ग्रन्थ रहीम-रत्नावली, तथा रहिमन-विलास में मिलता है। ग्रन्थ के प्रत्येक दोहे में रहीम का नाम न होने पर भी कविता की भाषा, उसकी प्रौढ़ता तथा भावों को देखने से यह ग्रन्थ रहीम का जान पड़ता है। रहीम के फुटकर संग्रह 'श्रृंगार-सोरठा' की भाषा से इसकी भाषा मिलती है। सबसे विश्वस्त प्रमाण यह है कि पुस्तक के आरम्भ में ही लिखा है 'अथ नगर-शोभा नवाब खानखाना कृत'।स्व0 पं0 मयाशंकर याज्ञिक ने इस ग्रन्थ का आधार प्राचीन हस्तलिखित प्रति दिया है। इस रचना में 142 दोहे हैं, आरम्भ मंगलाचरण से होता है।

बरवै नायिका-भेद–

रहीम कृत 'बरवै नायिका-भेद' एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। कई हस्तलिखित प्रतियों में इसका उल्लेख मिलता है। सीतापुर निवासी स्व0 पं0 कृष्ण बिहारी मिश्र तथा काशीराज के पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रतियों का उल्लेख रहीम-रत्नावली में हुआ है। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित त्रैवार्षिक खोज रिपोर्ट 1909-10-11 में रहीम विरचित बरवै नायिका-भेद का परिचय दिया गया है।'बरवै नायिका-भेद' के अतिरिक्त रहीम के 101 बरवै स्वतंत्र रूप से लिखे हुए रहीम-रत्नावली में मिलते हैं। स्व0 पं0 मयाशंकर याज्ञिक के कथनानुसार इस रचना की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति उनको खोज में मिली थी। रहीम की माता जमाल खां मेवाती की बेटी थी और यह प्रति भी उनको मेवात में ही मिली है। अतएव ग्रन्थ प्रामाणिक ही ज्ञात होता है।

मदनाष्टक–

'मदनाष्टक' रहीम की एक श्रृंगारिक कृति है। रहीम की यह रचना संस्कृत-शैली पर मालिनी छन्द में लिखी हुई है। ये छन्द संस्कृति मिश्रित खड़ी बोली हिन्दी में लिखे गए हैं। मदनाष्टक के आठ छन्दों के अतिरिक्त रहीम-काव्य के दो छन्द भी मिश्रित भाषा में हैं। भाषा की दृष्टि से 'मदनाष्टक' रहीम के प्रारम्भिक जीवन की रचना ज्ञात होती है क्योंकि न तो इसमें भावों की प्रांजलता, मधुरता ही है और न भाषा की प्रौढ़ता ही। खड़ी बोली हिन्दी के दृष्टिकोण से यह रचना महत्वपूर्ण अवश्य है।रचना में एक-दो स्थलों पर कुछ शब्दों के प्रयोग संस्कृत की विभक्ति रहित हुए हैं।[19]

खेटकौतुक जातकम्–

रहीम का ज्योतिष-ग्रन्थ खेटकौतुक जातकम् भी प्रसिद्ध रचना है। ग्रन्थ का प्रकाशन ज्ञान-सागर प्रेस, बम्बई से हुआ है। यह ग्रन्थ फारसी-मिश्रित संस्कृत भाषा में लिखा गया है।[20] ग्रन्थ के आरम्भ में स्वयं रहीम ने लिखा है-

करोम्यब्दुल रहीमोऽहं खुदाताला प्रसादतः
पारसीयपदैर्युक्तं खेट कौतुक जातकम्।।

ग्रन्थ में रहीम विरचित कुल 123 श्लोक हैं। सूर्य, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु, केतु आदि भावों के फल तथा राजयोग पर श्लोक संस्कृत-मिश्रित भाषा में लिखे गए हैं।

फुटकर–

'रहीम-रत्नावली' में 'फुटकर' शीर्षक के अन्तर्गत रहीम के चार कवित्तों, पाँच सवैयों, दो दोहों और दो पदों का उल्लेख हुआ है। 'खानखानानामा' में मुँशी देवी प्रसाद ने रहीम के 'संस्कृत-काव्य' शीर्षक के अन्तर्गत हिन्दी का एक सवैया और एक घनाक्षरी दी है। रहीम के छः सोरठे भी 'श्रृगांर-सोरठा' शीर्षक के अन्तर्गत रहीम-रत्नावली में संग्रहीत हैं।अब्दुर्रहीम खानखाना की उपर्युक्त रचनाएँ उनकी हिन्दी-काव्य में सजग प्रवृत्ति की द्योतक हैं। रहीम की हिन्दी-रचनाओं के विषय पर दृष्टिपात करने से उनकी धार्मिक विचारधारा का परिचय प्राप्त कर उन पर श्रृद्धा उत्पन्न होती है। मुसलमान होते हुए भी उन्होंने हिन्दुत्व की भावना को अपनी हिन्दी-कविता में आश्रय दिया।

भाषा–

रहीम ने अपनी रचनाओं में पूर्वी हिन्दी की अवधी बोली तथा पश्चिमी हिन्दी की ब्रज का समान व्यवहार किया है। बरवै नायिका-भेद, फुटकर बरवों की भाषा अवधी और दोहावली की भाषा ब्रज है। शौरसेनी प्राकृत में श, श, स के स्थान में केवल 'स' का व्यवहार प्रचलित हो गया था। इसी नियम को ध्यान में रखते हुए कुछ संग्रहो में तीनों में श, श, स को यथास्थान प्रयोग न करके 'श' के लिए केवल एक ही दन्त्य 'स' को प्रधानता दी गई है। पुरानी हस्तलिखित पुस्तकों में भी सर्वत्र यही लिखा मिलता है।[21] रहीम के हिन्दी-काव्य में अनेक स्थानों में बहुत से संस्कृत तत्सम शब्द ज्यों के त्यों मिलते हैं यथा-ऋण, ऋतु, कृपा, श्रीकृष्ण आदि जबकि ब्रज तथा अवधी के कवियों ने रिन, रितु किरपा आदि रूप ही सामान्य जन-प्रयोग को दृष्टि में रखकर प्रयुक्त किए हैं।

रहीम की रचनाओं के वर्ण्य-विषय–

रहीम की समस्त रचनाओं में उनकी दोहावली ही सर्वाधिक जन-प्रचलित रचना है। दोहावली का आरम्भ गंगा की स्मृति से मिलता है। इसके पश्चात् नीति, उपदेश, भक्ति, सहज अनुभूति सम्बन्धी बातों का वर्णन आया है। बीच-बीच में विरह और उसके सहारे प्रकृति के कुछ रमणीय दृश्यों का भी मोहक परिचय मिलता है। नीति-उपदेश के अन्तर्गत जीवन की अस्थिरता, भवितव्यता, धैर्य, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि शड्रिपुओं के कुप्रभाव, मान-मर्यादा आदि के वर्णन किये गए हैं। दोहावली में उक्ति-वैचिष्य के भी कहीं-कहीं सुन्दर उदाहरण मिलते हैं।अकबरी-दरबार की श्रृगांरिक भावनाओं का प्रभाव रहीम की 'नगर-शोभा' रचना में देखा जा सकता है। इसमें विविध जाति की स्त्रियों का सजीव चित्रण मिलता है। एक-एक या दो-दो दोहों में कैथनि, जौहरनि, वरइन, रंगरेजिन,

बनजारिन, तुरकिन, गूजरी आदि स्त्रियों के सजीव चित्र नेत्रों के सम्मुख खड़ा कर देना रहीम की उत्कृष्ट वर्णन शक्ति का परिचायक है।22कवि की 'बरवै नायिका-भेद' रचना में स्वकीया, परकीया, गणिका के भेद, उपभेद के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। इस प्रकार की नायिकाओं-प्रोषित-पतिका, प्रवत्स्यत्पतिका, वासक सज्जा, कलहान्तरिता आदि के भी उदाहरण मिलते हैं। त्रिविध नायिका-उत्तमा, मध्यमा और अधमा का भी वर्णन हुआ है। नायकों के भी उदाहरण ग्रन्थ में भेद-विभेद के साथ आ गए हैं। दर्शन के अन्तर्गत श्रवण, स्वप्न, चित्र साक्षात् और सखी तथा सखी जन-कर्म के सम्बन्ध में मंडन, शिक्षा, उपालम्भ परिहास के सजीव उदाहरण रहीम ने दिये हैं। दोहावली के पश्चात् रहीमकालीन यही रचना अधिक प्रचलित है।

'रहीम' के फुटकर छन्दों में भी श्रृंगारिक भावनाओं का ही समावेश है। इनमें भी विशेष रूप से विप्रलम्भ-श्रृगांर का। इसमें छः छन्दों में कृष्ण की स्तुति के बाद वियोग सम्बन्धी छन्दों का आरम्भ हो जाता है। यह वर्णन 'बारह-मासा' के क्रम पर किया गया ज्ञात होता है। इनमें विरहिणी की दीन दशा का सजीव चित्रण हुआ है। बरवै छन्दों में व्यक्त विरह की भावना कवि की उत्कृष्ट कला की द्योतक है।'मदनाष्टक' रचना में रहीम ने कृष्ण की मुरली के व्यापक प्रभाव, गोपियों की विह्वलता तथा कृष्ण के रूप-सौन्दर्य द्वारा उद्दीप्त गोपी-प्रेम-भावना और कृष्ण से मिलने की उनकी तीव्र आकाँक्षा का वर्णन किया है। यह सम्पूर्ण वर्णन विप्रलम्भ श्रृंगार के अन्तर्गत स्मृति संचारी के ही रूप में हुआ है। गोपियों में कृष्ण के वंशीनाद, उनकी रूप-माधुरी तथा उनकी मधुर चाल-ढ़ाल तथा बोली ने उनके विरह को और भी उद्दीप्त कर दिया है और वे कृष्ण से मिलने के लिए लालायित हो उठती हैं।

रहीम के 'खेटकौतुक जातकम्' ग्रन्थ में ज्योतिष विषय वर्णित हैं। आरम्भ में मंगलाचार के पश्चात् सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि के नक्षत्रों के भाव-फल बारह-बारह श्लोकों में दिए गए हैं। इसके पश्चात् राहु का भाव-फल बारह श्लोकों में और केतु का केवल एक श्लोक में वर्णित है। मनुष्य-जीवन पर ग्रहों और नक्षत्रों के प्रभाव इस विधा के अनुकूल ही दिखाए गए हैं। ग्रन्थ के अन्त में राजयोग पर एक अध्याय मिलता है जिसमें 25 श्लोक हैं। इसमें वर्णित योग और उनके फल ज्योतिष-ग्रन्थों से प्रमाणित भी होते हैं।रहीम के पदों में कृष्ण के रूप-सौन्दर्य का वर्णन मधुर ब्रजभाषा में हुआ है। पदों की शब्द-योजना श्रुतिमधुर और संगीतात्मक है। कवित्त और सवैया में कृष्ण का बाल-वर्णन, उनके गुणों का कथन और साधारण नीति तथा शिक्षा के विषय आए हैं। कवि के सोरठों में कृष्ण के रूप-सौन्दर्य तथा विप्रलम्भ श्रृगांर का विशेष वर्णन हुआ है। इन सोरठों में कवि ने उक्ति-वैचिष्य में सुन्दर उदाहरण दिए हैं। कवि ने अपने संस्कृत श्लोकों में भगवान कृष्ण के मोक्ष की प्रार्थना की और जाति-भेद मिटाने का प्रयास किया है।

नीतिकार रहीम-

हिन्दी काव्य-जगत में नीतिकार के रूप में रहीम को महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण इस रूप में उनका अत्यधिक लोकप्रिय होना है। रहीम ने काव्य के अनेक क्षेत्रों में अपनी विलक्षण प्रतिभा का चमत्कार दिखाया है तथापि उनसे अधिकाँश जनता इसी रूप में अधिक परिचित है। जीवन के विविध रूपों का अनेकशः

घटनास्थलों पर जितना साक्षात्कार करने का अवसर रहीम को मिला था उतना हिन्दी के किसी अन्य कवि को नहीं। फिर स्वानुभूति का अभिव्यक्तिकरण अत्यधिक सरल, सीधा एवं सबसे निराला साथ ही बड़ा ही व्यंजनापूर्ण है। इस क्षेत्र में रहीम को शब्दों का एकमात्र पारखी कहा जाए तो अत्युकित न होगी। थोड़े से सरल शब्दों में तीव्रानुभूति कराने वाले रहीम के नीति विषयक दोहे जन-जीवन के कंठहार बन गए हैं।संसार की ऐसी रीति है कि स्वार्थवश सभी प्रत्येक से सम्बन्ध जोड़ते हैं, पश्चात् उसका तत्काल त्याग कर देते हैं। कवि कितने सुन्दर शब्दों में इसी भाव को व्यक्त करता है। द्रष्टव्य है-

काज परै कछु और है, काज सरै कछु और।
रहिमन भँवरी के भए, नदी सिरावत भौर।।

इसमें 'भँवरी' और 'नदी में सिरावत' शब्द बड़े महत्व के हैं। हिन्दुओं के धार्मिक जीवन से घुल मिल कर इतनी आत्मीयता प्रकट करने वाले व्यक्ति के प्रति किसका मस्तक श्रद्धा से नहीं झुक जाएगा। मनुष्य भौतिक सुखों के पीछे पागल होकर भागता फिरता है परन्तु फिर भी उसे वास्तविक सुख नहीं मिल पाता। ऐसी स्थिति में व्यक्ति निराश होकर नाना प्रकार के अशोभनीय कृत्य कर डालता है। ऐसे व्यक्तियों को रहीम की ये पंक्तियाँ धैर्य एवं सन्तोष से कार्य करते हुए जीवन को थोड़े में ही अधिक आनन्दमय बनाने की प्रेरणा देती हैं-

काह कामरी पामरी, जाड़ गए से काज।
रहिमन भूख बुताइए, कैस्यो मिलै अनाज।।

समाज का अल्पतम साधन-प्राप्त व्यक्ति आज भी निरन्तर इन पंक्तियों को दुहराता रहता है। उसे एक विचित्र जीवन इन पंक्तियों से मिला करती है। समाज में सबके साथ प्रीतिपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। जीवन की अवधि अल्प है और यह भी निश्चित नहीं पुनः मानव-शरीर मिलेगा ही। बड़े ही सौभाग्य से यह जीवन मिला है, मनुष्य को इस अवसर को व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए-

रीति प्रीति सब सों भली, बैर न हित मित गोत।
रहिमन याही जनम की, बहुरि न संगति होत।।

रहीम के नीत्युपदेशों तथा अनुभवों के सम्बन्ध में उपरोक्त कतिपय पंक्तियों से स्पष्ट आभास मिलता है कि वे उच्च कोटि के नीतिकार थे। जीवन का जितना व्यापक एवं गहन अध्ययन एक नीतिकार के लिए आवश्यक है वह उनमें पूर्णतया विद्यमान था। यही कारण है कि वे युगों से जन-जीवन के कंठहार बने हुए हैं, भविष्य में भी संसार अपने संतृप्त क्षणों, विपत्तियों, सुख-दुख, हर्ष-विषाद की घड़ियों में उन्हें अपना चिरसंगी समझ कर स्मरण करता रहेगा। उनकी एक-एक पंक्ति हिन्दी जगत् का जाज्वल्यमान रत्न है।

अकबर कालीन धार्मिक परिस्थिति-

अकबर ने तत्कालीन सभी प्रकार की धार्मिक भावनाओं का एकीकरण करना चाहा। उसकी धार्मिक उदारता का परिणाम था कि उसने बौद्धिक आधार पर अपनी प्रजा में धार्मिक एकता एवं नैकट्य का प्रचार किया और 'दीने-इलाही' की स्थापना से उदारवादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित किया। इसके अतिरिक्त इस युग में भक्ति के क्षेत्र में सूर, तुलसी, नन्ददास आदि राम और कृष्ण के अनन्य भक्त हो चुकी थे। तुलसी से तो रहीम की घनिष्ठ मैत्री भी थी। केशव से भी परिचित थे। वे कवि भी भक्ति के किसी

ने किसी सम्प्रदाय से अवश्य प्रभावित थे। यही कारण है कि रहीम की रचनाओं में कृष्ण और राम दोनों का गुणानुवाद समान रूप से हुआ है।

रहीम के पूर्व भी बहुत से 'मुलायम तबियत' के मुसलमान कवि एवं भक्त दोनों हुए जिनकी सहानुभूति बराबर इस देश के निवासियों के प्रति न्यूनाधिक मात्रा में रही। रहीम, रसखान, रसलीन, रसनिधि आदि भक्तों की कोटि में आते हैं। भारत के कण-कण से उनकी आत्मीयता है। प्रभु की दया और उदारता का पता तभी लगता है जब हम सांसरिक यातनाओं से पीड़ित किए जाते हैं। सुख को तो मनुष्य अपनी देन समझ कर प्रभु के उपकारों को विस्मृत कर देता है। इसीलिए कहावत है-

दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करै, दुख काहे जो होय।।

विपत्ति के समय में सब ओर से सहारा छूट जाता है। सम्पत्ति के साथी विपत्ति में साथ छोड़ देते हैं तब अनाथों के सहायक, परम दयालु प्रभु को बहुत दिनों से भूला-भटका मानव स्मरण करने लगता है। भक्त भी विपत्तिकाल में उनकी शरण में जाता है। विपत्ति से वह निराश न होकर अपने लिए वरदान तथा प्रभु-स्मरण की एकमात्र सौभाग्य दायिनी समझ कर उससे चिपका रहता है।काव्य-रचना-जगत में रहीम का मुसलमान से अधिक हिन्दू होना ही विशेष सम्भव ज्ञात होता है। इनकी हिन्दी की कोई रचना उठाकर देखिए उसकी प्रति पंक्ति में आपको भारतीय प्रेम, भक्ति, दान, अनुभव, सभ्यता आदि का निदर्शन मिलेगा। उपमाएँ, कथानक, प्राकृतिक दृश्य आदि जो कुछ हैं, सभी में हिन्दुत्व भरा हुआ है।[23]

मध्यकालीन हिन्दू धर्म की सगुणोपासना की भक्ति का प्राण अवतारवाद था। इस्लाम अवतारवाद का कटट्र विरोधी है परन्तु रहीम की अवतारवाद पर अपार निष्ठा थी। राम और कृष्ण जो मध्यकालीन धर्म-भावना के अनुसार ईश्वर के अवतार माने जाते हैं। रहीम ने मुक्त हृदय से सर्वत्र उनका गुणानुवाद किया है। मध्यकालीन धर्म-साधना में पुराणों का विशिष्ट स्थान था। पौराणिक आख्यानों का श्रवण-कथन भी भक्ति भावना का प्रबल पोषक समझा जाता था। पुराणों की उपदेशप्रद कथाओं को भक्तों तथा नीतिकारों ने अनेक स्थानों पर उद्धृत किया है। रहीम ने भी यत्र-तत्र पुराणों की कथाएँ उद्धृत की हैं। इनके उद्धरणों में कहीं भी ऐसी त्रुटियाँ नहीं हैं। इससे ज्ञात होता है कि पुराणों का भी उन्होंने अध्ययन किया था।कवि ने धन की अस्थिरता का बड़े ही रोचक शब्दों में वर्णन किया है। भृगु द्वारा ब्रह्मा, विष्णु, महेश की परीक्षा की कथा भी पुराणों का प्रसिद्ध आख्यान है। क्षमा के प्रसंग में इसी को प्रायः उद्धृत किया जाता है-

छिमा बड़न को चाहिए, छोटिन के उत्पात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात।।

कुसंग का दुष्फल सभी को भोगना पड़ता है। गंगा का पवित्र जल आम के फल में मीठा रस हो जाता है। वही जल नीम की जड़ में पड़ता है तो कड़ुवा हो जाता है। दुष्टों के साथ से बचकर ही अपनी महत्ता की रक्षा हो सकती है। रामायण के कथानक का एक अंश लेकर इसी तथ्य की कवि ने निम्न पंक्तियों में मार्मिक अनुभूति कराई है-

बसि कुसंग चाहत कुसल, यह रहीम जिय रोस।
महिमा घटि समुद्र की, रावन बस्यो परोस।।

इस प्रकार रहीम की सारी रचनाओं में भारतीयता कूट-कूट कर भरी हुई है। रहीम जन्म से मुसलमान होते हुए भी पुनर्जन्म के भारतीय सिद्धान्त से पूर्णतया अनुप्राणित थे। भारत के कण-कण से उनकी गहरी आत्मीयता थी। इसी कारण आज भी वे हमारे हृदय-सम्राट बने हुए हैं। यही उनके काव्य की अप्रतिम उपयोगिता एवं महत्ता है।

रहीम की प्रेम-भावना-

मध्यकालीन कवियों एवं नीतिकारों में रहीम का विशिष्ट स्थान है। अपनी कृतियों में उन्होंने प्रेम के उज्जवल रूप का ही विशेष रूप से दर्शन कराया है। श्रृंगारिक प्रसगों में जहाँ प्रेम के अतिवासनात्मक हो जाने का भय रहता है रहीम ने उन स्थलों में प्रेम की पवित्रता की बड़े कौशल एवं चातुर्य से संरक्षा की है। साथ ही उनका प्रेम अवास्तविक तथा अति अशरीरी भी नहीं होने पाया है। उसका सम्बध मानवमात्र से है।प्रेम का शत्रु स्वार्थ है। जहाँ स्वार्थ रहता है अथवा प्रेमी से किसी प्रयोजन विशेष से प्रेरित होकर प्रेम किया जाता है वह क्षणिक, प्रभावहीन एवं आडम्बर-मात्र होता है। भला रवि-रजनी एक स्थान पर कैसे टिक सकते हैं। प्रेम में तो प्रेमी अपने प्रिय पात्र से कुछ भी नहीं चाहता। लेन-देन की भावना प्रेम के पवित्र वातावरण को कलुषित कर देती है-

कहि रहीम या जगत से, प्रीति गई दै टेरि।
रहि रहीम नर नीच में, स्वारथ स्वारथ हेरि।।

प्रेम के संसार की रीति ही निराली है, यहाँ तो अग्नि धुक-धुक करके प्रति क्षण जला ही करती है।प्रायः देखा जाता है कि जो सुगलता है वह बुझ जाता है, जो एक बार बुझ जाता है, पुनः सुलग नहीं सकता। परन्तु प्रेम में दग्ध तो बुझ-बुझ कर सुलगते रहते हैं-

जे सुलगे ते बुझि गए, बुझे ते सुलगे नाहिं।
रहिमन दाहे प्रेम के, बुझि-बुझि के सुलगाहिं।।

इस प्रकार प्रेम का विशद वर्णन रहीम ने अपनी सभी रचनाओं में किया है।

रहीम की भाषा-

अकबर के दरबार के कवियों की रचनाओं की मुख्य भाषा ब्रज थी। इनमें अवधी का व्यवहार बहुत कम मिलता है। रहीम के 'बरवै नायिका भेद' फुटकर बरवों तथा नरहरि के छप्पय की भाषा अवश्य अवधी है और बरवै छप्पय छन्द विशेष रूप से अवधी में ही आकर्षण लगते हैं। रहीम फारसी, अरबी, तुर्की, आदि विदेशी भाषाओं के प्रकाण्ड पंडित थे। रहीम देश्य भाषाओं, बोलियों के ही नहीं संस्कृत के भी सुविज्ञ अध्येता थे। संस्कृत साहित्य की ज्ञान गरिमा का उन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। उनकी कुछ रचनाओं में संस्कृत के पूरे वाक्यखण्ड ही व्यवहृत मिलते हैं, संस्कृत में एक-दो स्वतंत्र रचनाएँ भी उन्होंने लिखीं।बरवों को साहित्य के क्षेत्र में लाने वालों में रहीम सर्वप्रथम हैं। फारसी में बरवों की रचना उनकी फारसी भाषा को एक मौलिक देन है। रहीम ने फारसी शब्दों का प्रयोग प्रभूत मात्रा में किया है। कुछ बरवों की भाषा तो एकदम फारसी ही है।

मी गुजरद ई दिलरा, वे दिलदार।
इक इक साअत हमचूँ, साल हजार।
गर्क अज में शुद आलम, चन्द हजार।
वे दिलदार कै गीरद, दिलन करार।।

दिलबर जदबर जिगरम, तीन निगाह।
तपादा जां भी आयद, हरदम आह।। इत्यादि।।

रहीम ने हिन्दी के अर्धतत्सम तथा तद्भव शब्दों के ही अधिक प्रयोग किये हैं। आधुनिक खड़ी-बोली हिन्दी की भाँति तत्सम शब्दों की मात्रा बहुत ही अल्प हैं। स्वर भक्ति, स्वरागम, स्वर-संकोच आदि द्वारा उनकी यह विशेषता प्रकट हुई है। जैसे-भक्त-भगत, पुरूषार्थ-पुरूषारथ, क्लेश-कलेस, स्नेह-सनेह आदि। रहीम की कृतियों में ठेठ ग्रामीण शब्दों के भी विशेष प्रयोग हुए हैं। जैसे-छिमा, खीस, पेड़ (पग), ढ़ेकुली, धूर, धनवा (बादल), रहँट, विथुरे बार, करेजवा, नथुनियां आदि। रहीम की 'मदनाष्टक' नामक कृति खड़ी बोली में ही लिखी गई है। किन्तु इसमें संस्कृत के कुछ शब्दों के प्रयोग सविभक्तिक रूप में हुए हैं। इस रचना के कुछ छन्द दृष्टव्य हैं-

शरद निशि निशीथे चाँद की रोशनाई।
सघन वन निकुंजे कान्ह बंसी बजाई।
रति पति सुत निद्रा साइयाँ छोड़ भागी।
मदन शिरसि भूयः क्या बला आन लागी।।
जरद बसन बाला गुल चमन देखता था।
झुक-झुक मतवाला गावता देखता था।
श्रुतियुग चपला से कुण्डल झूमते थे।
नयन कर तमाशे मस्त ह्वै घूमते थे।।

दोहों में भी कहीं-कहीं खड़ी बोली का प्रभाव दिखाई देता है-

चारा प्यारा जगत में, छाला हित कर लेय।
ज्यों रहीम आटा लगे, त्यों मृदंग स्वर देय।।
समय परे ओछे बचन, सब के सहे रहीम।
सभा दुसासन पर गहे, गदा लिए रहे भीम।।

रहीम की ज्योतिषशास्त्री के रूप में लिखित 'खेट कौतुकम्' रचना मिश्र-भाषा की दृष्टि से आदर्श है। कवि ने फारसी शब्दों के रूपों का विन्यास भी संस्कृत के अनुरूप ही किया है। मिश्रित भाषा की पूर्व परम्परा के सम्बन्ध में रहीम का निम्नलिखित छन्द दृष्टव्य है-

फारसीयपद मिलितग्रन्थाः खलु पण्डितैः कृताः पूर्वैः।
सम्प्राप्य तत्पद पथं करवाणि खेटकौतुकं पद्यैः।

उपर्युक्त उदाहरण में सर्वत्र फारसी शब्दों में संस्कृत के नियमानुसार विभक्तियाँ लगाकर प्रयुक्त किया गया है। क्रियाएँ सर्वत्र संस्कृत ही हैं। क्रिया रूपों तथा विभक्तियों के फारसी होने से सम्भवतः ये श्लोक संस्कृत के न रहकर फारसी के हो जाते परन्तु रहीम ने सारी रचना में कही भी ऐसा अवसर आने नहीं दिया।

मुहावरे तथा कहावतें-

मुहावरों और कहावतों का यथास्थल प्रयोग कविता में ओज, प्रभाव एवं मनोहरता उत्पन्न कर देता है। रहीम ने दोहों में उनका विशेषतः प्रयोग किया है। ताड़ की छांह, गाढ़े दिन को मित्त, मथे न माखन होय, पशु बिन पूंछ विषान इस प्रकार के न जाने कितने मुहावरों, लोकोक्तियों के प्रयोग कवि ने अपने भाव को स्पष्ट करने तथा उनमें

अभिव्यक्ति क्षमता एंव व्यञ्जकता लाने के लिए किए हैं।बरवै में वातावरण की उग्रता, मेघ की गरजन-तरजन, विरहोद्दीपन तथा विरह जनित पीड़ा विकलता को प्रदर्शित करने के लिए रहीम ने इन्हीं के अनुकूल मुहावरों, कहावतों आदि का प्रयोग किया है जैसे-मुसरधार, तरफत मीन, बौरी बाँझ जाने व्यावर पीर, जीवन भूरि आदि।

रहीम की शैली-

शैली के अन्तर्गत छन्द, अलंकार और गुण के समावेश के अतिरिक्त कुछ आन्तरिक विशेषताएँ भी होती हैं जिनमें स्पष्टता, सरलता, प्रभविष्णुता आदि प्रमुख हैं। रहीम के काव्य में हास्य, वीभत्स, रौद्र, वीर रसों का सर्वथा अभाव है। माधुर्य गुण से युक्त रचनाओं में बरवै-नायिका-भेद, मदनाष्टक आदि की गणना की जाती है। एक-एक बरवै की मधुर रस धारा का अजस्त्र प्रवाह सहृदयों को रस-विभोर बना देता है। जैसे-

पीव पीव कहि चातक, सठ अधरात।
करत बिरहिनी तिय के, हिय उत्पात।।

और

सखि सिख सीखि नवेलिया कीन्हेसि मान।
पिय लखि कोय भवनवा गनेसि ठान।।

प्रसाद गुण के परिचायक दोहे रहीम की दोहावली में प्राप्त होते हैं। वे सहृदय या पाठक के मस्तिष्क को श्रान्त न करके, सरल सहज रूप में अर्थ बोध करा देते हैं।

कंसे निबैहें निबल जन, करि सबलन सों गैर।
रहिमन बसि सागर विषे, करत मगर सों बैर।।

स्पष्टता-

रहीम के जितने भी नीतिपरक दोहे हैं, सभी स्पष्ट हैं। उनमें किसी प्रकार की भी जटिलता नहीं मिलती है। जैसे-

अमर बेलि बिनु मूल की, प्रति पालत है ताहि।
रहिमन ऐसे प्रभुहिं तजि, खोजत फिरिए काहि।।

सरलता-

रहीम का काव्य प्रायः इतना सरल है कि उसे समझने के लिए गहन अभ्यास की अपेक्षा नहीं होती। वह तो कानों के मार्ग से हृदय में पहुँचते ही बोलने लगता है। जैसे-

रहिमन अंसुवा नयन ढ़रि,जिय दुख प्रगट करेइ।
जाहि निकारो गेह ते, कस न भेद कहि देइ।।

प्रभविष्णुता-

शैली में प्रभविष्णुता का आशय होता है कि कोई कथित बात स्पष्ट एवं सरल रूप में आकर्षण एवं मनोरम ढ़ंग से कही जाय।जैसे-

विगरी बात बनै नहीं, लाख करौ किन कोय।
रहिमन फाटे दूध को, मथे न माखन होय।।

सूक्त्यात्मकता-

सूक्त्यात्मकता का सीधा-साधा अर्थ इतना ही है कि कथित बात व्यक्ति विशेष से सम्बद्ध न होकर सामान्य नियम का सा रूप धारण कर ले, साथ ही उसके कहने का ढ़ंग भी आकर्षक हो। रहीम के नीति के दोहे इसी श्रेणी में आते हैं-

रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
उनते पहिले वे मुये, जिन मुख निकसत नाहिं।।

अन्योक्त्यात्मकता-

बात सीधे न कह कर, जहाँ पर व्यंग्यमूलक ढंग से कही जाय, वहीं पर शैली की यह विशेषता आ जाती है रहीम के कुछ नीति परक दोहे इसी कोटि में आते हैं-

पावस देखि रहीम मन, कोइल साधे मौल।
अब दादुर वक्ता भये, हमको पूछत कौन।।

बरवै-नायिका-भेद, मदनाष्टक आदि रचनाओं में इसी विशेषता को प्रकट किया है। इसमें कला और भाव दोनों की मणि-कांचन संयोग हो गया है अलंकृत होने पर भी शैली की स्वाभाविकता नष्ट नहीं होने पाई है। जैसे-

उलहे नये अकुरवा, बिन बलबीर।
मानहु मदन महिप के, बिन पर तीर।।

रहीम की शैली अपनी विशेषताओं के कारण यदि एक ओर लोक मानस में प्रविष्ट होती गई है तो दूसरी ओर व्यंजना प्रधान आंलकारिकत्व वक्र कथन आदि काव्यगत विशिष्टताओं के कारण विद्वान सहृदयों के भी अंतरतम में स्वछन्द विलास करती है।

रहीम की अलंकार-योजना

कवि प्रवर रहीम की अलंकार योजना सरल, स्वाभाविक, रसानुकूल और भावना सबलित है। उनमें इतनी गहन आत्मानुभूति है कि भाव के साथ अलंकार स्वयं ही आ गए हैं। उन्होंने गूढ़ भावों को अलंकारों की सहायता से सरल बना दिया है। अपने काव्य के कुछ स्थलों को श्रुति-माधुर्य प्रदान करने के लिए रहीम ने शब्दालंकारों का सफल प्रयोग किया है। शब्दालंकार के अन्तर्गत अनुप्रास, यमक, पुनरूक्ति वीप्सा, श्लेष मुख्य हैं। शब्दालंकार अर्थ की रमणीयता के स्थान पर श्रवण की मधुरता को अधिक प्रश्रय देते हैं। अर्थालंकार का प्रयोग रहीम ने अपने काव्य में समुचित ढ़ंग से किया है। अर्थालंकार के अन्तर्गत उपमा, रूपक, सन्देह, उत्प्रेक्षा, दीपक, दृष्टान्त, निदर्शना, परिकरांकुर, अर्थ-श्लेष, अर्थान्तरन्यास, विरोधाभास, विशेषोक्ति, सार, उदाहरण, अन्योक्ति, लोकोक्ति, प्रतिवस्तूपमा, काव्यलिंग आदि अनेक अलंकारों के उदाहरण रहीम के काव्य में दृष्टव्य होते हैं।

रहीम का छन्द-विधान-

विभिन्न रसों के साथ छन्दों की अनुकूलता खोजते-खोजते विद्वानों ने जो सूची तैयार की है उसमें हिन्दी के निम्नलिखित छन्द ऐसे हैं जिन्हें रहीम के युग से जोड़ा जा सकता है-

1. श्रृंगार-मत्तगयन्द, दुर्मिल, मदिरा, घनाक्षरी, सरसी, सार, मानव, वीर, दोहा, चौपाई, रोला, राधिका, हरिगीतिका, पीयूषवर्षी, दिग्पाल, चौपायी, कामिनी, बरवै आदि।
2. वीर और रौद्र रस-भुजंगप्रयात, स्त्रग्धरा, पंचचामर, वीर, अरिल्ल, छप्पय, रोला, हरिगीतिका, अमृत ध्वनि, कुंडलिया, नाराच, घनाक्षरी आदि।
3. करूण-मालिनी, रूपमाला, सखी, प्लवंगम, रोला, चौपाई, उर्मिला, विधाता, सरसी, सवैया (भेदोपभेदों के साथ) आदि।
4. हास्य-कवित्त, सवैया (भेदोपभेदों के साथ), योग आदि।

5. वीभत्स-रोला, घनाक्षरी (भेदोपभेदों के साथ), छप्पय, दोहा, चौपाई, सवैया (भेदोपभेदों के साथ)।
6. भक्ति-चौपाई, दोहा, पद, भजन, नाराच, रोला, झूलना, पद्धति, श्रृंगार आदि।
7. शान्त-दोहा, चौपाई, सोरठा, रोला, चौपदा, सखी, कुंडली, रूपमाला, सबद, घनाक्षरी आदि।
8. वात्सल्य-चौपाई, चौपाई, सखी, श्रृगांर, सार आदि। रहीम ने दोहा, सोरठा, बरवै, कवित्त, सवैया और संस्कृत के मालिनी छन्द को अपने काव्य-माध्यम के रूप में स्वीकार किया।

उदार-हृदय रहीम के साहित्य का यदि विषयानुसार विभाजन किया जाए तो निम्नलिखित प्रकार प्राप्त होंगे-

1. भक्तिमूलक-भक्तिमूलक प्रकार के लिए दोहा, घनाक्षरी, सवैया, संस्कृत वृत्त और पदोंका प्रयोग किया है।
2. श्रृंगार मूलक-श्रृंगार मूलक प्रकार के लिए दोहा, सोरठा, बरवै, मालिनी और मिश्रित छन्द (संस्कृत वृत्त और फारसी बहर का मिश्रित रूप) प्रयुक्त किया गया है।
3. नीति-उपदेश मूलक-नीति-उपदेश मूलक प्रकार के लिए दोहा, और सोरठा छन्द अपनाया गया है।
4. ज्योतिष-ज्योतिष विषयक छन्द भी भाषा की दृष्टि से मिश्रित वृत्त हो गया है वस्तुतः वह संस्कृत वृत्त ही है।

इस प्रकार कवि रहीम द्वारा प्रयुक्त छन्द निम्नलिखित हैं-दोहा, सोरठा, बरवै, पद, घनाक्षरी, सवैया, हिन्दी छन्द मालिनी, भुजंग प्रयात, शार्दूल विक्रीड़ित आदि-संस्कृत छन्द मिश्रित रूप में प्रयुक्त, बहर-फारसी छन्द।

रहीम के काव्य में रस-व्यंजना-

रहीम ने अपने काव्य में भक्ति, शांत, एंव श्रृंगार रस को ही विशेष प्रश्रय दिया। काव्य में केवल भगवत्प्रेम, निर्वेद, एवं रति स्थायी भावों का प्रयोग हुआ है। श्रृगांर रस का विवेचन रहीम ने श्रृंगार रस के दो पक्ष संयोग और विप्रलंभ की सहायता से किया है।

रहीम की बहुज्ञता-

रहीम की सारी रचनाएँ उनके व्युत्पन्न व्यक्तित्व की साक्षी हैं। लोकानुभव एवं शास्त्रज्ञान बढ़ा-चढ़ा था। रहीम ने बड़े ही उपयुक्त ढ़ंग से उनका प्रयोग यथास्थान किया है। रहीम में बुद्धि-पक्ष की अपेक्षा हृदय-पक्ष बहुत ही प्रबल था। जीवन के सभी पक्षों का गम्भीर एवं व्यापक अनुभव होने कारण काव्य क्षेत्र में वे बहुत आगे बढ़ गए। रहीम-काव्य में विषय की व्यापकता की अपेक्षा जीवन की तीव्रानुभूति की मात्रा अधिक है। मुगल साम्राज्य के सर्वोच्च पदाधिकारी होने के कारण राजसी ठाट-बाट, वैभव सामग्री, स्थापत्य चित्रकला, आखेट, संगीत आदि सभी से भली-भाँति परिचित थे। दूसरी ओर लोक-जीवन के घर, खेत-खलिहान तथा नाना व्यवसायों आदि से भी पूर्णरूपेण अवगत थे।

रहीम की दोहावली के अधिकाँश दोहों में जीवन-दर्शन की चर्चा की गई है। रहीम अपने प्रशासन काल में देश के अनेक भागों में रहे। वे भारतीय भाषा और संस्कृति के

अनन्य प्रेमी थे। ब्रज भाषा पर तो उनका अधिकार ही था, अवध में रहकर अवधी, राजस्थान में राजस्थानी, महाराष्ट्र में मराठी तथा दक्षिण की अन्य भाषाओं, उधर बंगला भाषियों से उनका सम्पर्क हुआ। ब्रज के पश्चात् अवधी तथा कौरवी खड़ी बोली में उन्होंने सर्वाधिक काव्याभिव्यक्ति की।

रहीम ने ज्योतिष में एक स्वतंत्र ग्रन्थ की ही रचना कर डाली जिससे उनके गम्भीर ज्योतिष-ज्ञान और पाण्डित्य का सुन्दर परिचय मिलता है।नगर-शोभा में तो कवि ने अपने युग के सभी छोटे बड़े उद्योग-धन्धों से सम्बधित व्यवसायियों की शब्दावली का खूब प्रयोग किया है बरवै-नायिका भेद में अवध के ग्रामों की स्त्रियों के संयोग-वियोग के मर्मस्पर्शी चित्र ग्रामीण वातावरण के भीतर ही खींचे हैं। इस प्रकार लोक-जीवन का रहीम ने गम्भीर अध्ययन किया था, साथ ही अपने को तद्नुकूल ढ़ाल भी लिया, इसमें तिल मात्र भी सन्देह नहीं।निःसन्देह रहीम सामाजिक जीवन के दृष्टा थे, एवं उनका सम्पूर्ण जीवन सामाजिक सरोकारों से भरा हुआ है। उनके दोहे जीवन के प्रमाण हैं, इसलिए वे दोहे कालजयी हैं, और समाज में सतत ग्राह्य हैं।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. मआसिरे रहीमी भाग-2, पृष्ठ-601
2. मआसिरे रहीमी भाग-2, पृष्ठ-602
3. अब्दुर्रहीम खानखाना, पृष्ठ-171
4. अकबरी दरबार, भाग-3, पृष्ठ-383
5. मआसिरे रहीमी भाग-2, पृष्ठ-555, 556
6. मआसिरे रहीमी भाग-2, पृष्ठ-561
7. खानखाना एण्ड संस्त लर्निंग पृष्ठ-59
8. खानखाना एण्ड संस्त लर्निंग पृष्ठ-59
9. रहीम-रत्नावली, पृष्ठ-75
10. खानखानानामा, भाग-2, पृष्ठ-140
11. शिव सिंह सरोज, पृष्ठ-191
12. रहीम रत्नावली, भूमिका, पृष्ठ-79
13. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, पृष्ठ-321
14. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छन्द संख्या-145
15. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छन्द संख्या-149
16. मूलगुसाईं चरित, छन्द संख्या-93, पृष्ठ-33
17. खानखाना एण्ड संस्त लर्निंग पृष्ठ-81
18. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-218, हिन्दी साहित्य, पृष्ठ-234
19. ब्रज भाषा, पृष्ठ-45
20. रहीम रत्नावली, भूमिका, पृष्ठ-19
21. रहीम रत्नावली, भूमिका, पृष्ठ-23
22. खेटकौतुक जातकम, छन्द संख्या-2
23. रहिमन-विलास, भूमिका, पृष्ठ-93

इन पुस्तकों के अतिरिक्त डॉ0 सरयू प्रसाद अग्रवाल से दिनाँक 12 फरवरी 2007 को लिये गए साक्षात्कार के फलस्वरूपप्राप्त निष्कर्षों को भी इस लेख में समावेशित किया गया है।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

विज्ञान व प्रौद्योगिकी के उभरते परिदृश्य मे राष्ट्रभाषा हिन्दी की दशा व दिशा

* अमित शुक्ल

सारांश- विगत वर्षो में पारम्परिक लोक ज्ञान विज्ञान की ओर विकसित देशों का रुझान तीव्र गति से बढ़ा है जिसमें लोकवार्ता साहित्य, लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकविज्ञान, आदि सम्मिलित हैं। विदेशी शोधकर्ता गाँव-गाँव जाकर न केवल इस दिशा में अध्ययन कर रहे हैं बल्कि तत्सम्बन्धी सामग्री का संग्रह करते हुए स्थानीय बोलियों को हिन्दी के माध्यम से सीख रहे हैं। हिन्दी कम्प्यूटरीकृत के सचूना प्रौद्योगिकी में उपयोग से हिन्दी की लोकप्रियता और बढ़ी है। विश्व फलक पर हिन्दी के बढ़ते चरणों के मूल में जहाँ संचार माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है वहीं उद्यम, व्यापार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, विश्व हिन्दी सम्मेलनों के अतिरिक्त हिन्दी में उपलब्ध विश्वकोश, ई-कोश आदि का भी सराहनीय योगदान है। वैश्वीकरण के बदलते संदर्भो के कारण ही आज हिन्दी के मौखिक रूप में अनेक नए शब्दों, अभिव्यक्तियों, मुहावरों, व्याकरणिक रूपों के प्रयोग में अभिवृद्धि हुई है। कुछ उभयलिंगी शब्दों का प्रयोग बढ़ा है, जैसे कि कृषिकर्मी, मीडियाकर्मी, सैन्यकर्मी आदि संकर शब्दों का निर्माण भी हुआ है। भाषा मिश्रण या कोड मिक्सिंग की प्रवृत्ति भाषा व्यवहार में इतनी प्रबल हो गई है कि हिन्दी अंग्रेजी के मिश्रण का अभिनव रूप हिंग्लिश (रीमिक्स इंगलिस्तानी) का प्रयोग वाणिज्यिक हिन्दी, संचारी हिन्दी, समाचार पत्रों में निरन्तर प्रयुक्त हो रहा है।

विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का जो योगदान रहा है उसका प्रभाव स्पष्ट रूप से भारत में दिखाई देने लगा है। आज के भूमंडलीकरण के दौर में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी ने राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रगति में आश्चर्यजनक परिवर्तन तो किये ही हैं साथ ही भारत के परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बनने में भी उसकी महती भूमिका है। 112 करोड़ से भी अधिक की आबादी वाला यह देश अंतरिक्ष, प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, चिकित्सा विज्ञान, भौतिक रसायन, खगोल विज्ञान आदि में वह विश्व के समक्ष महाशक्ति के रूप में पहचाना जाने लगा है। उसने राजनैतिक संचार सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर, सिनेमा, दूरसंचार, उपग्रह वायरलेस, सेलफोन, मोबाइल फैक्स, पेजर, वीडियो कांफ्रेन्स के रूप में आधुनिक भारत की कल्पना को साकार कर दिखाया है। आज चाहे प्रिन्ट मीडिया हो या दूरदर्शन, कम्प्यूटर, इंटरनेट, साहित्यिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, विज्ञापन, फिल्मी प्रतियोगिता, संसदीय, स्वास्थ्य, ग्रामीण महिला प्रौद्योगिकी, बेवसाइट, एस.एम.एस., दूरसंचार यंत्रों, उपग्रह, वायरलेस, सेलफोन, मोबाइल, फैक्स, सभी के पास हिन्दी है।

★ सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

विश्व की प्रगति में सूचना प्रौद्योगिकी ने मनुष्य के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांति ला दी है। विशेषकर उपग्रह विमोचन, उपग्रह संप्रेषण और उपग्रह स्पेक्ट्रम आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है। सूचना प्रौद्योगिकी ने आज विश्व को ग्लोबल विलेज अर्थात् पूरे विश्व को एक गाँव के रूप में परिवर्तित कर दिया है। भौगोलिक दूरियाँ, राष्ट्रीय सीमायें महत्वहीन हो गई हैं। भारत में इंसैट एक-ए, इंसैट 2-ए आदि ऐसे उपग्रह हैं जिन्हें अंतरिक्ष में स्थापित किया जा चुका है और इसके माध्यम से भारत के विभिन्न नगरों तथा समुद्र पार के देशों से टेलीफोन, टैलेक्स, फैक्स, ई-मेल आदि की सुविधायें उपलब्ध हैं। रेडियो, दूरदर्शन, नेटवर्क भी उपग्रह प्रौद्योगिकी पर ही आधारित है। इसे अंतरिक्ष युग संचार तकनीक कहा गया है। इस तकनीक के माध्यम से रेलवे, वायुयान, आरक्षण-व्यवस्था, बैकिंग-कार्य प्रणाली, स्टाक एक्सचेंज, मौसम विज्ञान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध करायी जा रही हैं। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी ने आज जीवन की दशा व दिशा ही बदल दी है। इसका सबसे अधिक लाभ राष्ट्रभाषा हिन्दी को मिला है। वर्तमान समय में हिन्दी की वैश्विकता निरंतर बढ़ती जा रही है। वह केवल भारत की राष्ट्रभाषा नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय भाषा हो गई है। हिन्दी को वैश्विक सन्दर्भ देने में उपग्रह चैनलों, विज्ञापन एजेंसियों, बहुराष्ट्रीय निगमों तथा यांत्रिक सुविधाओं का विशेष अवदान है। आज हिन्दी मीडिया की प्रमुख भाषाओं के केन्द्र में है, वह जनसंचार माध्यमों की सबसे अनुकूल भाषा बनने का गौरव प्राप्त कर चुकी है। भारतीय महाद्वीप ही नहीं बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया, मारीशस, मध्य एशिया, खाड़ी देशों, अफ्रीका, यूरोप, कनाडा तथा अमरीका तक हिन्दी कार्यक्रम उपग्रह चैनलों के जरिये प्रसारित हो रहे हैं, जिसके दर्शकों की संख्या अधिक है। इंटरनेट में पाँच हजार से अधिक बेवसाइट हिन्दी से संबंधित है। समाचार चैनल में हिन्दी समाचार सर्वाधिक लोकप्रिय है। विश्वपटल पर हिन्दी का प्रयोग करना आसान हो गया है क्योंकि कम्प्यूटर में हिन्दी के साटवेयर का निर्माण हो गया है। हिन्दी में लीप अक्षर, ऑफिस एस्क पी. सुलिपि आदि डी.टी.पी. कार्यक्रम बने हैं। वर्तनी की जांच, टंकण, मुद्रण, टेपांकन, फिल्मांकन की सुविधायें हिन्दी भाषा में प्राप्त हो गई हैं। समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं को बेवसाइट पर पढ़ा जा सकता है। टेलेक्स द्वारा हिन्दी में संदेश भेजना संभव है। प्रकाशनार्थ सामग्रियाँ ई-मेल द्वारा भेजी जा सकती हैं। बेव दुनिया, नेट जाल जैसे बेवसाइट बने हैं। वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी के सर्वाधिक सशक्त होने में हिन्दी सिनेमा, दूरदर्शन एवं रेडियो की विशेष भूमिका रही है। उसे और अधिक व्यापक एवं विस्तृत बनाने में कैसेट सीडी कल्चर का योगदान अधिक है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सिनेमा की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। विश्व में फीजी, मारीशस, कैन्या, युगांडा, दक्षिण पूर्व एशिया, इंडोनेशिया, थायलैण्ड, हांगकांग, मलेशिया, रूस, सउदी अरब, मिस्र अल्जेरिया जैसे अनेक देशों में हिन्दी फिल्में देखी व पसंद की जा रही हैं। इस प्रकार विज्ञान, तकनीक, वाणिज्य तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी अत्यंत सशक्त हुई है। देखा जाय तो सूचना प्रौद्योगिकी के निम्न माध्यमों में हिन्दी की समृद्धि में सशक्त योगदान रहा है।

1. बेबाक लेखनी और कलात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम हिन्दी में ब्लाग लेखन-

वर्तमान समय में हिन्दी ब्लॉग्स अपनी बेबाक लेखनी और कलात्मक अभिव्यक्ति के

कारण विश्व में चर्चित है। राष्ट्रीय क्षितिज पर ब्लाग लेखन से राष्ट्रभाषा हिन्दी समृद्ध तो हुई वहीं वह अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर भी हिन्दी के ब्लॉग लोकप्रिय हुये हैं। हिन्दी के लेखक गाँव से निकलकर वैश्विक गाँव में प्रवेश कर चुके हैं। वे मुक्त होकर लिखना चाहते हैं और दुनिया को ये संदेश देना चाहते हैं कि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी में आज भी वह ताकत है जो अमन और शांति के साथ जी सकती है। ब्लॉग लेखन इंटरनेट का सबसे प्रिय विषय होता जा रहा है, ब्लाग चिट्ठा वह डायरी है जिसमें निजी जीवन से जुड़ी बातें भी लिखी जा सकती हैं। यह अब लोकप्रिय हस्तियों के साथ-साथ आम आदमी के हिस्से में भी आ चुका है। छात्र, शिक्षक, नेता, व्यापारी, अधिकारी, अभिनेता आदि वर्ग के लोग ब्लॉग लेखन कर राष्ट्रभाषा हिन्दी को विश्व में लोकप्रिय बना रहे हैं।

2. हिन्दी के विज्ञापनों से नई जीवन्तता–

आधुनिक जनसंचार के विभिन्न माध्यमों आकाशवाणी, दूरदर्शन, फिल्में, समाचार पत्र-पत्रिकायें एवं इंटरनेट के सभी माध्यमों में हिन्दी के विज्ञापनों ने एक नई जीवन्तता प्रदान की है। वह जनसम्पर्क की सर्वोत्तम विधा है, यह अंग्रेजी के एडवरटाइजिंग, लैटिन शब्द 'एडभर' पर आधारित है जिसका अर्थ है मस्तिष्क को अपनी ओर आकर्षित करना। विज्ञापन लेखक की भाषा पर पूर्ण अधिकार होता है। विज्ञापनों से हिन्दी के शब्दों का सामर्थ्य बढ़ा है। साहित्यिक प्रयोगों से विज्ञापन में एक नवीनता और आकर्षण का समावेश हुआ है। टेलीविजन कंपनियों में मनोरंजन प्रधान और सूचना प्रद कार्यक्रम दिखाने की होड़ लगी हुई है। सभी व्यावसायिक कम्पनियाँ अपने उत्पादनों का विज्ञापन, हिन्दी में देने को आतुर हैं। विश्व के सुप्रसिद्ध रेडियो स्टेशन वी.वी.सी. लन्दन, वायस आफ अमेरिका, रेडियो सिलोन, जर्मन रेडियो स्टेशन एवं विश्व के अन्य रेडियो स्टेशनों, एफ.एम. पर हिन्दी में विज्ञापनों का निरंतर प्रसारण किया जा रहा है। हिन्दी में विज्ञापन रचनात्मक व शैलीप्रधान होते हैं। विज्ञापन की भाषा सरल, सुगम, एवं पठनीय होती है। वाक्य छोटे एवं बोलचाल की भाषा में आमतौर पर प्रचलित होते हैं। शब्दों के उच्चारण द्वारा नाटकीयता, उभारी जाती है और थोड़े से शब्दों में श्रोता तक अपना संदेश पहुँचाया जाता है। विज्ञापनों की हिन्दी में उपमाओं, अलंकारों, मुहावरों, कहावतों, तुकबन्दियों का पर्याप्त प्रयोग कर आकर्षक बनाया जाता है। इस प्रकार उच्च सूचना प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम जनसंचार माध्यमों में हिन्दी विज्ञापनों से हिन्दी में और भी अधिक निखार आया है और हिन्दी विज्ञापन विश्व में लोकप्रिय हुए हैं।

3. कम्प्यूटर में हिन्दी अनुवाद एक सशक्त माध्यम–

कम्प्यूटर में हिन्दी अनुवाद की जो समस्या थी उसे हल कर दिया गया है। पूना के सी-डेक उच्च कम्प्यूटरी विकास केन्द्र ने टैग का भी विकास कर लिया है, हिन्दी के साफ्टवेयर भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं जिनमें अक्षर, आलेख, शब्दावली, शब्दरत्न, संगम वेवबेस, नारद, चाणक्य, एप्पल, मल्टीवर्ड, सुलिपि भाषा आदि शब्दों का उल्लेख है। धीरे-धीरे विकास की गति बढ़ती जा रही है। आज डॉस, विंडोज और यूनिक्स परिवेश के अंतर्गत हिन्दी में शब्द संसाधन कार्य भी सहज व संभव हो गया है। इसके साथ वर्तनी व आनलाइन शब्दकोष सहित ई-मेल तथा बेब प्रकाशन की तकनीक भी हिन्दी ज्ञाताओं ने विकसित कर ली है। इस्फाक, लिप्स जैसी तकनीक भी सामने आ गयी है साथ ही फिल्मों के हिन्दी में शीर्षक देने की सुविधा उपलब्ध है। अनुवाद के क्षेत्र में मशीनी

अनुवाद हेतु भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर तथा हैदराबाद विश्वविद्यालय द्वारा संयुक्त रूप से एक तकनीक विकसित की जिसे अनुस्मारक कहा जाता है, साथ ही पूना के वैज्ञानिकों द्वारा सी.डेक का विकास हो चुका है। आई.बी.एम. डाटा कम्पनी ने भी आर.के. कम्प्यूटर्स के सहयोग से हिन्दी डॉस नाम से एक विशिष्ट तकनीक विकसित की है जिसमें कमाण्ड और मैन्यू भी हिन्दी में उपलब्ध है। विदेशी साहित्य हिन्दी में अनुवाद होकर लोगों तक पहुँच रहा है। हिन्दी का असर केवल मनोरंजन की दुनिया तक ही सीमित नहीं है बल्कि विज्ञान, साहित्य और रचनात्मक लेखन आदि में भी उपलब्ध है। पेंग्विन के बाद हापर कालिंस ने हिन्दी साहित्य के प्रकाशन का रुख किया है यह कदम निश्चित रूप से विश्व की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी के रुतबे को बढ़ाता है। 2005 में पेंग्विन पब्लिकेशन ने जन्नत और अन्य कहानियाँ तथा शंकुतला के साथ हिन्दी के क्षेत्र में कदम रखा था। तब से अब तक वह कई पुस्तकों को हिन्दी में प्रकाशित कर चुका है और अनेक विश्व प्रसिद्ध पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद कराया है। इसके अलावा चेखव व टालस्टाय की कहानियाँ व रूसी की आत्मकथा के भी हिन्दी में अनुवाद हुए हैं। वर्तमान समय में अंग्रेजी पुस्तकों के हिन्दी संस्करण अनेक पुस्तक भवनों में आसानी से उपलब्ध हो रहे हैं। इस प्रकार अनेक चर्चित अंग्रेजी पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद की माँग निरन्तर बढ़ रही है।

4. सूचना प्रौद्योगिकी का विलक्षण विस्फोट–

वर्तमान समय में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी का ऐसा विलक्षण विस्फोट हुआ कि जिसे सारे विश्व ने स्वीकारा। ये विलक्षण विस्फोट भारत की प्रगति में भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। आज बड़े-बड़े देश भारतीय तकनीकी व्यक्तियों को अपने यहाँ आमंत्रित करने में जुटे हैं, साथ ही हिन्दी का प्रयोग अब इन सभी क्षेत्रों में होने लगा है। 1983 में भारतीय इन्जीनियरों ने ऐसी तकनीक विकसित की जिसके माध्यम से कम्प्यूटर हिन्दी को देवनागरी लिपि में काम कर सकता था, भारत की अन्य भाषाओं में भी कार्य कर सकता था। इसका नाम हुआ जिस्ट कार्ड, यह कार्ड कम्प्यूटर के सी.पी.यू. के केन्द्रीय संसाधन एकांश में लगाते ही अंग्रेजी जानने वाला कम्प्यूटर हिन्दी सीख जाता था और बड़ी सफलता से हिन्दी में काम करने लगता था। उसी का प्रतिफल है कि आज सभी क्षेत्रों में कम्प्यूटर के माध्यम से हिन्दी का प्रयोग हो रहा है। घर बैठे दुनिया की सारी सुविधाएँ व जानकारियाँ इसमें ली जा रही हैं। विज्ञान व प्रौद्योगिकी के निरन्तर विस्तार से अब उच्च सूचना प्रौद्योगिकी की एकदम नई तकनीक आ रही है, हिन्दी कम्प्यूटर के लिए उपयोगी बनाने में सबसे अधिक सहायता की है, लिपि और वर्णमाला के ध्वन्यात्मक स्वरूप ने, इसी कारण जिस्ट तकनीक को अपनाया जाने लगा। इसके सहयोग के लिए एक मानक कोडिंग प्रणाली का भी महत्व है जिसको इस्की कहा जाता है। इसके माध्यम से उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाएँ भी आसानी से कम्प्यूटर पर काम कर रही हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि इसके लिए इनस्क्रिट नाम से एक कुंजीपटल बनाया गया है जो हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में भी काम कर सकता है। साथ ही लिप्यांतर की भी उसमें सामर्थ्य है, इस प्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी ने एक विलक्षण विस्फोट किया है।

5. ग्लोबल दुनिया और राष्ट्रभाषा हिन्दी की सम्भावनाएँ–

जैसे-जैसे दुनिया ग्लोबल हो रही है वैसे-वैसे हिन्दी की माँग भी बढ़ती जा रही है, विश्व के अनेक देशों में हिन्दी का अध्ययन व अध्यापन का कार्य किया जा रहा है। अमेरिका के स्कूलों में भी अब हिन्दी पढ़ने की माँग बढ़ी है पहले भारत सरकार की भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्धी परिषद् अनेक देशों में तीन साल के लिए प्राध्यापक चुनकर भेजती थी, वह अब भी भेज रही है पर अब अनेक देशों में स्वयं नियुक्तियाँ करनी प्रारम्भ कर दी है। जापान, कोरिया, सिंगापुर में अब सीधे हिन्दी के प्राध्यापक भर्ती हो रहे हैं। खाड़ी देशों के अलावा यूरोप, अमेरिका, में भी हिन्दी शिक्षकों की माँग है। इस प्रकार ग्लोबल हो रही दुनियाँ में हिन्दी की माँग निरन्तर बढ़ रही है।

6. शोध का विषय और भाषा मिश्रण के दौर से गुजरती राष्ट्रभाषा हिन्दी और सृजनात्मक साहित्य–

विगत वर्षों में पारम्परिक लोक ज्ञान विज्ञान की ओर विकसित देशों का रुझान तीव्र गति से बढ़ा है जिसमें लोकवार्ता साहित्य, लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकविज्ञान, आदि सम्मिलित हैं। विदेशी शोधकर्ता गाँव-गाँव जाकर न केवल इस दिशा में अध्ययन कर रहे हैं बल्कि तत्सम्बन्धी सामग्री का संग्रह करते हुए स्थानीय बोलियों को हिन्दी के माध्यम से सीख रहे हैं। हिन्दी कम्प्यूटरीकृत के सचूना प्रौद्योगिकी में उपयोग से हिन्दी की लोकप्रियता और बढ़ी है। विश्व फलक पर हिन्दी के बढ़ते चरणों के मूल में जहाँ संचार माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है वहीं उद्यम, व्यापार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, विश्व हिन्दी सम्मेलनों के अतिरिक्त हिन्दी में उपलब्ध विश्वकोश, ई-कोश आदि का भी सराहनीय योगदान है। वैश्वीकरण के बदलते संदर्भों के कारण ही आज हिन्दी के मौखिक रूप में अनेक नए शब्दों, अभिव्यक्तियों, मुहावरों, व्याकरणिक रूपों के प्रयोग में अभिवृद्धि हुई है। कुछ उभयलिंगी शब्दों का प्रयोग बढ़ा है, जैसे कि कृषिकर्मी, मीडियाकर्मी, सैन्यकर्मी आदि संकर शब्दों का निर्माण भी हुआ है। भाषा मिश्रण या कोड मिक्सिंग की प्रवृत्ति भाषा व्यवहार में इतनी प्रबल हो गई है कि हिन्दी अंग्रेजी के मिश्रण का अभिनव रूप हिंग्लिश (रीमिक्स इंगलिस्तानी) का प्रयोग वाणिज्यिक हिन्दी, संचारी हिन्दी, समाचार पत्रों में निरन्तर प्रयुक्त हो रहा है।

निष्कर्ष यह है कि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी व भूमंडलीकरण और बाजार के युग में राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप काफी बदल चुका है। सूचना प्रौद्योगिकी व तकनीकी ज्ञान के विस्फोट के बाद हिन्दी वैश्विक स्तर पर अत्यंत समृद्ध हुई है। इस समय भारत विश्व का सबसे बड़ा बाजार है इस बाजार में जिसे आना है उसे हिन्दी तो जाननी ही होगी। हिन्दी वैश्वीकरण और बाजारवाद की संवाहक भाषा बन पड़ी है। हिन्दी के और भी अधिक वैश्विक विस्तार के लिए कम्प्यूटर इंटरनेट, ई-मेल, ई-बुक तथा बेवसाइट की दुनिया से जुड़ना होगा। हिन्दी का प्रश्न केवल अभिव्यक्ति भर से नहीं जुड़ा है बल्कि अब वह राष्ट्रीय व सांस्कृतिक अस्मिता का प्रश्न बन चुका है इसके लिए उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा में आधारभूत ग्रन्थ तैयार करने होंगे। हिन्दी को विश्व भाषा के रूप में और भी अधिक प्रतिष्ठित करने के लिए उसके व्याकरण, लिपि और वर्तनी के मानकीकरण का अनुपालन करने व कराने का वातावरण तैयार करना होगा। इसके लिए हिन्दी में बेवसाइट तथा कम्प्यूटर का जाल बिछाना होगा, जिससे हिन्दी अपने सम्पूर्ण विश्वकोश, शब्द संपदा, भाषिक अनुप्रयोग, लिखित वांगमय के साथ कम्प्यूटर लाइब्रेरी, इंटरनेट,

ई-मेल तथा ई-कामर्स की दुनिया में अन्य भाषाओं की प्रतिस्पर्धा में अग्रणी हो सके। वर्तमान समय के रचनात्मक लेखन में हिन्दी की माँग को देखते हुए हिन्दी भाषा के व्याकरण की पर्याप्त जानकारी होना भी आवश्यक है। रचनात्मक लेखन पर बल देने के साथ ही भाषा की समृद्धि के लिए विभिन्न विषयों विज्ञान, बायोटेक्नालॉजी, अंतरिक्ष विज्ञान, अभियांत्रिकी कृषि, बैंकिग, व्यापार, आर्थिक जगत और प्रौद्योगिकी आदि अनेक क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए मौलिक लेखन, स्तरीय पाठ्य पुस्तकों एवं पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहन देने की अत्यंत आवश्यकता है। कम्प्यूटर में हिन्दी प्रयोग के नवीन आयामों, कम्प्यूटर साधित भाषा शिक्षण को बढ़ावा देने के साथ भाषा प्रौद्योगिकी में प्रशिक्षित मानव संसाधन की कमी को दूर करने की दिशा में सार्थक प्रयास होना चाहिए। विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की सशक्त भूमिका को देखते हुए अनेक हिन्दी सम्मेलनों व साहित्यिक संस्थाओं में आयोजित संगोष्ठियों में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए हिन्दी के साहित्यिक पक्ष के साथ ही विज्ञान प्रौद्योगिकी आदि अन्य आधुनिक अनुशासनों से हिन्दी के गहन सम्बन्ध को उद्घाटित करने की परम आवश्यकता है। वास्तविकता यह है कि विज्ञान तथा उच्च प्रौद्योगिकी ने आज जहाँ एक ओर आर्थिक प्रगति व विश्व को आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में अपनी महती भूमिका अदा की है वहीं राष्ट्रभाषा हिन्दी को वैश्विक परिदृश्य में शक्तिशाली बनाने में भी उसका सबसे बड़ा योगदान है।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. वीणा श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर की मुख्य मासिक पत्रिका, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर, जून 2010, पृ. 23
2. साहित्य क्रांति, अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी पत्रिका, सितम्बर 2011, भार्गव कालोनी, गुना, पृ. 14
3. छत्तीसगढ़ विवेक त्रैमासिक शोध पत्रिका अंक 32, जनवरी-मार्च, 2011, भिलाई नगर छत्तीसगढ़, पृ. 63
4. संस्कार पत्रिका, सितम्बर 2012, कुर्ला काम्पलेक्स, बान्द्रा, मुम्बई, पृ. 21, 25,
5. राष्ट्रभाषा संदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग पाक्षिक मुखपत्र, 15 फरवरी 2012, एवं 15 मई 2012, पृ. 4,
6. साहित्य अमृत मासिक पत्रिका सितम्बर 2012, आसिफ अली रोड नई दिल्ली, पृ. 70
7. राष्ट्रवाणी, नवम्बर-दिसम्बर 2010, दवैमासिक पत्रिका, राष्ट्रभाषा सभा पुणे, पृ. 7,
8. इंडिया टुडे, 7 दिसम्बर 2011, लिविंग मीडिया इंडिया कनाट प्लेस नई दिल्ली, पृ. 68
9. कथादेश, अप्रैल, 2011, सहयात्रा प्रकाशन, दिलशाद गार्डन दिल्ली, पृ. 92
10. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का लोकतात्विक अनुशीलन

* उमाकान्त मिश्र
** अनुराधा श्रीवास्तव

सारांश– साहित्य–सृजन में लोकतात्विक पक्षों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लोक–विमुख साहित्य का कोई अर्थ नहीं होता। साहित्य में फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने लोकरंजकता और लोकसम्पृक्ति वाले कालजयी उपन्यासों का प्रणयन कर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। आंचलिक उपन्यासकार के रूप में 'रेणु' के अवदान का समग्रता से मूल्यांकन करते हुए यह प्रतीत होता है कि 'रेणु' की औपन्यायिक कथात्मकता, लोक संर:ति मूलक ऊर्जा–संकल्प, मूल्यों के रचनात्मक बिम्बायन व मानक मूल्यों की भव्य प्रतिष्ठा का महाकाव्यात्मक प्रयास है।" रेणु की प्रतिबद्धता लोक संस्कृति मूलक समाज की है, इसलिए उनके रचनात्मक संसार में शोषित वर्ग की भावनाएँ मुखरित हुई हैं। लोक–संर:ति मूलक समाज की परिकल्पना के कारण रेणु की चिन्तन पर मार्क्सवादी चिन्तन धारा का प्रभाव है। अतः उन्होंने सांर:तिक तत्वों व मूल्यों को संवेदनात्मक धरातल पर बिम्बित किया है। लोक–तत्व का सीधा व सार्थक जुड़ाव आम आदमी के जीवन मूल्यों में है, चूंकि रेणु की औपन्यासिकता आम आदमी की जीवन कथा–व्यथा को लेकर चलती है, अतः उपन्यासों में सांस्कृतिक लोक तत्वों के प्रयोग से कथा में प्रवाह व निखार आया है लोक–तत्व व धार्मिक मूल्यों का अन्तः सम्बन्ध है। रेणु ने धार्मिक लोक–तत्वों का प्रयोग अपने उपन्यसो में स्थल–स्थल पर किया है परन्तु ये परिभाषात्मक दृष्टि से अत्यन्त कम है। फिर भी रेणु के कथाफलक में लोकतत्व का प्रयोग कलात्मक स्त्राव के साथ है।

साहित्य-सृजन में लोकतात्विक पक्षों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लोक-विमुख साहित्य का कोई अर्थ नहीं होता। साहित्य में फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने लोकरंजकता और लोकसम्पृक्ति वाले कालजयी उपन्यासों का प्रणयन कर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। आंचलिक उपन्यासकार के रूप में 'रेणु' के अवदान का समग्रता से मूल्यांकन करते हुए यह प्रतीत होता है कि 'रेणु' की औपन्यायिक कथात्मकता, लोक संस्कृति मूलक ऊर्जा-संकल्प, मूल्यों के रचनात्मक बिम्बायन व मानक मूल्यों की भव्य प्रतिष्ठा का महाकाव्यात्मक प्रयास है।"

लोक की परिभाषा के परिप्रेक्ष्य में विद्वानों में मत भिन्नता परिलक्षित होती है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक एवं ग्राम की बारीक रेखाओं कों रेखांकित करते हुए 'लोक' को इस प्रकार परिभाषित किया है।

शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं हैं बल्कि नगरी और गांवों में फैली हुई सम्पूर्ण

★ शोध निर्देशक, शासकीय के.एम.कॉलेज (डौंडी) जिला–बालोद (छ.ग.)
★★ शोध छात्रा, शासकीय दा.क.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बलौदाबाजार।

जनता है। ये लोग नगर में ही परिष्कृत रूचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए, जो भी वस्तुएं आवश्यक होती है उसको उत्पन्न करते है।"[1]

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय की लोक विषयक अभिव्यक्ति निम्नांकित पंक्तियों में द्रष्टव्य है - आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्रा.तिक परिवेश में निवास करने वाली तथा कथित अशिक्षित और असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं। जिनका आचार विचार एवं जीवन परम्परा युक्त विषयों से नियंत्रित होता है।[2]

साहित्य में उपन्यास का उद्भव व विकास अपेक्षाकृत अभिनव है। इसमें रचनाकार कथात्मक जगत की स्थापना नव्य तरीके से करता है, मार्क्सवादी आलोचक महाकाव्य की अन्वीक्षा उपन्यास से करते हुए उपन्यास को पूंजीवादी समाज के महाकाव्य की संज्ञा देते हैं, जिसका कथाफलक मानव-जीवन की समग्रता को समेटे हुए है। अतः इस विधा में रचनाकार की दृष्टि विस्तृत आयात्मक व यथार्थपरक हैं। मानव व उसके परिवेशगत परिवर्तन के साथ-साथ कथाफलक व औपन्यासिक स्वरूप में भी परिवर्तन आया है क्योंकि उपन्यास वर्ग शिल्प लचीला है, जो जीवनगत समस्या के अनुरूप ही अपना स्वरूप निर्धारण करता है। रचनाकार वस्तुजगत के अनुभवों एवं अपनी अनुभूतियों को औपन्यासिक-कथात्मकता में सरस रोचक बनाकर सभी धरातल प्रदान करता है। उपन्यास में मानव चेतना के विविध स्तरों व जीवनगत विविध पक्षों की अभिव्यक्ति होती है। आंचलिक उपन्यासों के क्षेत्र में रेणु एक क्रांतिकारी हस्ताक्षर है। ये सफल कथाकार व उपन्यासकार दोनों है। रेणु के उपन्याासों में एक सामाजिक संघर्ष-धर्मी चेतना है। किसान, मजदूर नारी व शोषित लोगों का एक वर्ग है, जो संघर्ष करता है- सामंती मूल्यों व लोगों के खिलाफ ये सामन्ती प्रतिरोध आज भी 'गवई जीवन' को कई पक्षों में प्रभावित करते हैं, वस्तुतः इस संघर्षयात्रा के बीच श्रम और पूंजी का अन्तर्विरोध रेखांकित होता है। अन्तर्विरोध कागहरा होना वर्ग संचेतनता का विकास करता है और वर्ग संचेतनता ही अन्याय, दमन, उत्पीड़न के खिलाफ अविराम संघर्ष यात्रा का आदि बिन्दु बन जाता है। रेणु के कथा-फलक में इसका प्रयोग कलात्मक स्त्राव के साथ है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में राजनीति के ठेकेदारों ने जनतन्त्र के नाम पर पूँजीवाद की स्थापना की, जिसने समाज की गरीबी का समाहार नहीं किया, अपितु उनमें टूट-फूट, निराशा और विघटन ही पैदा किया। इस विकलांग पूँजीवाद का इकाई चरित्र सामन्तवादी है। रेणु की कृतियाँ इन मूल्यों का डटकर विरोध करती हैं। रेणी ही नहीं अपितु स्वातंत्र्योत्तर ग्राम्य कथा का मुख्य कथ्य व अभिव्यक्ति पक्ष बना जिनमें फणीश्वरनाथ रेणु का मैला आँचल, परती परिकथा नागार्जुन का 'वरूण' के बेटे, 'बलचनामा', बाबा बटेसरनाथ उल्लेखनीय कृतियाँ है।

रेणु से संदर्भित डॉ. नगीना जैन का यह विचार अत्यन्त भ्रामक प्रतीत होता है कि 'हिन्दी में आंचलिक उपन्यास का आरम्भ 1930 के आसपास हो गया होता यदि हिन्दी साहित्य मात्र गांधी जी की उदारवादी नीति से प्रभावित नहीं होता।[3]

रेणु के पूर्ववर्त्ती उपन्यासों में आंचलिक चित्रण उपन्यास के एक तत्व के रूप में हुआ है और इस तत्व का उपयोग कथा में विश्वसनीयता, यथार्थता और मानवीय रंग लाने

के लिए किया गया है। प्रेमचन्द से लेकर नागार्जुन तक क्रमशः आंचलिक चित्रण अन्य तत्वों की अपेक्षा अधिक विवरणधर्मी यथार्थ और प्रमुख होता गया है लेकिन आंचलिक उपन्यास जैसी स्ततंत्रता औपन्यासिक विधा का जन्म स्वीकरण रेणु के 'मैला आँचल' (1954) के प्रकाशन के बाद हुआ है। निःसन्देह रूप में आँचलिक उपन्यास जैसी स्वतंत्र संज्ञा का सबसे पहला प्रयोग रेणु ने 'मैला आँचल' की भूमिका में किया है।"[4] रेणु ने अपने उपन्यासों में व्यवहारिक जीवन के सहज व आमरूपों का भी चित्रण किया है।

रेणु ने अपने उपन्यासों में व्यवहारिक जीवन के सहज व आमरूपों का भी चित्रण किया है- जैसे बिजली कहती है काकी मां आमरन शुरू होय हे। छवि कना इस मरन का कोड अर्थ समझती है क्योंकि उनका भी मरन (मासिक) शुरू हो गया है।

लोक भाषा और आंचलिक शब्दों का सृजन स्त्रोत कभी सूखता नहीं, अतः रेणु की भाषा में निम्न वर्गीय व लोक-जीवन के लिए गए शब्द सर्वदा मुखर रहे है। प्रतीक, बिम्ब व अभिप्रायों के चयन में उनकी दृष्टि आंचलिकता की ओर उन्मेषित है।

'मैला आंचल' आघन्त आंचलिक औपन्यासिक कृति है। ध्यान देने योग्य बात कहे। 'औराही हिंगना' में रेणु के घर के प्रवेश द्वार पर 'ग्राम्या' लिखा हुआ है। 'मैला आंचल' नाम की प्रेरणा भी सुमित्रा नन्दन पन्त की 'ग्राम्य' की 'भारत माता' कविता से निःसृत है-

"खेतों में फैला है श्यामल
धूलभरा मैला-सा आंचल।"

'मैला आंचल' लोक जीवनगत सम्यक पहलुओं को रूपायित करता है जैसे अच्छाई, बुराई, शाशा, निराशा, गुण-अवगुण अचार-विचार, भाषा, रहन-सहन, सूझ-बूझ, लोक-उत्सव, त्यौहार, राग विराग प्रभृति। ये वठर्य वस्तु स्थानिक रंगों से अनुरंजित हैं। औपन्यासिक कथा फलक व अँचल परिमित है परन्तु समूची रचना धर्मिता स्थानिकता व आँचलिकता व आँचलिकता के बावजूद सार्वदेशिकता की ओर गतिशील है। डॉ. आन्नद मोहन का उपन्यास द्रष्टव्य है -"रेण ने इस छोटे से चित्रफलक पर सूक्ष्माति सूक्ष्म रंगमंची तथा विवरण व अनेक रूपतामक रेखाओं की विविधताओं का ऐसा अनोखा आलेखन किया है कि सम्पूर्ण ग्राम जीवन के भीतर युग और छोटे से क्षेत्र के भीतर जीवन-वैविध्य की वे बड़े मनोरम झांकी प्रस्तुत कर सके है।"[5]

रेणु के आंचलिक चित्रण के परिप्रेक्ष्य में प्रकृति, औद्योगीकरण, शहरीकराण, कृषि, संस्कृति की विघटन, नारी जागरण पाश्चात्य प्रभाव आदि वर्तमान युगीन परिवेश की समस्याएँ व्यंजित हुई हैं। "रेणु के प्रकृति चित्रण में गत्यात्मक अक्रमबद्ध चटकीला व सघन दृष्टि है, जिसमें पाठक मन को बांधे रहने की स्थायी क्षमता हैं। रेणु की प्रकृति के प्रति गहरी रागात्मकता है। कितने चौराहों में ये साधारणीकृत प्रकृति का चित्रण द्रष्टव्य किस रचना का नाम 'अगहन का महीना है। सुबह का समय खलिहान में धान की दवनी हो रही है। जाड़े की रात बड़ी होती है, इसलिए सभी प्रणी सूरज उगने के दो घड़ी पहले ही जग जाते है।[6]

प्रकृति में परिवर्तन शाश्वत विधान है- वर्षा, ग्रीष्म व शीत का गमन आगमन होता रहता है। पुरखैया और पछिया हवा में सूखे पत्ति झड़ते है। रेणु पछिया हवा में पत्तों का गिरना देखते हैं, जो सहज स्वाभाविक लोकानुभव है जबकि कालिदास में लू लगने के कारण लता से फूल ही झड़ते हैं। ततोडीमषगडनिल विप्रविद्धा प्रमुचयमाना भरण

प्रसूना।[7]

रेणु की आंखे चित्रण में कितनी यथार्थ व सजग हैं। इस संदर्भ में आर.ई. सविन्सन के कथन को रेखांकित किया जा सकता है- उसकी आंखे पारदर्शी प्रिज्म के समान जीवन के सभी गहरे चमकीले रंगों को पहचान लेती थीं और उसका मस्तिष्क कलाकार की रंग मिलाने वाली पटरी के समान उन्हें ग्रहण कर रत्नोपम सौन्दर्य के चित्रणों में अनुदित कर देता था।[8]

रेणु के प्रकृति चित्रण में दृश्यात्मक बिम्बो के साथ ध्वन्यात्मक बिम्बों का भी सार्थक व सुन्दर प्रयोग है। पक्षियों की विशिष्ट ध्वनियों का वैसा ही शब्दिक रूपान्तर सुन्दर बन पड़ा है।

"मैला आँचल में डॉ. प्रशान्त और कामली का प्रेम सम्बन्धों आदर्श बन पड़ा है।

'मैला आँचल में डॉ. प्रशान्त और कमली का प्रेम सम्बन्ध आदर्श व भावना पर आधारित है। लक्ष्मी कोठारिन का सेवादास से सम्बन्ध आदर्श नहीं वरन् परिस्थिति जन्य लाचारी वश है, जो बाद में भावनात्मक रूप से गांधी बालदेव से जुड़ता है।

समूचा 'मैला आँचल' अवैध प्रेम सम्बन्धों का लोक दस्तावेज है। सेक्स व प्रेमाकर्षण मानवीय दुर्बलताएँ है, जिसके चलते कुरूप बावनदास चन्दनपट्टी आश्रम में स्वयं सेविका तारावती को निद्रावस्था में लेटी हुई देखकर वासना में असंयमित हो उठता है।

परती परिकथा में प्रेमकेन्द्रीय तत्व है। ताजकणि मृत माँ की वर्जना बावजूद ताजमनी जित्तन की बाहों में पहुँच गई है, जिनमें सेक्स व रोमांस के बावजूद विश्वास भाव का अद्भूत समर्पण हैं।

रेणु के उपन्यासों में यौनवर्जना, यौनसम्बन्ध और समलैंगिक यौनाचार का चित्रण है। इनके कतिपय स्त्री पात्र अपने एक रस कुंठित व दमित जीवन को यौनचेष्टाओं से तृप्त करते हैं। विसंगति उनके जीवन का पर्याय है दीर्घतया की रूक्मिणी और कुन्ती समलैंगिक यौनाचार भावना से आक्रान्त हैं, वे हमेशा खराब-खराब बातें करती हैं। वे विभावती व अन्य स्त्रियों के पास जाकर सो जाती है। दीर्घतपा में नारी के यौन शोषण के लिए पुरुष जितना जिम्मेदार है, उतना नारी स्वयं भी। जुलूस में गोड़ियर गांव का मुखिया कामुकता की पराकाष्ठा पर है। गुणमन्ती रेशमी सिंगारों, गौरी आदि पुरानी भैरवियों के बाद बंगालिन पवित्रा के एड़ी तक केशो पर फिदा है। कितने चौराहों में शरबतिया और मनमोहन का प्रेमाकर्षण शरबतिया के अतृप्त मातृप्रेम के कारण है, फणीश्वरनाथ रेणु की सौन्दर्य दिदृक्षा वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ दोनों है। वस्तुनिष्ठाता लोकसुलभ और आत्मनिष्ठता मनोवैशिष्ट्य सापेक्ष उपादान हैं। दोनों का धर्म, अनकर्षण है और आकर्षण ही सौन्दर्य का प्राणतत्व है। रेणु के कतिपय पात्रों की मूलवर्तिनी वृत्ति 'शिव की नियामक मर्यादाओ को अतिक्रमित कर देती है।

रेणु ने अपने उपन्यासों में अन्धविश्वासों का यथार्थ परक वर्णन किया है जोतखी जी धार्मिक अन्धविश्वास के प्रतीक हैं।

1. बूड़े जोतसी जी भविष्यवाणी करते है- "कोई माने या नहीं माने, हम कहते है, कि एक दिन इस गांव में गिद्ध-कौआ उडेगा। लक्षण अच्छे नहीं हैं। गांव का ग्रह बिगड़ा हुआ है। किसी दिन इस गांव में खून होगा, खून पुलिस-दरोगा गांव की गली-गली में घूमेगा

और यह इस पिताल? अभी तो नहीं मालूम होगा। जब कुएं में दवा डालकर गांव में हैजा फैलायेगा तो समझना। शिव हो।[8](3)

2. महंत द्वारा भोज दिये जाने पर सबसे पहले कालीथान पर पूड़ी चढ़ाई जाती है। वे जंगल की तरफ भी दो पूड़ियां फेंक देते है, ताकि जगल के देवी-देवता भूत-पिशाच भी भोजन पा सकें। कमली को अन्धविश्वास है कि उस पर जिन सवार हो गया है। कमली का दूसरा अन्धविश्वास हे कि "डाइन पर मन्तर अढ़ाई अक्षरों का होता है और डाइन का भेजा हुआ सांप अढ़ाई हाथ का"[9](4)

मैला आँचल में उद्‌घृत एक और घटना द्रष्टव्य है- "बालदेव ने बहुत बार भूत को अपनी आंखों से देखा है। डाकिन का पांव उल्टा होता है। वह पेड़ की डाल से लटक कर झूलती है।"[10](5)

रेणु ने मैला आंचल में राजनीति की तुलना डाइन से की है।" नहीं राजनीति में वह नहीं जाएगा। वह राजनीति के काबिल नहीं।[11](7)

इस प्रकार पूरे उपन्यास में अन्धविश्वास और जादू-टोना, टोटका सम्बन्धी मान्यताएँ फैली दिखाई पड़ती है।

उपर्युक्त उदाहरण सामाजिक लोकतत्व की उत्कृश्ट नमूना स्थापित करता है।

रेणु ने मानवीय चरित्रों के अपमल्यित रूपों अर्थात् चारित्रिक प्रतीकी करणों को दिखाने के लिए किया है, अथवा भाषिक व्यंग्य की प्रयुक्ति के रूप में। "पलटू बाबू रोड में रूपन होता छोगमल, मुरली मनोहर गोधन, पलटू बाबू सभी के लिए 'कुत्ता-कुत्ता उच्चाराण करता है।"[12]

रेणु के उपन्यास 'कलंक मुक्ति' में बूढ़ी औरते अज्ञानता और अशिक्षावश परिवार नियोजन संस्था को उपशकुन मानती है। "खुद कोख खाली है डायन कहती है, बच्चा कम पैदा करों।" कलंक मुक्ति में रमेश का बाप एक ओझा को चक्कर पुजवाने के लिए लाया है।"[13]

"जुलूस" वर्ग तालेवर गोढी तन्त्रसाधना करता है। उसमें डायनों का गुण है। "वह मशान की हड्‌डी जिसके भी घर में गाड़ दे, उसके घर में ऐसा बनरभूता लाग जाए कि एक ही साल में सब स्वाहा।"[14]

खुट्‌टी खरैइटा में एक साथ चार डाइनों को नंगा नचाया था। तालेवर गोढी।"[15] कितने चौराहे में मनमोहन का काका साधू सन्यासियों से दूर रहने की बात समझाते है। डॉ. रेणु शाह के अनुसार "तत्कालीन समाज में व्याप्त रूढ़ियों, पाखण्डों, अन्धविश्वासों, जादू टोना, टोटका सम्बन्धी कुप्रथाओं को रेणु जी ने जीभर कर उभारा।[16]

रेणु जी ने लोक-जीवन में अबद्ध विश्वासों व धारणाओं को व्यंजित कर अपने कथा साहित्य को जन साहित्य से परिचित कराने का सफलता प्रयास किया है। उदाहरण अभिलक्षित है- कितने चौराहे में मोहरिल भाभी कहती है कि "रोज सुबह छीकने से मुवक्किल कैसे आएगा?"[17](15)

सुबह का छींकना व यात्रा पर छींकना अशुभ माना जाता है। लोक अवधारणा है कि "जिस लड़की का कपाल चौड़ा हो वह जवानी में ही बेवा हो जाती है- गांव की मैना, दयावंती, महावती सभी बहिनों के कपाल चौड़े है और सभी बेवा।"[18] मनोरथ सिद्धी के लिए मान मनौती कियाा जाता है- मैला आँचल में यह दृष्ट्व्य है "कितना मंनत-मनौती के

बाद कमला मैया ने निहारा भी तो बेटी ही हुई है।[19]

एक लोक मान्यता को रेणु ने मैला आँचल में सम्मिलित किया जो इस प्रकार दृष्ट्व्य है, "कहते हैं सिन्दूर गिरता है, वह अपने पति की बड़ी दुलारी होती है। प्रेमातिरेक में कमला के ओठ फड़कने लगते है, थरथरा रहे है।"[20]

इस तरह की लोकतात्विक लोकमान्यताओं को अपनी कथा साहित्य में स्थान देकर रेणु ने लोकतत्व की अनुभूति को जीवंत कर दिया और लोकतात्विक पक्ष को सबलता प्रदान की जिससे अंचल से जुड़ी सारी घटना और भावों का यथार्थ अंकन हो सके।

निष्कर्ष– रेणु की रचनाधर्मी-चेतना सांस्कृतिक- मूल्यों की प्रतिस्थापना के लिये प्रतिबद्ध है चूंकि रेणु युगीन सामाजिक घात-प्रतिघात व संघर्षो के भोक्ता व अनुभवकर्ता थे। अतः उन्होंने सांस्कृतिक तत्वों व मूल्यों को संवेदनात्मक धरातल पर बिम्बित किया है। लोक-तत्व का सीधा व सार्थक जुड़ाव आम आदमी के जीवन मूल्यों में है, चूंकि रेणु की औपन्यासिकता आम आदमी की जीवन कथा-व्यथा को लेकर चलती है, अतः उपन्यासों में सांस्कृतिक लोक तत्वों के प्रयोग से कथा में प्रवाह व निखार आया है लोक-तत्व व धार्मिक मूल्यों का अन्तः सम्बन्ध है। रेणु ने धार्मिक लोक-तत्वों का प्रयोग अपने उपन्यसो में स्थल-स्थल पर किया है परन्तु ये परिभाषात्मक दृष्टि से अत्यन्त कम है।

रेणु की प्रतिबद्धता लोक संस्कृति मूलक समाज की है, इसलिए उनके रचनात्मक संसार में शोषित वर्ग की भावनाएँ मुखरित हुई हैं। लोक-संस्कृति मूलक समाज की परिकल्पना के कारण रेणु की चिन्तन पर मार्क्सवादी चिन्तन धारा का प्रभाव है। 'मैला आँचल' का बावनदास स्वातत्रयोत्तर भारत की विकृत राजनीति का मूल्य सापेक्ष स्वस्थ चिन्तन धारा की परिकल्पना है। रेणु के उपन्यासों में युगचेतना की व्यंजना यथार्थ के निष्कर्ष पर हुई है। उन्होंने पवित्रा के माध्यम से लोक-संस्कृति मूलक समाज के गठन की बात की है। कथाकार ने युगीन-चेतना की बहुआयामी संश्लिष्ट चित्रों को रागात्मकता प्रदान की है। साथ ही कुछ नव्य सांस्कृतिक लोक-तत्वों जैसे यर्वदा, चर्खा आदि का प्रयोग किया है, जिसकी चेतना भेदभाव से मुक्त सव्य में उपवस्थापन की है।

संदर्भ ग्रंथ

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'जनपद त्रैमासिक वर्ष, 1 अंक 1, पृष्ठ 65
2. डॉ. .ृणदेव उपाध्याय, 'लोक साहित्य की भूमिका पृष्ठ 28
3. डॉ. नगीना जैन, 'आंचलिक और हिन्दी उपन्यास', पृष्ठ 123
4. पूर्णदेव, 'रेणु का आंचलिक कथा साहित्य', पृष्ठ 21
5. डॉ. आनन्द मोहन उपाध्याय, 'फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन', पृष्ठ 105
6. डॉ. आनन्द मोहन उपाध्याय, 'फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन', पृष्ठ 106.
7. डॉ. आनन्द मोहन उपाध्याय, 'फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन', पृष्ठ 107
8. कालिदास, 'रघुवंश 14/54
9. डॉ. आनन्द मोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोक तात्विक अध्ययन पृष्ठ 109
10. मैला आंचल, रेणु पृष्ठ 28
11. मैला आंचल, रेणु पृष्ठ 100, पृष्ठ 289
12. मैला आंचल, रेणु पृष्ठ 100
13. रेणु, पल्टू बाबू रोड पृष्ठ 122
14. रेणु, कलंक मुक्ति पृष्ठ 87
15. रेणु, जुलूस पृष्ठ 39
16. रेणु, जुलूस पृष्ठ 39

17. डॉ. रेणु शाह, फणीश्वरनाथ रेणु का कथाशिल्पः पृष्ठ 82
18. रेणुः, कितने चौराहे पृष्ठ 20
19. रेणु, कितने चौराहे पृष्ठ 28
20. रेणु, मैला आंचल पृष्ठ 56
21. डॉ. आनन्द मोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्विक अध्ययन पृष्ठ 118

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

सतना जिले में ग्रामीण महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमान

(एक समाज शास्त्रीय अध्ययन)

* अखिलेश शुक्ल

सारांश- *भारतीय संदर्भ में जहाँ हर प्रकार के शासन तंत्र में आरम्भ से ही पंचायत का महत्व सर्वोपरि रहा है। उसके निर्णयों को सर्वमान्य मानते हुए किसी ने भी उनका विरोध किसी स्तर पर नहीं किया है, उस बात का द्योतक है कि पंचायत व्यवस्था एक ठोस और परिपक्व सामाजिक व्यवस्था के रूप में भारतीय जनमानस में व्याप्त रही है। विदेशी कुशासन के कुछ अन्तराल के पश्चात् इस व्यवस्था का पुनरूत्थान एवं लोकतांत्रिक भारत में पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना एक बहुत ही महत्वपूर्ण कदम रहा है।*

इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महात्मा गाँधी के ग्राम-स्वराज की महती अवधारणा को मूर्त रूप देने की ओर अग्रसर होने के लिए भी इस कदम को बहुत महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए। इसी अवधारणा को कार्यान्वित करने एवं ग्रामीण समाज को स्वावलम्बी बनाने के उद्देश्य से 1950 के दशक में सामुदायिक विकास योजनाओं को लागू किया गया किन्तु इन योजनाओं की असफलता के कारण भारत सरकार ने बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। समिति की इन्हीं अनुशंसाओं के तहत 1994 में मध्यप्रदेश में त्रिस्तरीय लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण किया गया। अर्थात् जिला स्तर पर जिला पंचायत तथा विकासखण्ड स्तर पर जनपद पंचायत एवं ग्रामीण स्तर पर ग्राम पंचायत का गठन किया गया।1

इस अध्ययन का मूल उद्देश्य इस त्रिस्तरीय व्यवस्था में ग्रामीण महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमानों का अन्वेषण करना है। इस हेतु सतना जिले का चयन किया गया है। पुरूष और स्त्री सामाजिक जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिये होते हैं। उनमें किसी एक के अभाव में यह गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती है। आवश्यकता है कि योग्य कर्मठ स्त्रियों की जो आगे बढ़कर अपनी जगह पहचान ले उसे हासिल करें। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को पहले 33 फीसदी अब 50 फीसदी आरक्षण देने से वे राजनीतिक रूप से सशक्त हुई हैं। अब वे न सिर्फ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई हैं बल्कि समाज के वाजिब फैसले भी ले रही हैं। वर्ष 2006 में 50 प्रतिशत आरक्षण देने का कारवाँ बिहार से चलकर राजस्थान, हिमांचल प्रदेश, अरूणांचल में भी पहुँच चुका है। ऐसे में केन्द्र की ओर से सभी राज्यों में 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था किये जाने की पहल मील का पत्थर साबित हो रही है। भारतीय संविधान में महिला तथा पुरूषों के बीच लिंग के आधार पर कोई भेद नहीं किया है। और दोनों को समान रूप से अधिकार दिये गये हैं। आजादी के बाद संविधान द्वारा लिंग भेद की समस्त परम्पराओं को दरकिनार करते

★ समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

हुए महिलाओं को भी समान अधिकार और समाज सहभागिता के अवसर दिये गये थे लेकिन महिलायें अपने अधिकारों का प्रयोग धरातल पर नहीं कर पा रही है तो इसका कारण इनमें राजनैतिक व सामाजिक चेतना की कमी होना ही है। पुरूषों की मानसिकता भी इसके लिए बराबर की जिम्मेदार है। आज भी पुरूष प्रधान समाज महिला को सिर्फ भोग्या बनाये रखने की अपनी सदियों की पुरानी मानसिकता से उतर नहीं पाया है। पंचायती चुनावों में हमें ऐसे एक नहीं कई उदाहरण देखने को मिले हैं जिनमें महिलाओं के लिए अनारक्षित स्थानों पर खड़ी महिला उम्मीदवारों के पूरे चुनाव का संचालन उनके पतियों, भाईयों या अन्य पुरूष रिश्तेदारों द्वारा किया गया। समूची निर्वाचन प्रक्रिया में महिला उम्मीदवार के दर्शन सिर्फ नामांकन के समय ही हुये और बाकी का काम पुरूष रिश्तेदारों द्वारा ही किया गया। उम्मीदवार घर की दहलीज के भीतर चूल्हे में खटती रही और उनके पतियों ने उनके लिए वोट मॉगें। महिला उम्मीदवारों के पति देवर या भाई उन्हें जितवाना तो चाहते थे लेकिन उनकी सत्ता में भागीदारी के लिये नहीं अपितु अपने राजनैतिक स्वार्थों के लिए। ऐसी डमी महिला उम्मीदवार जीती भी लेकिन फिर भी घर की दहलीज लॉघने की उन्हें इजाजत नहीं मिली। वे जीत कर भी चार दीवारी के भीतर तक ही सीमित रहीं। पुरूषों ने उन्हें सिर्फ कागज या रजिस्टर पर अंगूठा लगाने या हस्ताक्षर करने भर का अधिकार दिया था। पिछले पंचायती चुनावों के तुरंत बाद एक गैर सरकारी स्वैच्छिक संगठन ने राज्य सरकार की एक एजेंसी के साथ मिलकर उत्तर प्रदेश मे एक सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के नतीजे चौकानें वाले थे। सर्वेक्षण के मुताबिक उत्तर प्रदेश के पंचायती चुनावों में आरक्षण का लाभ लेकर 80 प्रतिशत से भी अधिक ऐसी महिलायें जीत कर आयी जिन्हें घर स्टैम्प के अलावा ओर कुछ कहा ही नही जा सकता था। उत्तर प्रदेश बिहार और उड़ीसा जैसे बीमारू प्रदेश हो या फिर महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब और आन्ध्रप्रदेश जैसे अपेक्षाकृत काफी विकसित व शिक्षित राज्य हों स्थिति सभी जगह कमोवेश एक ही जैसी है। इन सभी राज्यों में ऐसे एक नही कई-कई उदाहरण हैं जहॉ ग्राम पंचायत, विकासखण्ड या जिला पंचायतों में निर्वाचित महिलाओं के स्थान पर उनके पति, भाई या पुरूष अभिभावक ही बैठक में भाग लेते हैं। अधिकारियों से बातचीत करते है। सर्वेक्षण के मुताबिक अधिकतर निर्वाचित महिला जनप्रतिनिधियों को तो अपने राजनैतिक अधिकारों तक का पता नहीं है उन्हें नहीं पता कि सत्ता में रहते हुए वे क्या-क्या कर सकती है कैसे जनसेवा के कार्यों को अंजाम दे सकती हैं विधायिका में महिला आरक्षण विधेयक पेश करते समय हमें यह भी सोचना होगा कि हमसे भूल कहॉ हुयी, गलती किसकी है? और यह गलती कैसे सुधारी जा सकती है। इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का बस एक ही कारण समझ में आता है, शिक्षा और राजनैतिक जागरूकता की कमी सत्ता में भागीदारी के लिए आवश्यकता है राजनैतिक सोच की राजनैतिक विचारधारा की और राजनैतिक समझदारी की और इस राजनैतिक सोच को पैदा किया जा सकता है मात्र राजनैतिक जगरूकता से। विश्व परिप्रक्ष्य में देखे तो हमारे यहॉ शिक्षा का प्रसार बेहद कम है। महिला शिक्षा के मामले में तो हमारी स्थिति और भी दयनीय है। महानगरों और कुछ शहरों को छोड़ दे तो दूरदराज के हमारे गॉवों में आज भी लड़कियों का दिन सुबह चूल्हे से शुरू होता है और रात को रसोई की सफाई के साथ खत्म होता है। अधिकतर लड़कियॉ स्कूलों का मुँह तक नहीं देख पाती और जो किसी तरह गॉव की प्राइमरी

पाठशाला में पहुँच भी जाती है तो पॉचवी के बाद उनकी पढ़ाई खत्म करवा दी जाती है। क्योंकि उनके परिवार वाले आगे की पढ़ाई के लिए उन्हें नजदीक के दूसरे गॉव या पास के कस्बे में नहीं भेजना चाहते इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं को आरक्षण के साथ-साथ सरस्वती की प्रतीक किताबे भी दी जाये उनके हाथों में चकले-बेलन के साथ-साथ कलमें भी थमाई जाएं। होना तो यह चाहिए था कि पंचायती चुनावों में आरक्षण देने के बाद निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के लिये विशेष प्रशिक्षण शिविर चलाये जाते जिनमें उन्हें राजनैतिक अधिकार क्या है, सामाजिक दायित्व कौन कौन से हैं और सत्ता में भागेदारी उन्हें कैसे प्राप्त करनी है? लेकिन हमने ऐसा कुछ भी नहीं किया क्योंकि इससे उनके जागरूक होने का खतरा था। उनके समझदार बन जाने का भय था और उनके बराबर होने की आशंका थी। और फिर महिला आरक्षण का झुनझुना उनके हाथों में थमाकर हमारा मकसद तो पूरा हो ही गया था। आधी दुनिया के इस बोट बैंक को रिझाने और दुनिया को दिखाने में तो हम सफल हो ही गये थे।

शोध कार्य का उद्देश्य-

सतना जिला रीवा रियासत का एक अंग था। सतना जिले का समाज परम्पराओं तथा रूढ़ियों से जकड़ा था। यहॉ शिक्षा का अभाव था, स्त्रियों की शिक्षा के प्रति उदासीनता थी। पंचायतीराज व्यवस्था ने स्त्रियों को पंचायतों की सहभागिता में आरक्षण प्रदान किया है। इस आरक्षण के कारण वो आज के पंचायतीराज व्यवस्था के विभिन्न पदों पर है। इस व्यवस्था से ग्रामीण महिला नेतृत्व कहॉ तक प्रभावित है? इसके द्वारा ग्रामीण विकास कितना हुआ हैं? यह सब जानना इस अध्ययन के मूल में हैं।

शोध कार्य की आवश्यकता एवं महत्व-

प्रस्तुत शोध ''सतना जिले के ग्रामीण महिला नेतृत्व में उभरते प्रतिमान (एक समाज शास्त्रीय अध्ययन)'' अत्यंत उपयोगी होगा तथा भारत में पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन में इसकी अहम भूमिका होगी। 73वें संविधान संशोधन विधेयक के द्वारा देश में पहली बार महिलाएँ प्रजातांत्रिक राज व्यवस्था के विभिन्न पदों पर कार्य कर रही हैं उनकी यह सहभागिता उन्हें कितना संतोष प्रदान करती हैं तथा क्या वे अपनी आकांक्षाओं और निर्णयों से संतुष्ट हैं? पंचायती राज में महिलाओं को कानूनी अधिकार तो मिल गया हैं किन्तु वे सामाजिक अधिकार भी प्राप्त कर सकी हैं। प्रस्तुत शोध के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जायेगा। समाज में महिलाओं का जो स्थान था, क्या उनमें कोई परिवर्तन हुआ है? क्या पुरूष प्रधान समाज उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखता हैं। वे घर से बाहर पुरूषों के साथ जब काम करती हैं तो उन्हें कैसी अनुभूति होती हैं? उन्हें किसी प्रकार की असुविधा तो नहीं होती हैं? इस अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि क्या महिलाओं की क्षमताओं का पूरा-पूरा उपयोग हो रहा है या नहीं? महिला जनप्रतिनिधियों की अशिक्षा उनके कार्य के मार्ग में कोई बाधा तो उत्पन्न नहीं कर रही हैं। उनके परिवार में पहले की अपेक्षा आज खुशहाली अधिक हैं। उनका परिवार और परिवार के सदस्यों की भावनाओं की कहीं उपेक्षा तो नहीं हो रही हैं। पंचायती राज में महिलाओं का आरक्षण एक क्रांतिकारी कदम हैं। इसका प्रभाव व्यक्ति, परिवार समाज और राष्ट्र पर प्रत्यक्षतः पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन के द्वारा यह जानने का प्रयास किया जायेगा कि यह प्रभाव सकारात्मक हैं या नहीं और यदि नहीं हैं तो किस प्रकार से इन्हें

सकारात्मक बनाया जा सकता हैं। इस प्रकार प्रस्तुत शोध की एक महत्वपूर्ण उपयोगिता होगी।

शोध क्षेत्र का सामान्य परिचय-

सतना मध्यप्रदेश के उत्तर पूर्वी सीमा के मध्य स्थित वर्तमान रीवा संभाग का एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक एवं औद्योगिक प्रधान जिला है। जो 23.580 से 25.120 उत्तरी अक्षांश एवं 80.12' से 81.23' पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। जिले के उत्तर में उत्तर प्रदेश का बाँदा जिला पूर्व में रीवा एवं सीधी जिला, दक्षिण में शहडोल व जबलपुर जिला, तथा पश्चिम में पन्ना जिला स्थित है।1 जिला अपनी धार्मिक विरासतों, औद्योगिक संस्थानों, सांस्कृतिक ऐतिहासिक परिदृश्यों, प्रमुख वनोपज एवं खनिज के कारण सर्वोच्च शिखर पर है। जिला वीर, पराक्रमी, योद्धाओं, वीरांगनाओं, आदि से जाना पहचाना जाता है। जिले का निर्माण सन् 1950 में हुआ इसके पूर्व सतना रीवा रियासत के अधीन था। स्वतंत्रता के पश्चात् जिले के रूप में अस्तित्व में आया। जिले को 11 शहरों एवं 2040 ग्रामीण क्षेत्रों में बांटा गया है। जिले को कुल आठ विकासखण्डों में बांटा गया है,-सतना (सुहावल), अमरपाटन, रामपुर बघेलान, मैहर, उचेहरा, चित्रकूट (मझगवाँ), नागौद, एवं रामनगर।

तालिका क्रमांक-1.1

शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी अध्ययन

(महिला सरपंचों की साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर)

क्र.	विकासखण्डों के नाम	न्यादर्श में चयनित ग्राम पंचायतों की संख्या	न्यादर्श में चयनित महिला सरपंचों की संख्या	पंचायतों के चुनाव में महिलाऐं बढ़-चढ़कर					
				भाग ले रही है		भाग नहीं ले रही हैं		नहीं पता	
				संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	सोहावल	15	15	11	73.33	03	20.00	01	06.67
2.	नागौद	15	15	12	80.00	02	13.33	01	06.67
3.	रामपुर बघेलान	15	15	12	80.00	02	13.33	01	06.67
4.	अमरपाटन	15	15	11	73.33	03	20.00	01	06.67
5.	मैहर	15	15	12	80.00	02	13.33	01	06.67
6.	मझगवॉ	15	15	11	73.33	02	13.33	02	13.33
7.	रामनगर	15	15	12	80.00	02	13.33	01	06.67
8.	उचेहरा	15	15	11	73.33	03	20.00	01	06.67
	योग	120	120	92	76.67	19	15.83	09	07.50

उपरोक्त तालिका क्रमांक'-1.1 में शोध क्षेत्र के प्रत्येक विकासखण्ड से न्यादर्श हेतु चयनित 15-15 महिला सरपंचों कुल मिलाकर 120 महिला सरपंचों से शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी जानकारी का संकलन किया गया है।

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.1 के ऑकड़े यह दर्शाते हैं, कि शोध क्षेत्र में न्यादर्श हेतु चयनित कुल 120 महिला सरपंचों में से 92 महिला सरपंचों ने कहा कि शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाऍ बढ़-चढ़कर भाग ले रही है, जबकि 19 महिला सरपंचों ने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 09 महिला सरपंचों ने कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है। इस प्रकार उपरोक्त तालिका

के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शोध क्षेत्र के 76.67 प्रतिशत महिला सरपंचों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही है, जबकि 15. 83 प्रतिशत महिला सरपंच मानती हैं, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 07.50 प्रतिशत महिला सरपंच ऐसी भी थी कि जिन्होंने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही है, कि नहीं इस सम्बंध में उन्हें नहीं पता है।

तालिका क्रमांक - 1.2

शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी अध्ययन

(महिला पंचों की साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर)

क्र.	विकासखण्डों के नाम	न्यादर्श में चयनित ग्राम पंचायतों की संख्या	न्यादर्श में चयनित महिला पंचों की संख्या	पंचायतों के चुनाव में महिलाएँ बढ़-चढ़कर					
				भाग ले रही है		भाग नहीं ले रही हैं		नहीं पता	
				संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	सोहावल	10	20	15	75.00	03	15.00	02	10.00
2.	नागौद	10	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
3.	रामपुर बघेलान	10	20	15	75.00	03	15.00	02	10.00
4.	अमरपाटन	10	20	13	65.00	04	20.00	03	15.00
5.	मैहर	10	20	15	75.00	03	15.00	02	10.00
6.	मझगवॉ	10	20	14	70.00	03	15.00	03	15.00
7.	रामनगर	10	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
8.	उचेहरा	10	20	15	75.00	03	15.00	02	10.00
	योग	80	160	115	71.87	27	16.88	18	11.25

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.2 में शोध क्षेत्र के प्रत्येक विकासखण्ड से न्यादर्श में चयनित 20-20 महिला पंचों कुल मिलाकर 160 महिला पंचों से शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी जानकारियों का संकलन किया गया है।

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.2 के ऑकड़ों से स्पष्ट होता है, कि शोध क्षेत्र में न्यादर्श हेतु चयनित कुल 160 महिला पंचों में से 115 महिला पंचों ने कहा कि महिलाएं, पंचायतों के चुनाव में बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि 27 महिला पंचों ने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 18 महिला पंचों ने इस प्रश्न के जवाब में कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है। इस प्रकार उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह तथ्योद्घाटन होता है, कि शोध क्षेत्र के 71.87 प्रतिशत महिला पंचों के अनुसार पंचायातें के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि 16. 88 प्रतिशत महिला पंचों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 11.25 प्रतिशत महिला पंचों ने कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है।

तालिका क्रमांक - 1.3

शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी अध्ययन

(महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों की साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर)

क्र.	जनपद पंचायतों के नाम	न्यादर्श में चयनित महिला जनपद सदस्यों/ अध्यक्षों की संख्या	पंचायतों के चुनाव में महिलाऐं बढ़–चढ़कर					
			भाग ले रही है		भाग नहीं ले रही हैं		नहीं पता	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	सोहावल	10	06	60.00	02	20.00	02	20.00
2.	नागौद	10	07	70.00	02	20.00	01	10.00
3.	रामपुर बघेलान	10	08	80.00	01	10.00	01	10.00
4.	अमरपाटन	10	07	70.00	02	20.00	01	10.00
5.	मैहर	10	08	80.00	01	10.00	01	10.00
6.	मझगवॉ	10	05	50.00	03	30.00	02	20.00
7.	रामनगर	10	07	70.00	02	20.00	01	10.00
8.	उचेहरा	10	07	70.00	02	20.00	01	10.00
	योग	80	55	68.75	15	18.75	10	12.50

उपरोक्त तालिका क्रमांक-6.3 में शोध क्षेत्र के प्रत्येक जनपद पंचायत से न्यादर्श हेतु चयनित 10-10 महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों कुल मिलाकर 80 महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों से शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी जानकारी का संकलन किया गया है।

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.3 के ऑकड़े यह दर्शाते हैं, कि शोध क्षेत्र में न्यादर्श में चयनित कुल 80 महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों में से 55 ने कहा कि शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि 15 महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों ने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 10 महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों ने अपने जवाब में कहा कि उन्हें इस सम्बंध ा में नहीं पता है। इस प्रकार उक्त तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शोध क्षेत्र के 68.75 प्रतिशत महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि शोध क्षेत्र की 18.75 प्रतिशत महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों का मानना है कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं तथा 12.50 प्रतिशत महिला जनपद सदस्य/अध्यक्ष ऐसी भी थीं जिन्होंने अपने जवाब में कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है।

तालिका क्रमांक - 1.4

शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी अध्ययन

(महिला नागरिकों की साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर)

क्र.	जिला पंचायत वार्डों के नाम	न्यादर्श में चयनित महिला नागरिक की संख्या	पंचायतों के चुनाव में महिलाऐं बढ़–चढ़कर					
			भाग ले रही है		भाग नहीं ले रही हैं		नहीं पता	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	वार्ड क्रमांक–01	20	13	65.00	04	20.00	03	15.00
2.	वार्ड क्रमांक–02	20	12	60.00	04	20.00	04	20.00
3.	वार्ड क्रमांक–05	20	13	65.00	05	25.00	02	10.00
4.	वार्ड क्रमांक–06	20	12	60.00	05	25.00	03	15.00

1.	वार्ड क्रमांक–10	20	13	65.00	04	20.00	03	15.00
2.	वार्ड क्रमांक–13	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
3.	वार्ड क्रमांक–14	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
4.	वार्ड क्रमांक–16	20	13	65.00	03	15.00	04	20.00
5.	वार्ड क्रमांक–17	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
6.	वार्ड क्रमांक–18	20	13	65.00	04	20.00	03	15.00
7.	वार्ड क्रमांक–20	20	12	60.00	05	25.00	03	15.00
8.	वार्ड क्रमांक–22	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
9.	वार्ड क्रमांक–24	20	13	65.00	04	20.00	03	15.00
10.	वार्ड क्रमांक–25	20	14	70.00	04	20.00	02	10.00
11.	वार्ड क्रमांक–26	20	12	60.00	05	25.00	03	15.00
	योग	300	196	65.33	63	21.00	41	13.67

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.4 में शोध क्षेत्र के न्यादर्श में चयनित 15 जिला पंचायत वार्डों में से न्यादर्श हेतु चयनित 20-20 महिला नागरिकों कुल मिलाकर 300 महिला नागरिकों से शोध क्षेत्र में पंचायतों के चुनाव में महिलाओं द्वारा बढ़-चढ़कर भाग लेने सम्बंधी जानकारियों का संकलन किया गया है।

उपरोक्त तालिका क्रमांक-1.4 के ऑकड़े यह दर्शातें हैं, कि शोध क्षेत्र में न्यादर्श हेतु चयनित कुल 300 महिला नागरिकों में से 196 ने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि 63 महिला नागरिकों ने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं तथा 41 महिला नागरिकों ने इस प्रश्न के जवाब में कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है। इस प्रकार उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है, कि शोध क्षेत्र की 65.33 प्रतिशत महिला नागरिकों के अनुसार पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं, तथा 21.00 प्रतिशत महिला नागरिकों ने अपने जवाब में कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं, साथ ही 13.67 प्रतिशत महिला नागरिक ऐसी भी थीं जिन्होंने कहा, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़ चढ़कर भाग ले रही हैं, कि नहीं इस सम्बंध में उन्हें नहीं पता है।

इस प्रकार उपरोक्त चारों तालिकाओं (तालिका क्रमांक-6.1, 6.2, 6.3 वे 6.4) के विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है, कि शोध क्षेत्र में अधिकांश उत्तरदाताओं के अनुसार पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं। इस प्रकार यह सिद्ध होता है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं।

शोध क्षेत्र में ग्रामीण महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमान के अध्ययन हेतु शोधार्थी ने कुछ शोध उपकरणों की सहायता ली, जिसके द्वारा एकत्रित तथ्यों का सारणीयन, विश्लेषण एवं व्याख्या द्वारा वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त की। इनके आधार पर शोध कार्य के जो अंतिम निष्कर्ष प्राप्त हुए वे इस प्रकार हैं -

1. शोध क्षेत्र के 76.67 प्रतिशत महिला सरपंचों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही है, जबकि 15.83 प्रतिशत महिला सरपंच मानती हैं, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 07.50 प्रतिशत महिला सरपंच ऐसी भी थी कि जिन्होंने कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही है, कि नहीं इस सम्बंध में उन्हें नहीं पता है। (तालिका क्रमांक-1. 1)

2. शोध क्षेत्र के 71.87 प्रतिशत महिला पंचों के अनुसार पंचायातें के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि 16.88 प्रतिशत महिला पंचों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं। तथा 11.25 प्रतिशत महिला पंचों ने कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है। (तालिका क्रमांक-1.2)

3. शोध क्षेत्र के 68.75 प्रतिशत महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों का मानना है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं, जबकि शोध क्षेत्र की 18. 75 प्रतिशत महिला जनपद सदस्यों/अध्यक्षों का मानना है कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं तथा 12.50 प्रतिशत महिला जनपद सदस्य/अध्यक्ष ऐसी भी थीं जिन्होंने अपने जवाब में कहा कि उन्हें इस सम्बंध में नहीं पता है। (तालिका क्रमांक-1.3)

4. शोध क्षेत्र की 65.33 प्रतिशत महिला नागरिकों के अनुसार पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं, तथा 21.00 प्रतिशत महिला नागरिकों ने अपने जवाब में कहा कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग नहीं ले रही हैं, साथ ही 13.67 प्रतिशत महिला नागरिक ऐसी भी थीं जिन्होंने कहा, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़ चढ़कर भाग ले रही हैं, कि नहीं इस सम्बंध में उन्हें नहीं पता है। (तालिका क्रमांक-1.4)

इस प्रकार उपरोक्त चारों तालिकाओं के विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है, कि शोध क्षेत्र में अधिकांश उत्तरदाताओं के अनुसार पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ-चढ़कर भाग ले रही हैं। इस प्रकार यह सिद्ध होता है, कि पंचायतों के चुनाव में महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. द्विवेदी राधेश्याम (1999) : मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम-1994, सुविधा लॉ हाऊस।
2. भसीन, अनीस (2009) : विश्व में महिला अधिकारों की स्थिति, प्रतियोगिता दर्पण, मासिक पत्रिका, मुद्रक एवं प्रकाशक महेन्द्र जैन, आगरा, पृ.-701-719
3. कैड़ा, पुष्पा, (2004) : वर्तमान में नारी अधिकारों के संरक्षण का स्वरूप, प्रतियोगिता दर्पण, मासिक पत्रिका, मुद्रक एवं प्रकाशक महेन्द्र जैन, पृष्ठ-1527-1529
4. अग्रवाल उमेश चन्द्र (2001) : भारत में महिला समानता और सशक्तिकरण के प्रयास, 'योजना', मासिक सूचना ओर प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, मार्च, पृ. 34-38
5. दत्त, विजय रंजन (2009) : महिला सशक्तिकरण की क्रांतिकारी पहल, प्रतियोगिता दर्पण, मासिक पत्रिका, मुद्रक एवं प्रकाशक महेन्द्र जैन, पृ. 1420-1422
6. महिपाल (2002) : ग्रामीण पुनर्निर्माण में पंचायत की भूमिका, योजना, मासिक पत्रिका, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली जनवरी पृ.-69-72
7. पॉल, देविका (2005) : स्त्री पुरूष समानता और आयोजन, योजना मासिक पत्रिका, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जनवरी पृ. 61-63

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

छवि निर्माण में जनसंपर्क की महत्वपूर्ण भूमिका

* अदिति नामदेव

सारांश- *विश्व के सभी तरह के मानवीय व्यवहारों और गतिविधियों में जनसंपर्क एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में स्थापित हो चुका है। जनसंपर्क का इतिहास काफी पुराना है। प्राचीनकाल में विभिन्न स्थानों पर पाए जाने वाले अभिलेखों और दस्तोवेजों से ज्ञात होता है कि उस वक्त भी शासक और महत्वपूर्ण व्यक्ति अपनी बातों को लोगों तक पहुंचाने के लिए जनसंपर्क कला का उपयोग करते थे। ज्यादातर संवादों का उद्देश्य लोगों को सिर्फ सूचना देना ही नहीं होता था, वरन छवि निर्माण करने का वह एक महत्वपूर्ण और उपयोगी माध्यम था। बदलते वक्त में, जब सभी तरह की प्रतिस्पधाएं भी बढ़ चुकी हैं, छवि निर्माण एक अत्यंत आवश्यक जरूरत के रूप में मान्य हो चुका है। जनसंपर्क निश्चित ही छवि निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।*

परिचय– वर्तमान स्वरूप में ही नहीं, अपने पुरातन तरीके से भी छवि निर्माण की आकांक्षा मनुष्य के जीवन में हमेशा विद्यमान रही है। व्यक्तिगत तौर पर हो या सार्वजनिक जीवन व्यतीत करने, व्यवसाय या सेवा अथवा उद्योग के स्तर पर तो छवि निर्माण बेहद महत्वपूर्ण हो जाता है। छवि निर्माण के लिए कुशल जनसंपर्क की आवश्यकता होती है। इसीलिए बदलती हुई दुनिया में जनसंपर्क भी आज एक विकसित विधा के रूप में स्थापित हो चुका है। आज जनसंपर्क को व्यवसाय प्रबंधन का एक आवश्यक अंग ही स्वीकार किया गया है। वस्तुतः कुशल और वैज्ञानिक जनसंपर्क का उत्पादन हमें अच्छी छवि के रूप में प्राप्त होता है।

जनसंपर्क और छवि निर्माण के परस्पर संबंधों को बेहतर ढंग से समझने के लिए आवश्यक है कि हम पहले जनसंपर्क को समझें। डॉ. सुशील त्रिवेदी और शशिकांत शुक्ला ने अपनी किताब "जनसंपर्क सिद्धांत और व्यवहार" में इस पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्होंने जनसंपर्क संबंधी विभिन्न मतों को एकत्रित किया है। इनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार हैं:-

1. "जनसम्पर्क सामान्य जनता से प्रचार के जरिये संबंध बनाना है जिससे किसी नियम संगठन, सेवा आदि के कार्यों और नीतियों के बारे में जनता को सूचित किया जा सके और अपने पक्ष में जनमत निर्मित किया जा सके।''

-शब्दकोश

2. "जनसंपर्क विभिन्न सामाजिक विज्ञानों का सम्मिश्रण है, जो हमें व्यक्ति और समूह की प्रतिक्रिया से अवगत कराता है। यह सम्प्रेषण का वह विज्ञान है जो तनाव को दूर

★ शोध छात्रा, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

करके बेहतर संबंधों को बनाते हुए सहमति का निर्माण करता है।"

-सैम ब्लेक[1]

लेखकद्वय ने आगे बतलाया है कि "बेब्रनर के अनुसार आधुनिक प्रशासन में जनसम्पर्क तथा प्रसार-प्रचार का सीधा अर्थ है कि उद्योग में मानवीय दृष्टिकोण का अध्ययन तथा शासन में इसका विस्तार जनसम्पर्क के आवश्यक तत्व हैं-

1. जनता की इच्छाओं और भावनाओं का ज्ञान

2. अधिकारियों और जनता के बीच संतोषजनक जनता के सोच-विचार का अध्ययन तथा समन्वय।''[2] उपरोक्त परिभाषाओं से ज्ञात होता है कि जनसंपर्क एक तरह से जनमत को जानने की कला है क्योंकि जनमत को जाने बिना छवि को सुधारा या निर्मित नहीं किया जा सकता।

इस विधा के इतिहास पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि प्राचीन कालखंड में जनसम्पर्क का प्रमुख प्रायोजन सामान्यजन को आवश्यक सूचनाएं और जानकारी देना था। इस जानकारी के अनुसार उन्हें मनचाहा कार्य करने के लिए अभिप्रेरित और निर्देशित करना था। कई बार तो इसी के माध्यम से प्रदान की गई सूचना पर जनता की प्रतिक्रिया जानने के लिए भी कार्य किया जाता था।

इस बात के प्रमाण हैं कि अनेक देशों में पुराने समय से ही जनसंपर्क का प्रयोग होता आया है। असीरिया, बेबीलोकन और सुमेरिया राज्यों के शासकों की उनकी स्वच्छंदता के लिए खराब छवि थी। जनता के बीच अच्छी छवि बनाने और आत्मप्रचार के लिए वे अपने अनुकूल साहित्य लिखवाते और कला-सामग्रियां भी बनवाते थे। राक के किसानों को खेती-किसानी बाबत् जानकारी भी दी जाती थी। ग्रामीणों को इस आशय के निर्देश दिए जाते थे कि वे शहर में रहने वाले नागरिकों के लिए अनाज की पैदावार करें। आजकल की ही तरह ये विज्ञप्तियां भी प्रशासन द्वारा प्राचीन तौर-तरीकों से मध्य युग में जारी की जाती थी। यह भी ज्ञात होता है कि फिलीस्तीन में धर्म प्रचारक एवं सिद्धपुरुष बाजारों और पूजा-स्थलों में घूम-घूमकर उपदेश देते थे।

प्राचीन रोम में लोगों के अभिमत और लोकवाणी का बहुत ज्यादा महत्व हुआ करता था। रोम के महान सम्राट सीजर के द्वारा समाचारों के प्रकाशन करने की प्रथा चला गई थी। उसने 'एक्टदीरूना' (दैनिक समाचार) का प्रकाशन करना प्रारंभ किया था। इसमें शासकीय सूचनाएं तथा अन्य समाचार हुआ करते थे। बतलाया जाता है कि यह सिलसिला लगभग 400 साल जारी रहा। इतिहास में इस बात का भी उल्लेख है कि सीजर अनेक छोटी-छोटी पुस्तिकाएं और पम्लेट आदि भी वितरित करता था। रोमनों द्वारा अपने शक्ति प्रदर्शन और कार्यों के प्रचार-प्रसार के लिए जुलूस और प्रदर्शन भी आयोजित किये जाते थे। नारे लगाने का रिवाज भी रोमन लोगों ने ही शुरू की थी। ऐसी भी जानकारी उपलब्ध है कि अपनी नृशंसता के लिए बदनाम रोमन सम्राट नीरो (सन् 37-68 ई.) ने तो अपने विजय जुलूसों और नारेबाजी के लिए 5000 युवकों का एक जत्था बनाया हुआ था। इसी प्रकार, पोप अष्टम जब चर्च के अध्यक्ष बने तो उन्होंने अपने अभियान को गति देने के लिए बाकायदे एक प्रोपगण्डा संस्थान की स्थापना की थी, जहां धार्मिक सुधारों के प्रचार हेतु जनसम्पर्क कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाता था। कार्यकर्ता अपने उपदेशों के द्वारा जनअभिमत को अपने पक्ष में करने संबंधी कार्यक्रम

आयोजित किया करते थे। इंग्लैण्ड में सत्रहवीं शताब्दी में तत्कालीन सम्राट और प्यूरिटनों के बीच हुए गृहयुद्धों के दौरान छोनों ही पक्षों की ओर से प्रोपगण्डा बस किया गया तथा और लोकमत निर्माण के नए-नए तरीके अपनाए गए। 1640 से लेकर राजतंत्र के संक्रमण काल चलने तक अर्थात 1660 तक इंग्लैण्ड में अनेक समाचारपत्रों और पुस्तिकाओं का प्रकाशन हुआ।

डॉ. श्रीकांत सिंह का कहना है कि "प्रत्येक समाज के सामाजिक जीवन में जनमत अर्थात जनता के मत का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जब भी लोगों के आचार व्यवहार और रवैये में परिवर्तन की बात आती है तो प्रायः जनमाध्यमों की भूमिका का अधिक बल दिया जाता है। ऐसा माना जाता है कि किसी भी नीति को धारण करने या अपनाने हेतु लोगों को प्रेरित करने के लिए जन माध्यम की प्रत्यक्ष या परोक्ष भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

जनमत में अधिकांश परिवर्तनों का श्रेय जन माध्यम के प्रभाव को ही दिया जाता है। वस्तुतः संचार एवं जनमत नेता भी जनमत को प्रभावित करते है।
आखिर यह जनमत है क्या, जिसे परिवर्तित करने में जन माध्यम योगदान देते है? जनमत शब्द दो शब्दों के योग से बना है वे है जऩमत। इस प्रकार शाब्दिक अर्थ में जनमत, जनता का मत है।"[3]

नया परिवेश- अगर जनसंपर्क के नए और वर्तमान स्वरूप की बात करें तो अनेक तथ्य सामने आते हैं। कहा जा सकता है कि बीसवीं सदी में परिवर्तन का जो दौर चला, उसने संपूर्ण विश्व का चेहरा-मोहरा ही बदल कर रख दिया। आदिम युग से कृषि युग आने में मानव ने हजारों वर्ष लगाये। तत्पश्चात सैकड़ों साल कृषि युग में बिताने के बाद औद्योगिक युग में प्रवेश किया। परंतु सिर्फ एक शताब्दी से भी कम अवधि में हमारी सभ्यता ने औद्योगिक युग को भी पीछे छोड़ते हुए सूचना युग में प्रवेश किया। तेज गति से बढ़ती जनसंख्या, नागरीकरण, औद्योगीकरण, वैज्ञानिक व तकनीकी ज्ञान, साक्षरता के साथ ही समाज में परिवर्तन की एक तरह से भीषण आंधी ही आ गयी।

औद्योगीकरण ने पूरे विश्व में हर क्षेत्र में कड़ी प्रतिस्पर्धा और प्रतिद्वंद्विता का वातावरण निर्मित कर दिया। अपने व्यवसाय, उत्पादन, सेवाओं या स्वयं को बेचने या मार्केटिंग के लिहाज से बेहतर प्रबंधन की आवश्यकता पड़ने लगी। अच्छी छवि अधिक लाभ की एक तरह से गारंटी ही बन गई। ऐसे में जनसंपर्क का महत्व एकाएक बेतहाशा बढ़ गया। प्रारंभ में गिनी-चुनी संस्थाओं व प्रतिष्ठानों में ही जनसंपर्क की गतिविधियां संचालित की जाती थी, परंतु अब एक तरह से भी विधाओं, इकाइयों और प्रतिष्ठानों के लिए अपरिहार्य बन गया है। हालांकि जनसंपर्क के नए सिद्धांतों व व्यवहार तथा तत्संबंधी विभिन्न कार्यकलापों और गतिविधियों का विकास ज्यादातर अमेरिका में हुआ, लेकिन अब संपूर्ण विश्व में इसका फैलाव हो चुका है। दुनिया के सभी देशों में जनसंपर्क अब एक विकसित कला और विधा के रूप में स्थापित हो चुका है। विशेषकर औद्योगिक इकाइयों और प्रतिष्ठानों के लिए तो यह अत्यंत अपरिहार्य गतिविधि के रूप में स्वीकृत हो चुका है। त्रिवेदी और शुक्ल का मानना है कि "जनसंपर्क अब एक विशेषज्ञता वाला क्षेत्र बन गया है। जनसंपर्क कर्मी के लिए यह स्पष्ट हो गया है कि वह अपने संगठन की जटिलताओं को पहचाने और उनका विवेचन करे तथा समस्याओं का समाधान करने के

लिए संचार की रणनीति बनाकर कार्य करे। संगठन के भीतर और संगठन के बाहर छोनों ही स्तरों पर जनसंपर्क अनिवार्य प्रबंधकीय कार्य बन गया है। जनसंपर्क कर्मी अब किसी विशेषज्ञ के रूप में तब ही सफल हो सकते हैं जब वे मारा-मारी वाली प्रतियोगिता के क्षेत्र में पूरी तैयारी से उतरें।''[4]

कार्पोरेट जनसंपर्क– 'जनसंपर्क एक परिचय' में कहा गया है कि "कार्पोरेट जनसंपर्क वस्तुतः एक सहयोगात्मक रूप से किसी नैगमिक संगठन, संस्था या कंपनी की अपने कर्मचारियों श्रमिकों, वर्तमान तथा संभावित ग्राहकों के मध्य छवि निर्माण करना है, जिससे संगठन की प्रतिष्ठा बनी रहे। यह छवि संपूर्ण रूप से संगठन के स्वरूप को प्रस्तुत करती है। यह बहुआयामी कार्यों तथा संभावित योजना के रूप में कार्य करता है। कार्पोरेट छवि का सरोकार औद्योगिक बाजार से रहता है, लेकिन वहीं उपभोक्ता बाजार के लिए ब्राण्ड की छवि महत्वपूर्ण होती है। एक विशिष्ठ परिभाषा के अनुसार "कार्पोरेट जनसंपर्क एक विशिष्ट प्रकार के कार्यों का प्रबंधन है, जिसमें आपसी संचार, सौहार्द्र और समझ रहती है, आपस में आंतरिक जन और बाह्यजन छोनों के मध्य परस्पर सहयोगी संबंध होते हैं। प्रबंधन भी अपने जन पूर्ण और नियमित रूप से प्रगति की सूचनाएं देते रहता है। प्रबंधन का अपने जन के प्रति पूर्ण रूप से वफादार रवैया होता है।[5]

त्रिवेदी और शुक्ला आगे कहते हैं कि "कार्पोरेट अवधारणा के अंतर्गत जनसम्पर्क अपने उद्देश्यों, मिशन आदि की जानकारियां कर्मचारियों को देता है। उन्हें उनके दायित्व बोध और उद्देश्यों से अवगत कराता है। विभिन्न प्रकार के जन, आंतरिक तथा बाह्यजन, सभी को सूचनाएं और जानकारियों से अवगत करता है।''[6]

यह भी देखा गया है कि किसी भी देश, राज्य या प्रांत की सरकारें या शासन जब भी को नये कार्यक्रम लेकर आता है, तो उसे सर्वप्रथम जनता के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है ताकि उस पर जनमत का आंकलन किया जा सके। उसकी प्रतिक्रिया, अभिमत या राय ली जाती है जिसे जनमत कहा जाता है। यह बहुमत की राय होती है। प्रचार माध्यमों (समाचारपत्रों, विज्ञापनों, फिल्म, प्रदर्शनी व अन्य) की सहायता से जनमत का ज्ञान हो जाता है। प्रचार माध्यमों के द्वारा ही जनमत को अपने पक्ष में करने और जनमत का निर्माण भी किया जाता है।

देखा गया है कि जनसम्पर्क प्रबंधन का कार्य उस समय और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, जब वह अपने संगठन, सरकार या निजी संस्थान की गतिविधि में विस्तार कर उसे जनसाधारण तक पहुंचाने की योजना बनाता है। इसके अलावा विरोधियों या प्रतिस्पर्धियों के दुष्प्रचार या विरोधी प्रोपेगेण्डा का वह तर्कपूर्ण तरीके से जवाब देकर अपनी छवि को धूमिल होने से बचाता है और प्रतिष्ठा व सम्मान को बनाए रखता है। यह सर्वविदित तथ्य है कि किसी भी संस्था, व्यक्ति या प्रतिष्ठान की आम लोगों के बीच अपनी एक छवि होती है। यह छवि अच्छी या बुरी, कैसी भी हो सकती है। छवि को विभिन्न उपायों और माध्यमों से अच्छा बनाया जा सकता है, तथा उसे बदला भी जा सकता है।

अच्छे व्यवहार, कुशल सेवा और अच्छे प्रबंधन के द्वारा छवि को बेहतर किया जा सकता है। अगर छवि या प्रतिष्ठा में गिरावट आ रही है तो संस्था या संगठन की नीतियों और गतिविधियों में आवश्यक परिवर्तन-परिमार्जन कर छवि को आकर्षक बनाया जा सकता है। अगर जनसंपर्क के माध्यम से छवि को गिरने से रोकने में कामयाबी नहीं

मिलती तो निजी उद्देश्यों, लक्ष्यों और प्रयोजनों की प्राप्ति असंभव हो जाती है। कार्पोरेट जनसम्पर्क के कार्य के रूप में छवि निर्माण हेतु अतिरिक्त कुशल की जरूरत होती है। इसके लिए कार्पोरेट जनसंपर्क को सुव्यवस्थित करना, वार्षिक योजना का निर्माण, जनसंपर्क के संगठन और संस्था के लक्ष्यों-नीतियों के अनुरूप योजनाएं बनाना, उनका क्रियान्वयन तथा उनमें सुसंगतता बिठाना, आंतरिक व बाह्यजनों से सतत संवाद बनाए रखना, फीडबैक प्राप्त करना, शोध, सर्वे तथा विश्लेषण आदि करना होता है। विभाग की गतिविधियों और उस संबंध में अभिजनों और समाज के विभिन्न वर्गों से प्राप्त फीडबैक या जानकारी को प्रबंधन तक पहुंचाना जनसंपर्क विभाग का मूल दायित्व होता है। जनता का अभिमत प्रबंधन तक पहुंचने तक उसे अपनी सेवाओं में सुधार का अवसर मिलता है, जो उसकी छवि को सुधारने में मददगार होता है।

शशिकांत शुक्ल का विचार है कि "कार्पोरेट जनसंपर्क मुख्यतः प्रयास करता है कि संगठन की छवि एवं पहचान स्थापित हो। छवि निर्माण स्वतः जन मस्तिष्कों की उपज है। यहां जनसंपर्क का मुख्य कार्य अपने जन के मध्य संगठन की छवि कैसी है? जन संगठन के बारे में क्या सोचते हैं? किस प्रकार के विचार रखते हैं? ये बातें प्रमुख रूप से उभरती हैं। अतः कार्पोरेट जनसंपर्क यह प्रयास करता है कि संगठन की छवि और विश्वसनीयता बनी रहे।''[7]

छवि निर्माण हेतु जनसंपर्क– शोध पत्रिका 'ऐसोमार' में प्रकाशित अपने एक रिसर्च पेपर में फिलिप जे. किचन और डैनी मॉस ने 'कटलिप' द्वारा दी गई परिभाषा का हवाला यह कहकर दिया है कि "जनसंपर्क प्रबंधन का वह कार्य है जिसके अंतर्गत कोई संस्था उन विभिन्न समुदायों के साथ आपसी हितकारी संबंधों को पहचानने, मजबूत करने और बनाए रखने का होता है, जिन पर संस्थान की सफलता या नाकामी निर्भर करती है। इसके लिए उसे (अ) लक्षित समूह का चुनाव करना, (ब) उपयुक्त संदेश या संवाद का निर्माण करना और (स) समुचित माध्यम का चुनाव कर संदेश को अपने लक्ष्य तक पहुंचाने का दायित्व निभाना होता है। दूसरी तरफ 'प्रबंधन' का कार्य सामान्य कुशलता को आवश्यक बनाना, समीक्षा, योजना, क्रियान्वयन और समय पर नियंत्रण रखना है।''[8] एक लेखक के अनुसार "Marketing Public Relations (MPR) is the use of public relations strategies and techniques to achieve marketing objectives."[9]

उपरोक्त कथन में जोसेफ फर्नांडिस जिस जनसंपर्क की मार्केटिंग की बात करते हैं, दरअसल वह एक तरह से किसी भी संस्थान या प्रतिष्ठान द्वारा छवि निर्माण करने या सुधारने की ही प्रक्रिया है। जनसंपर्क का विकसित स्वरूप और उसकी व्यवहारिकता का उद्देश्य भी छवि निर्माण ही है। कह सकते हैं कि कार्पोरेट जनसंपर्क ऐसा महत्वपूर्ण दायित्व होता है कि वह अपने आंतरिक व बाह्यजनों में प्रतिष्ठान की एक लोकप्रिय व विकासोन्मुख छवि का प्रस्तुतीकरण करे। उसकी छवि निर्माण कार्य में अनेक प्रचारात्मक गतिविधियां भी शामिल व सहायक होती हैं। कंपनी द्वारा संगठित और संरचनात्मक तरीके से अपने आंतरिक-बाह्यजनों में चलाए गए जनसंपर्क अभियान उसकी सेवाओं और उत्पादों का प्रचार, साख निर्माण व कंपनी की स्वीकार्यता में वृद्धि करने में सहायक होता है। इसके लिए कई तरह के प्रचारात्मक उपायों, मीडिया और आयोजनों का उपयोग किया जाता है। 'कार्पोरेट छवि' से तात्पर्य यह है कि प्रतिष्ठान या कंपनी जो भी गतिविधियां कर रही हैं,

उनके बारे में संबंधित अभिजन क्या धारणा रखते हैं। चूंकि इस छवि पर ही संगठन के उद्देश्य, प्रयोजन और लाभ्ज्ञ टिके रहते हैं, अतः अच्छी छवि सभी तरह के संस्थाओं-उपक्रमों के लिए आवश्यक बन जाती हैं। हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, टाटा, गोदरेज, आ टीसी, इंडियन आयल सहित ऐसे अनेक व्यवसायिक और औद्योगिक संगठन हैं, जिनकी अच्छी छवि के कारण जनता के मध्य उनकी विश्वसनीयता कायम है। संगठन के प्रति यह विश्वास ही उसकी छवि है। कार्पोरेट छवि औद्योगिक बाजार से जुड़ी हु होती है। कार्य, सेवा और उत्पादों के माध्यम से वह ब्राण्ड के रूप में प्रतिष्ठित होती है। ब्राण्ड इमेज का अर्थ हो जाता है ऐसी कंपनियां जिनकी बाजार और उपभोक्ताओं के मध्य अच्छी साख और प्रतिष्ठा है। लोगों का उनमें यह भरोसा स्थायी रूप से बन जाता है कि इनके द्वारा निर्मित वस्तुएं खराब नहीं होती और उनकी सेवाएं भी अच्छी होती हैं। इनसे लोकग इतने संतुष्ट रहते हैं कि कई-क वर्षं से वे इन्ही उपक्रमों के उत्पाद खरीदते चले आते हैं। इसका कारण ऐसी कंपनियों की अच्छी छवि ही होती है जिनका पहचान चिन्ह (लोगो) देखकर ही लोकग उत्पादों खरीद लेते हैं। इन कंपनियों की प्रामाणिकता और प्रतिबद्धता ही इस छवि निर्माण के कारक तत्व होते हैं। इन कंपनियों में कार्यरत आंतरिक (कर्मचारी आदि) और (बाह्यजन ग्राहक, सप्लायर, निवेशक आदि) अत्यंत संतुष्ट होते है। प्रतिस्पर्धा में ये कंपनियां टिकी रहती हैं और इनका लाभ हमेशा बना रहता है।

आचार और नीति भी संगठन की छवि के निर्माण में महत्वपूर्ण रोल अदा करते हैं। अपने आंतरिक और बाह्यजनों के अलावा आम लोगों के प्रति उनका दृष्टिकोण, व्यवहार और योगदान उनकी छवि को बनाने में यथेष्ट मदद करते हैं। कई कंपनियों द्वारा किये जा रहे सामाजिक कार्यो से भी उनकी छवि सुधरती और निखरती है, जिसका सीधा फायदा उनके व्यवसायिक हितों को ही मिलता है।

निष्कर्ष– इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान समय में किसी भी संस्था और प्रतिष्ठान के विकास हेतु छवि निर्माण एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य के रूप में स्वीकृत किया जा चुका है। छवि निर्माण वैसे तो संपूर्ण संगठन की सामूहिक जिम्मेदारी होती है, लेकिन जनसंपर्क विभाग इसमें सर्वाधिक योगदान करता है। जनसंपर्क कला का सर्वोत्तम उपयोग कर अपने संगठन की छवि को सुधार कर या अच्छी छवि स्थापित कर उपक्रम की नीति व कार्यक्रमों को सफल बनाते हुए व्यवसायिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. त्रिवेदी, डॉ. सुशील, शुक्ल, शशिकांत. जनसंपर्क सिद्धांत और व्यवहार, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, संस्करण 1996, पृष्ठ- 4
2. वही, पृष्ठ- 4-5
3. श्रीकांत, डॉ. सिंह, सम्प्रेषणः प्रतिरूप एवं सिद्धांत, भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, फैजाबाद, पृष्ठ- 153
4. त्रिवेदी, डॉ. सुशील. शशिकांत शुक्ल. जनसंपर्क सिद्धांत और व्यवहार, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, संस्करण 1996, भूमिका से
5. त्रिवेदी, डॉ. सुशील, शुक्ल शशिकांत. जनसम्पर्क एक परिचय, छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी ग्रंथ अकादमी, रायपुर, संस्करण 2010, पृष्ठ- 163
6. वही
7. कार्पोरेट तथा वित्तीय जनसंपर्क, शशिकांत शुक्ल मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पेज-25

8. Kitchen, Philip J and Danny Moss, Marketing and Public Relations: An Exploratory Study, ESOMAR (Website)
9. Fernandez, Joseph, Corporate Communications, A21st Century Primer, Response Books, New Delhi, 2004.Page-128

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

विकेन्द्रित ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका : राजस्थान के विशिष्ट सन्दर्भ में एक अध्ययन

* रश्मि सोमवंशी

सारांश- *राजस्थान में स्वैच्छिक संगठनों का इतिहास काफी पुराना है। इस प्रदेश में भी भारत की तरह आजादी से पूर्व स्वैच्छिक संगठनों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। राजस्थान में भी स्वैच्छिक संगठनों ने अपनी छाप छोड़ी है। यहाँ बंकर राय के नेतृत्व में ''तिलोनिया'' (अजमेर) में किए ग्रामीण विकास के प्रयोग देश तथा विदेश में चर्चित हो चुके हैं। इसी तरह डॉ0 मोहन सिंह मेहता तथा किशोर सन्त द्वारा सेवा मन्दिर, उदयपुर के प्रयास प्रशंसित रहे हैं। विगत दिनों राजेन्द्र सिंह द्वारा संचालित तरुण भारत संघ, अलवर ने भी थानागाजी क्षेत्र में लोक सहभागिता के माध्यम से ग्रामीणों के द्वारा बांध बनाने तक के कदम सफलतापूर्वक उठाए हैं। एक आकलन के अनुसार राजस्थान मे 450 संस्थाएं कार्य कर रही हैं।*

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि भारत की आत्मा ग्रामों में बसती है। इस तथ्य के आधुनिक भारतीय सन्दर्भ में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गांधी ने सर्वप्रथम रूपायित तथा रेखांकित किया था। स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान भी भारत माता की जिस छवि को उभारा गया था वह भी मूलतः ग्रामवासिनी ही रही है। उल्लेखनीय तथ्य है कि महात्मा गांधी, विनोबा भावे, अच्युत पटवर्धन तथा राजनेताओं एवं विचारकों ने विकेन्द्रित ग्रामीण विकासके प्रसंग में अनेक प्रयोग किए थे ताकि ग्रामीण जनसमुदाय ''स्वावलम्बी तथा स्वायत्तशाषी'' बन सकें। यदि हम गांधी की अन्तिम वसीयत को पढ़ें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रपिता गांधी स्वतंत्र भारत में ग्राम स्वराज्य की स्थापना करना चाहते थे।

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के जमाने में गांधीजी ने अपने सम्पूर्ण स्वराज्य की कल्पना के सन्दर्भ में ग्रामीणों की समस्या को बहुत करीब से देखा और समझा परखा था सम्भवतः यह और किसी के लिए सम्भव न था क्योंकि गांधीजी ने ग्रमीणों के बीच रहकर बहुत करीब से उनके दुख सुख को जानने समझने की कोशिश की थी। ग्रामीण समस्याओं को समझा और गांधी ने विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था की बात कही। साथ ही ग्रामीण विकास के प्रशासनिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं आत्म-निर्भर ग्राम-व्यवस्था की बात कही।

गांधी ने जिस ग्राम स्वराज्य की बात कही उसमें परस्पर पूर्ण सहयोग की बात कही गई जो पूरी तरह पूर्ण प्रजातन्त्र पर आधारित था। गांधीजी की राय में आदर्श समाज एक

★ एम. फिल., पी.एच.डी., अलवर, राजस्थान

राज्य रहित लोकतन्त्र है। ग्राम-पंचायतो के पुनर्जीवन की बात कही गई और बुनियादी शिक्षा के अनुसार सच्ची शिक्षा प्राप्त किया हुआ नागरिक ग्राम-स्वराज्य के निर्माण में बहुत सहायता करेगा। ग्राम-स्वराज्य में सरल और सादी अर्थव्यवस्था है, जिसका केन्द्र मनुष्य है, जो शोषण रहित है और विकेन्द्रित है। गांधी की ग्रामीण विकास की अवधारणा और ग्राम स्वराज्य ऐसी रामबाण दवा है जिसका मन्तव्य भारत के सभी गांवों का समग्र विकास करना है जिसमें मनुष्य केन्द्र बिन्दु है।[1]

भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप अन्य देशों की तुलना में भिन्न है। यहाँ गरीबी का स्वरूप एवं क्षेत्र भिन्न प्रकार का है। पिछले वर्षों में विकास के लिए अनेक प्रयत्न किए गए हैं परन्तु इनके कारण नीतियों में संघर्ष एवं विकास, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से ग्राम एक महत्वपूर्ण इकाई है अतः ग्रामीण विकास का सैद्धान्तिक विश्लेषण आवश्यक है। ग्रामीण विकास के लक्ष्य इतने व्यापक एवं असीमित हैं कि उनका मात्रात्मक एवं गुणात्मक विश्लेषण सरलता से सम्भव नहीं है। ग्रामीण विकास से लक्ष्यों को निश्चित एवं स्पष्ट परिभाषा के अभाव में इसकी समीक्षा का कार्य अत्यन्त ही कठिन है।[2]

ग्रामीण विकास की मान्यता का वैज्ञानिक विश्लेषण स्वतन्त्रता के पश्चात् इस दिशा में किए गए प्रयत्नों के साथ प्रारम्भ होता है। स्वतन्त्रता के पूर्व ब्रिटिश शासन काल में इस दिशा में कोई प्रयत्न ही नहीं किया गया। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय ग्रामीण समस्याओं तथा पुनर्निर्माण के बारे में समय-समय पर विचार व्यक्त किए गए। ग्रामीण विकास के क्षेत्र में ये परीक्षण श्री निकेतन संस्था, गुडगांव परीक्षण विकास की मान्यता लम्बे समय से प्रचलित थी। टी. एन. चतुर्वेदी के शब्दों में ग्रामीण विकास एवं सैद्धान्तिक मान्यता एक आदर्श एवं एक राजनीतिक नारे के रूप में हमारे साथ उस समय से जुड़ा हुआ है, जब आर्थिक विकास के सिद्धान्त, विकास मॉडल या योजना प्रणाली अस्तित्व में ही नहीं आई थी।[3]

ग्रामीण विकास में आर्थिक उन्नति, सामाजिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन पर विशेष जोर दिया जाता है। भारतीय संविधान में ग्रामीण विकास की मान्यता को प्रतिपादित किया है जिसमें अनुच्छेद 40, 43, 36, 38 सम्मिलित है। भारतीय संविधान में ग्रामीण विकास से सम्बन्धित आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के दर्शन को अभिव्यक्त किया गया है। अन्त में ग्रामीण विकास की परिभाषा ग्रामीणों का सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास के माध्यम से सर्वांगीण विकास करना है। अध्ययन मे ग्राम्य विकास की अनेक समस्याअुं का उल्लेख किया गया है जिनको समाज के प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग द्वारा दूर किया जा सकता है, साथ ही जब इस कार्य से जुड़े लोगों में सच्ची लगन और कर्तव्य निष्ठा जाग्रत हो जाए।[4]

निःसन्देह भारतवर्ष में आदिकाल से ही दान पुण्य तथा सेवा की एक सुदीर्घ परम्परा रही है, और अनेक राजाओं महाराजाओं, नगर श्रेष्ठियों, साधु-सन्तों तथा समाज सुधारकों ने दीन, दुःखी तथा दरिद्र वर्ग की सहायता का प्रयास करुणा भाव से किया है और उन्होंने पर-पीड़ा को हरने का अभियान चलाया है पर उन सबके बावजूद जनसाधारण दुःख दारिद्रय में जीता रहा। आजादी के पूर्व ही समाज मे व्याप्त समस्याओं को हल करने के लिए भारत मे स्वैच्छिक संगठनों का अस्तित्व रहा है और हजारों संस्था अस्तित्व में आ

गई। स्वैच्छिक संगठनों से तात्पर्य ऐसे सगठनों से है जो स्वेच्छा से समाज की सेवा करना चाहते हैं। उसी समय गांधी ने भी समाज में व्याप्त समस्याओं का हल करने के लिए स्वैच्छिक संगठनों की बात कही थी और गांधीवादी मॉडल पर आधारित गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, गांधी स्मारक निधि, मारवाड़ी रिलिफ संघ, चरखासंघ, रामकृष्ण मिशन, कुष्टनिवारण संघ आदि संस्थाएं पूरी तरह गांधी मॉडल पर आज भी आधारित हैं। गांधीयन मॉडल पर आधारित स्वैच्छिक संगठन अपने श्रम व अपनी सामर्थ्य से विकास करना चाहती हैं। भारत के विकास में इन संगठनों ने अपने सामर्थ्य के अनुसार विकास कार्यों में भागीदारी निभायी है।

सौभाग्य से स्वतन्त्र भारत के विभिन्न ग्राम्याँचलों में अनेक गैर-सरकारी स्वैच्छिक संगठनों ने ग्रामीण विकास के क्षेत्र में महत्ती भूमिका निभाई है। जिसकी गम्भीरता को वरिष्ठ राजनीति शास्त्री तथा लोकायन संस्था के संयोजक आचार्य रजनी कोठारी (रूरल डेवलपमैन्ट अल्टरनेटिव पर्सपैक्टिव-रमेश के अरोड़ा एवं राकेश हूजा सम्पादित कृति-जयपुर 1996) ने अपने आलेखों में स्वीकार किया है। दिल्ली विश्वविद्यालय के आचार्य डा0 नूरजहाँ बावा ने विकास में गैर सरकारी या स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका, सिद्धांत एवं व्यवहार पर एक दिशा बोधक कृति को सम्पादित किया गया है। जिसमें अनेक राजनीति शास्त्रियों, लोकप्रशासन विशेषज्ञों, समाजशास्त्रियों, विधिशास्त्रियों तथा सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने योगदान दिया है। प्रायः सभी ग्रामीण विकास में लोक सहभागिता की भूमिका को स्वीकार करते हैं और इस प्रसंग में स्वैच्छिक संगठन ही वांछित दिशा निर्देश दे सकते हैं। आजकल भारतवर्ष में सुन्दरलाल बहुगुणा, चण्डीदास भट्ट, मेघा पाटकर, अन्ना हजारे, वन्दना शिवा, अनिल अग्रवाल तथा बंकर राय के योगदान को कौन नहीं जानता है।

अध्ययन पद्धति-

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः प्रश्नावलियों, संगठनों के कार्य-स्थल पर जाकर उनके कार्य का अवलोकन, ग्रामीणों से स्वैच्छिक संगठनों के प्रभाव से उनके जीवन पर सकारात्मक प्रभावों का अध्ययन, उनसे व्यक्तिगत रूप से प्रश्न पूछना, संगठनों का तुलनात्मक अध्ययन, स्वैच्छिक संगठनों की प्रगति रिपोर्ट, फोल्डर, कार्यक्रमों की रिपोर्ट व विभिन्न स्वैच्छिक संगठनों के साहित्य का अध्ययन किया।

इस अध्ययन के समय गाँव के लोगों से मिलकर उनसे गाँव विकास के लिए स्वैच्छिक संगठन द्वारा किए गए प्रयासों की जानकारी ली गयी है। संगठन द्वारा किए गए कार्यों से उनके जीवन में आए बदलाव की जानकारी प्राप्त की गई।

स्वैच्छिक संगठनों में जाकर उनके कार्य करने के तरीकों को देखा है। संस्थान के प्रमुख अधिकारी निदेशक या सचिव से साक्षात्कार लिया गया है जिसमें यह जानने का प्रयास किया गया है कि उन्होंने स्वैच्छिक कार्य के दौरान आने वाली कठिनाइयों व सरकार से उनकी अपेक्षाओं व उनकी भविष्य की योजनाओं को ज्ञात किया।

अध्ययन का उद्देश्य-

* विकेन्द्रित ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका की जानकारी प्राप्त करना।
* स्वैच्छिक संगठन अपने कार्य के दौरान किन समस्याओं का सामना करते हैं उनकी जानकारी प्राप्त करना, सुझाव देना और सरकार से संगठन की अपेक्षाओं का

अध्ययन करना।

राजस्थान में स्वैच्छिक संगठनों का इतिहास काफी पुराना है इस प्रदेश में भी भारत की तरह आजादी से पूर्व स्वैच्छिक संगठनों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। राजस्थान में भी स्वैच्छिक संगठनों ने अपनी छाप छोड़ी है। यहाँ बंकर राय के नेतृत्व में ''तिलोनिया'' (अजमेर) में किए ग्रामीण विकास के प्रयोग देश तथा विदेश में चर्चित हो चुके हैं। इसी तरह डॉ0 मोहन सिंह मेहता तथा किशोर सन्त द्वारा सेवा मन्दिर, उदयपुर के प्रयास प्रशंसित रहे हैं। विगत दिनों राजेन्द्र सिंह द्वारा संचालित तरुण भारत संघ, अलवर ने भी थानागाजी क्षेत्र में लोक सहभागिता के माध्यम से ग्रामीणों के द्वारा बांध बनाने तक के कदम सफलतापूर्वक उठाए हैं। एक आकलन के अनुसार राजस्थान मे 450 संस्थाएं कार्य कर रही हैं।

इन स्वैच्छिक संगठनों की स्थापना करने का मूल उद्देश्य यही था कि देश ने आजादी तो प्राप्त कर ली है और आगे किस तरह आजादी के बाद के भारत का समग्र विकास किया जा सके। इन संस्थाओं की स्थापना का मन्तव्य था कि गांधीवादी मूल्यों को अपनाते हुए स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से भारत का विकास किया जा सके। सम्पूर्ण राजस्थान में स्वैच्छिक संगठनों का जाल फैला हुआ है। यह संस्थाए अपने क्षेत्र की समस्याओं व आवश्यकताओं के अनुसार कार्य कर रही हैं। राजस्थान में आस्था, सेवा-मन्दिर उदयपुर, ग्रामीण विकास समिति जोधपुर, तरुण भारत संघ, उपकार थानागाजी, मेवाड़ शिक्षा एवं विकास संस्थान, शुभम महिला प्रशिक्षण संस्थान अलवर, लूपिन भरतपुर, ग्राम भारती समिति, सिकोन डिकोन जयपुर, डॉ0 कन्हैया लाल गांधी मेमोरियल फाउण्डेशन डूंगरपुर रोग निदान सेवा संघ ट्रस्ट बीकानेर आदि संस्थाएं राजस्थान के ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। जो इस प्रकार हैं -

* शहरी कच्ची बस्तियों और गांव की गरीब महिलाओं का सामाजिक व आर्थिक उत्थान करना,
* ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना,
* ग्रामीण क्षेत्रों की गरीब महिलाओं के समूहों का गठन और उन्हें स्वरोजगार की ओर अग्रसर करना,
* गरीब ग्रामीण महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों का अधिकाधिक गठन एवं संवर्द्धन करना,
* महिला विकास में महिला संगठनों का बढ़ावा देना उनमें जागरूकता लाना,
* सरकार की आर्थिक सामाजिक, स्वास्थ्य व परिवार कल्याण तथा शिक्षा-योजनाओं और स्वच्छ पर्यावरण संबंधी योजनाओं व अभिभावकों की कामयाबी के लिए सहयोग प्रदान करना,
* ग्रामीण गरीब महिलाओं का आर्थिक विकास व स्वरोजगार कार्यक्रम को बढ़ावा देना,
* नशाबंदी हेतु जन चेतना और जागृति के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करना,
* महिलाओं को तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें स्वावलम्बन की दिशा में आगे बढ़ाना,
* महिलाओं की समाज में निर्णायक भूमिका को आगे लाने के लिए जागृति पैदा

करना,

* ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि सुधार एवं जल संग्रहण व जल संरक्षण हेतु चेतना के कार्यक्रम आयोजित करना,
* कच्ची बस्तियों के बालकों व महिलाओं के लिए शैक्षणिक चेतना का प्रसार करना,
* महिला समूह बनाकर उनमें बचत की आदत डालना,
* कृषि एवं बागवानी विकास हेतु कृषकों एवं ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षण देना और तकनीकी की जानकारी देना,
* ग्रामीण शिक्षा के कार्यक्रमों में साक्षरता, अनौपचारिक शिक्षा में सहायता करना,
* मातृ शिशु सुरक्षा व अन्य बीमारीयों के प्रति चेतना के कार्यक्रम करना,
* समाज कल्याण एवं राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रम आयोजित करना,
* पर्यावरण हेतु जन जागरूकता एवं जन चेतना प्रदान करना,
* सम्पूर्ण कार्य ग्रामीण लोगों की सहमति व विचार विमर्श से करना।

प्रमुख सुझाव एंव समस्यायें–

प्रशासन का सहयोग मिलना चाहिए–

यह देखने में आया है कि बहुत सी स्वैच्छिक संगठनों को प्रशासन से सहयोग नहीं मिलता, छोटी-छोटी बातों के लिए संस्था को परेशान किया जाता है उनकी उपेक्षा की जाती है जो उचित नहीं है। प्रशासन के द्वारा स्वैच्छिक संगठनों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाना चाहिए क्योंकि दोनों का उद्देश्य जनता की सेवा करना है।

जनसहयोग मिलना चाहिए–

स्वैच्छिक संगठन जनता की सेवा करती है अत: जब तक विकास के कार्यों में जनता का सहयोग नहीं मिलेगा संस्था अपना कार्य नहीं कर सकती। जनता इस संदर्भ में अपने विचार बता सकती है, अपनी परेशानियां बता सकती है, जिससे संस्था अपना कार्य आगे बढ़ा सकती है।

आर्थिक सहयोग मिलना चाहिए–

स्वैच्छिक संगठन समाज को नई दिशा देने के लिए बहुत कुछ करना चाहते हैं परन्तु आर्थिक कमजोरी के कारण संस्थाओं की योजनाएं कागजी रह जाती हैं जो उचित नहीं है अत: आर्थिक सहायता जनता, राज्य व केन्द्र सरकार द्वारा मिलनी चाहिए। जिससे स्वैच्छिक संगठन अपनी युजनाउ को क्रियान्वित कर सकें।

भ्रष्ट संस्थाओं का पता लगाना चाहिए–

आज फेशनलबल स्वैच्छिक संगठनों का अस्तित्व तेजी से सामने आ रहा है। बहुत सी संस्थाएं सिर्फ कागजी हैं जो सिर्फ पैसा ऐंठना चाहती हैं, करना कुछ नहीं चाहती है। साथ ही वे संस्थाएं जो प्रसिद्धि के लिए अस्तित्व में आई हैं, समाज के लिए कुछ नहीं करना चाहती। ऐसी संस्थाओं की पहचान करके उनकी मान्यता रद्द की जानी चाहिए।

मार्गदर्शन मिलना चाहिए–

समय-समय पर केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा स्वैच्छिक संगठनों का मार्गदर्शन किया जाना चाहिए। देखने में आया है कि केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा इन संस्थाओं को मार्गदर्शन नहीं मिल रहा है जो उचित नहीं है क्योंकि केन्द्र व राज्य सरकार के मार्गदर्शन

द्वारा स्वैच्छिक संगठन अपना कार्य प्रभावी रूप से करेगी।

विभागों में तालमेल–

ग्रामीण विकास से संबंधित सभी विभागों एवं अधिकारियों में उचित समन्वय और तालमेल की जरूरत है, जिससे सही स्वैच्छिक संगठनों को बढ़ावा मिले क्योंकि यह देखा गया है कि ग्रामीण विकास से सम्बंधित सभी विभागों एवं अधिकारियों मे उचित समन्वय और तालमेल नहीं होता जिसका दुष्परिणाम स्वैच्छिक संगठनों को भुगतना पड़ता है।

प्रशिक्षण की सुविधा–

आवश्यकता पड़ने पर इन एजेन्सियों के लिए विशेष कार्यों का प्रशिक्षण व इसके लिए सुविधाएं दी जानी चाहिए क्योंकि इन संस्थाओं के पास अपने कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण के लिए धन का अभाव होता है अतः केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा इन संस्थाओं को प्रशिक्षण के लिए सुविधाएं दी जानी चाहिए।

सरकार की ओर से सहायता–

सरकार की ओर से इन्हें पैम्प्लेट्स, पुस्तिकाएं जैसी प्रचार सामग्री मिलनी चाहिए। लेकिन प्रचार माध्यमों, पत्र-पत्रिकाओं व अन्य माध्यमों से प्रचार का काम सरकार को करना चाहिए। प्रचार का काम काफी महंगा होता है और यह खर्च केवल सरकार ही कर सकती है।

उत्तरदायित्व–

इन एजेन्सियों की जवाबदेही की व्यवस्था भी होनी चाहिए। अच्छे काम के लिए उनकी सराहना की जानी चाहिए। साथ ही केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा उन संस्थाओं को पुरस्कार दिया जाना चाहिए जिनका कार्य श्रेष्ठ है।

कामकाज की समीक्षा–

केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा गैर-सरकारी एजेन्सियों को आगे आवंटन व कार्य सौंपने से पहले उनके कामकाज की समीक्षा करनी चाहिए। परियोजनाओं की सफलता व धन के सदुपयोग को सुनिश्चित करने के लिए ऐसा करना बहुत आवश्यक है। इस अधिकार से संगठन सजग होकर कार्य करेंगी।

सरकार द्वारा प्रोत्साहन–

सरकार को इन एजेन्सियों का अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिए। जो संगठन अच्छा काम कर रहे हैं, उन्हें मजबूत बनाया जाना चाहिए व समयबद्ध परिणाम प्राप्त करने के लिए नए स्वैच्छिक संगठनों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

सामुदायिक विकास के नाम से ग्रामीण विकास कार्यक्रम जो 1950 के दशक में जोर- शोर से आजादी के बाद जिस जन-सहयोग से चला था लगता है वैसे ही माहौल की फिर से जरूरत है। विकास की प्रक्रिया जब स्वैच्छिक संस्थाओं। के प्रयास से चलने लगती है, चाहे वह ग्रामीण विकास हो, रोजगार जुटाना हो, पर्यावरण सुधार हो, स्वास्थ्य, बच्चों व महिला विकास कार्यक्रम पर आधारित हो, तो सभी ग्रामवासी अपने मतभेद भुलाकर एक जुट हों, इसमे शामिल हो जाते है। स्वैच्छिक संगठन जाने-अनजाने मे गॉवों को एकसूत्र मे बाँधने का प्रयास करते हैं। इसी के कारण ग्रामीण विकास मे इन्हे भाग लेना चाहिए और सरकार व समाज को उनके प्रयासों मे प्रोत्साहित करना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि सुझावों को जितना अधिक व्यावहारिक बनाया

जायेगा व क्रियान्वयन किया जाऐगा स्वैच्छिक संगठन विकास में अपनी उतनी ही भागीदारी निभा पाएगी। पिछले दशक में स्वैच्छिक संगठनों की भागीदारी बढ़ी है। ये संस्थाएं ग्रामीण प्रक्रिया में जन-सहयोग के साथ तत्पर हैं। सफलता निर्भर करेगी स्वैच्छिक संगठनों की छवि धूमिल न होने देने के लिए किए गये उन्हीं के प्रयासों तथा सरकार द्वारा उन पर भरोसा व भरपूर सहयोग पर। स्वैच्छिक संस्थाओं को मजबूत बनकर ग्रामीण विकास के प्रभावी क्रियान्वयन में अपनी भागीदारी निभानी ही होगी। सरकार को उन्हें क्षमता निर्माण में सहयोग देकर सभी स्तरों पर साथ लेना ही होगा तभी गरीबी उन्मूलन तथा ग्राम विकास की अन्य समस्याओं पर सफलता पाई जा सकेगी।[5]

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. ''डॉ.रश्मि सोमवंशी'', ''विकेन्द्रित ग्रामीण विकास, लोक सहभागिता एवं स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका : राजस्थान के विशिष्ट सन्दर्भ में एक गहन अध्ययन'' पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध, 2005, पृष्ठ - 329 - 330
2. डॉ.बी.एम.चितलंगी, ग्रामीण विकासः सैद्धान्तिक पक्ष, कुरूक्षेत्र, मार्च 1999, पृष्ठ - 26
3. योजना, फरवरी-मार्च 1997, ग्रामीण विकास मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 40-42
4. नारायन. ई.ए., ''वोलण्टरी ओरगेनाइजेशन एण्ड रूरल डेवलपमेन्ट इन इण्डिया, उप्पल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, वर्ष 1996.
5. ''डॉ.रश्मि सोमवंशी'', ''विकेन्द्रित ग्रामीण विकास, लोक सहभागिता एवं स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका : राजस्थान के विशिष्ट सन्दर्भ में एक गहन अध्ययन'' पी.एच.डी. शोध प्रबन्ध, 2005, पृष्ठ - 331 335

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जति के वृद्धजनों के सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य

* वसुधा कुलश्रेष्ठ

सारांश- परम्परागत समाज में परिवार एक ऐसा प्राकृतिक एवं प्रेरणाप्रद सामाजिक संस्था है जो वृद्धों के देख-रेख और उनके पोषण में अपना रचनात्मक योगदान प्रदान करता है। साधारणतया परिवार में वृद्धों की देख-रेख पुत्र-पुत्रियाँ एवं पुत्र बधुँए करती है। वृद्धो को इस प्रकार की देख-रेख एंव सुरक्षा परिवार के अन्तगर्त बने हुए सांवेगिक गाँठो एंव आपसी सम्बन्धो के माध्यम से दिया जाता है। वृद्धो की देख-रेख के पीछे सिर्फ रक्त सम्बन्धो एंव परिवारिक सम्बन्धो या वैवाहिक सम्बन्ध का योगदान नही होता वरन् सामाजिक मूल्य प्रतिमान एंव व्यवहारो का प्रतिफल होता है। जिनके परिणाम स्वरूप व्यक्ति उस प्रकार के व्यवहारो का प्रतिफल होता है जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति उस प्रकार के व्यवहार के लिए वाध्य होता है। वृद्धो की देख-रेख एक नैतिक जिम्मेदारी है और उनके आर्शीवचन से लोक परलोक का रास्ता सरल हो जाता है परन्तु परम्परागत गठबंधन अनेक प्रकार के प्रभाव के परिणाम स्वरूप वृद्धजनो एवं युवाओ के मध्य धीरे-धीरे दूरियो का निर्माण कर रहा है। और वृद्धो एंव युवाओ के अन्तः सम्बन्ध दृढ़ होने की जगह उत्तरोत्तर निर्बल होत जा रहे है। अनेक प्रकार के सामाजिक आर्थिक शक्तियाँ एंव सांस्कृतिक परिवर्तन समसामायिक समाज मे घटित हो रहे है। परिणाम स्वरूप युवाओ मे वृद्धो के प्रति वह दृष्टि कोण नही है जो पहले था।

परिवारिक एवम् सामाजिक सम्बन्ध आर्थिक स्वार्थो पूर्ति से जुड़ते जा रहे है। व्यक्तिवादी सोच और आर्थिक स्वार्थी की प्रधानता के कारण वृद्धो की सामाजिक आर्थिक समस्या के साथ ही साथ वृद्धजनो की उपेक्षा और समस्या और अधिक गम्भीर होती जा रही है। विश्व की तेजी से बदलती आर्थिक सरंचना ने सभी सामाजिक एवं सांस्कृतिक मुल्यो को बदल दिया है। युवा वर्ग वर्तमान जीवन मुल्यो एवं धारणाओ को अपना रहा है और वृद्धजन अपने विचारो का त्यागने मे अपने आपको असमर्थ पा रहे है।

समसामायिक भारतीय समाज मे तीव्र गति से विभिन्न क्षेत्रो मे सामाजिक रूपान्तर की प्रक्रिया खराब हो रही है। समाज के प्रत्येक प्रभाग के लोग किसी न किसी रूप मे परिर्वतन का अनुभव कर रहे है। इस परिपेक्ष्य मे वृद्धो की जनसंख्या भी अपवाद नही है। वृद्धो के जीवन की अवधि मे प्रचुर विस्तार उत्तम स्वास्थ्य एवं चिकित्सीय सुविधाये विस्तृत सामाजिक सुरक्षा एवं वैधानिक अधिकार की उपलब्धि आदि के परिणाम रूप वृद्ध व्यक्ति के प्रस्थिति एवम् भूमिका मे परिवर्तन हो रहा है। यद्यपि भारतीय समाज मे

★ एम.जी. (पी.जी.) कॉलेज, फिरोजाबाद

वृद्धो के प्रति वह सम्मान एवं झुकाव नही है जो पहले था। अनेक प्रकार के परिवर्तनोन्मुख सामाजिक प्रक्रियाओ के कारण वृद्धो के सामाजिक परिवेश मे परिवर्तन के लक्षण दृष्टि गोचर होने लगे है।

किसी अर्थव्यवस्था का विशेष उम्र समूह पर प्रभाव कर्मियो की उत्पादन क्षमता व आय पर निर्भर है अतः हमे जीवन भर की आय तथा वृद्धावस्था मे होने वाली आय पर ध्यान देना होगा। आर्थिक प्रगति की भूमिका इस सम्बन्ध मे विशेष प्रांसगिक है। कार्यशील जीवन मे आय के स्तर का सेवानिवृत्ति काल मे आय से निश्चित सम्बन्ध होता है। पिछड़ी जाति एवम् अनुसूचित जाति के वृद्धो के सामाजिक अन्त क्रिया सामाजिक अभियोजन एवं उन सामाजिक सन्दर्भो का विश्लेषण किया गया है।

वृद्धो से इस बात की अपेक्षा की जाने लगी है कि वह अपने सामाजिक पृष्ठभूमि मे होने वाले परिवर्तन के साथ किसी न किसी प्रकार का सामन्जस्य स्थापित करे परन्तु समायोजन की प्रक्रिया के साथ तालमेल न बैठने के साथ वृद्ध कभी-कभी उभय अवस्था मे फंस जाते है। जिसका परिणाम यह होता है। कि वह परिवार एवं सामाजिक परिवेश के उपेक्षाओ के अनुरूप व्यवहार नही कर पाता। प्रस्तुत अध्यन के अन्तगर्त पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जाति के वृद्धो के सामाजिक, आर्थिक अभियोजन का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया वृद्धावस्था अनेक प्रकार की समस्याओ से आक्रान्त रहता है इन समस्याओ मे सबसे कठिन समस्या उनके स्वास्थ्य एवं चिकित्सीय देख-रेख की होती है। वृद्ध अपने चिकित्सीय देख-रेख मे दूसरो से बहुत अपेक्षा करता है। वह आशा और निराशाओ के बीच मे स्वंय को एक निरीह प्राणी के रूप मे पाता है। वृद्धो को अपने परिवार के सदस्यो के साथ ही साथ अपने स्वजनो से बहुत अपेक्षायें होती है। और उन अपेक्षाओ को पूरा करने के लिए वह परिस्थिति विशेष मे अपनी विवशता प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। अध्ययन के अन्तगर्त वृद्धो के धार्मिक चेतना एवं परिवर्तित अभिवृति का विश्लेषण किया गया है। यह कटु सत्य है। कि वृद्धावस्था मे धार्मिक-चेतना के प्रति वृद्धो के उन्मुखता को अस्वीकार नही किया जा सकता। वृद्ध जानता है कि जीवन का अन्तिम पड़ाव मृत्यु है। अतः मृत्यु के यर्थाथ का समझते हुए भी वह उससे डरता है। और घबड़ाता है। ऐसी स्थिति मे वृद्धो से सम्बन्धित अनेक प्रकार के अभिवृत्तात्मक उन्मेष को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। इस तथ्य का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति मे वृद्धो की बहुत ही दयनीय स्थिति है अतः अध्ययन के अन्तर्गत उनके उन पक्षो को प्रकाश मे लाने का प्रयास किया जाता है जो अभी तक तथ्यगत आधार पर प्रस्तुत नही हुए थे। भारतीय समाज मे वृद्धो के समूह मे ऐसे लोग भी है। जो परिवर्तित विभिन्न प्रकार के स्थितियो मे स्वंय को अभियोजित कर लेते है और उसी के अनुरूप व्यवहार करने का प्रयास करते है। जिन वृद्धो मे इस प्रकार की प्रवृत्ति के साथ समायोजन की समस्या है उन्हे अनेक प्रकार की कठिनाईयो का सामना करने के लिए तत्पर रहना पड़ता है।

पिछड़ी जाति और अनुसूचित जाति वृद्धजनो के सामाजिक आर्थिक परिपेक्ष्य के अन्तगर्त वृद्धो के सामाजिक अन्तः क्रिया, सामाजिक परिपेक्ष्य एवं उन सामाजिक सन्दर्भो का विश्लेषण किया गया है जिसके अन्तगर्त वृद्ध अपने परिवार सदस्यो, रिश्तेदारो पड़ोसियो, मित्रो आदि से अतः क्रिया करते हुए अपने सम्बन्धो को एकता प्रदान करते है।

अध्ययन से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि वे किस प्रकार से अन्य लोगो पर आश्रित होने के लिए विवश है स्वंय को परिवर्तित मूल्यो के साथ वे किस प्रकार अभियोजित करते है। अध्ययन के अन्दर यह भी विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। कि किस प्रकार सम्प्रेषण के आधुनिक साधन उनके जीवन शैली एवं संज्ञानात्मकता को प्रभावित करते है।

सन् 1950 मे दुनिया भर मे 60 वर्ष और उससे ज्यादा आयु के लोगो की संख्या लगभग 20 करोड़ थी सन् 1975 तक उनकी संख्या बढ़कर लगभग 35 करोड़ हो गयी। वर्ष 2025 तक यह संख्या बढ़कर लगभग एक अरब दस करोड़ हो जाने की सम्भावना है। यह संख्या 1975 की तुलना मे लगभग 224 प्रतिशत है। जब 19 वी सदी की शुरूआत हुई थी। उस समय पूरे विश्व की जनसंख्या लगभग 1.6 अरब थी। औसत आयु अमरीका मे लगभग 67 वर्ष इटली इटली मे लगभग 44 वर्ष जापान मे लगभग 64 वर्ष मैक्सिको मे लगभग 33 वर्ष आंकी गई थी इस सदी के खत्म होते-होते पूरे विश्व की जनसंख्या लगभग 6 अरब हो जाएगी और औसत आयु बढ़कर अमरीका मे लगभग 76 वर्ष जापान मे लगभग 80 वर्ष इटली मे लगभग 78 वर्ष और मैक्सिको मे लगभग 74 वर्ष हो जाएगी।

इस रिपोर्ट मे इस बात का खुलासा किया गया है। कि 60 वर्ष से अधिक उम्र के लोगो की संख्या वर्ष 2025 तक बढ़कर लगभग 72 प्रतिशत यानी तीन चौथाई हो जाएगी तब पूरे विश्व मे बूढ़े ही बूढ़े नजर आएंगे। वृद्धावस्था के अनुपात और संख्या मे तेजी आने के साथ-साथ कुल आबादी की आयु सरंचना भी बदलती है। जनसंख्या मे बच्चो का अनुपात घटने से वृद्धो का अनुपात बढ़ जाता है। इस तरह संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ तथ्य के अनुसार विकासशील क्षेत्रो मे 15 वर्ष से कम आयु की आबादी 1975 मे कुल जनसंख्या के लगभग 41 प्रतिशत के औसत से घटकर वर्ष 2025 मे 26 प्रतिशत ही रह जाने के आसार है। उन्ही क्षेत्रो मे 60 वर्ष और उससे अधिक आयु वालो की संख्या सन् 1975 के 6 प्रतिशत के मुकाबले मे बढ़कर वर्ष 2025 मे 12 प्रतिशत तक हो जाने के अनुमान है। विकसित देशो मे 15 वर्ष से कम आयु वालो की संख्या 1975 मे 25 प्रतिशत के मुकाबले 2000 मे लगभग 21 प्रतिशत और 2025 मे 20 प्रतिशत रह जाएगी। लेकिन 60 वर्ष और उससे अधिक आयु वालो की संख्या मे कुल जनसंख्या के अनुपात मे सन् 1975 मे 15 प्रतिशत से बढ़कर 2025 मे 23 प्रतिशत तक हो जाने के लक्षण है। बढ़ती वृद्धो की जनसंख्या से जो चिन्ताएँ व्यक्त की जा रही है। उससे ऐसा लग रहा है कि इस सदी के पूवर्द्धि मे भयावह सामाजिक आस्थिता पैदा हो जाएगी और सदी के अन्त मे बुजुर्गो की संख्या लगभग साढ़े पांच करोड़ से ऊपर हो जाएगी। आकड़ो पर नजर डाले तो पता चलता है कि 1981 से 1991 के बीच जहाँ कुल आबादी मे लगभग 19.03 प्रतिशत की वृद्धि हुई वही 60 से ऊपर की उम्र वाले वृद्धो की संख्या मे लगभग 31.31 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् 1975 तक 2025 के बीच जन्म के समय जीवन जीने की संभावना बढ़ने से 60 वर्ष की आयु से एक साल ज्यादा जिंदा रहने के भी आसार बढ़ने की संभावना है। विकासशील देशो मे अनुमानित बढ़ोतरी लगभग ढाई वर्ष तक होगी। रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान स्थिति जारी रही तो महिला पुरूष का अनुपात असन्तुलित बना रहेगा। प्रति 100 महिलाओ के मुकाबले पुरूषो की यह दर जो 1975 मे 60-69 वर्ष आयु

वर्ग मे 74 प्रतिशत थी सन् 2025 मे 78 एवं 80 से ऊपर के आयु वर्ग के लोगो का प्रतिशत 48 से बढ़कर 50 से 60 के बीच हो जाएगी, विश्व स्तर पर 1.7 प्रतिशत वार्षिक दर से जनसंख्या मे वृद्धि हो रही है। जबकि वृद्धजनो मे यह संख्या 2.2 की दर से बढ़ रही है।

वृद्धजनों की समस्याओ को हल कर करने की दिषा मे कुछ इस प्रकार रही है 65 वर्श या उससे अधिक आयु वर्ग के बेसहारा बुजुर्गो को अन्नपूर्णा योजना के अन्तगर्त प्रति माह दस किलो खाद्यान्न निषुल्क दिया जाता है। यह खाद्यान्न उन लोगो को दिया जाता है। जिन्हे कोई पेंशन नही मिल रही है। आयकर अधिनियम के अन्तगर्त बुजुर्ग नागरिको के लिए आयकर मे रियासत दी जाती है। अपनी बचत योजनाओ के माध्यम मे भारतीय जीवन बीमा निगम भी वरिश्ठ नागरिको को सभी रेलगाड़ियो के सभी श्रेणियो के किराये मे लगभग 30 प्रतिषत की छूट दी जाती है।

समाजशास्त्री ढंग से यह कहा जा सकता है कि वृद्ध व्यक्ति को साधारणतय पूर्ण रूप से परिवार एवं इनके सदस्यो पर आश्रित नही होना चाहिए। उन्हें परिवर्तित परिस्थिति मे यथार्थ उन्मोषित होने का प्रयास करना चाहिए। अगर वे उभरते हुए सामाजिक सांकृतिक पर्यावरण के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष समझौता नही कर पाते तो परिवार उनकी देख-रेख एवं सुरक्षा की मेरूदण्ड नही कर उनकी देख-रेख बन सकता। अतः यह आवश्यक है कि वृद्धो के आवश्यकता एवं आकाक्षाओ के अनुरूप परिवार अपनी भूमिका प्रतिपादित भी कर सकता है और नही भी कर सकता है अनेक प्रकार परिवर्तन के प्रभाव के परिणाम स्वरूप वृद्ध व्यक्तियो के देख-रेख व्यवस्था तो कर सकता है परन्तु इस व्यवस्था मे यदि आर्थिक आयामो का सक्रिय सहयोग नही हुआ तो परिवार वृद्धो के अनेक प्रकार के अपेक्षित सहयोग से भी मुहँ मोड़ सकता है अतः वर्तमान परिपेक्ष्य मे परिवार द्वारा प्रदत्त अपेक्षित सहयोग का अभाव प्रत्येक स्तर के वृद्धो के समक्ष अनेक प्रकार की कठिनाईयो को उत्पन्न कर रहा है।

अन्त मे कह सकते है कि यदि वृद्धों के समसामयिक समस्याओ का निराकरण करना है तो परिवार के अन्तः सम्बन्धो के प्रकृति का पुनः सरंचनात्मक प्रारूप निर्धारित करना आवश्यक होगा।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Joseph J. (1991) Aged in India - Problems and personality, Allahabad chugh publication.
2. Desai, K.G and Naik R.D (1983)- Aging in India, Bombay - Tata Institute of Social Sciences.
3. Dr. M.L Gupta and Vimlash Gupta - Sociology.
4. Carver, V. and Liddiad, P (1978)-An Aging F. Population Kent-Hodden and Stoughton.
5. Tout, K (1989)-Aging in developing countries, New York oxford. University press.
6. Visaya Kumar, S. (1991)- Family life and socio- economic problem of the aged, new Delhi, Ashish publishing House.
7. Srivastava, R.C. (1994) the problem of the old age, New Delhi classical publishing company.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

संचार क्रान्ति एवं अपराध भारत के परिपेक्ष्य में

* रत्नावली गर्ग
** पारूल कुमारी

सारांश– *अपराध सृजनात्मक मानव शक्ति का नकारात्मक प्रवाह है जिससे समाज के विकास की गति बाधित होती है। मानव अपने शान व संसाधनों का प्रयोग कर निरंतर अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति को सुलभ व आसान बनाने का प्रयास करता रहता है। आज विकास की ओर उन्नमुख सामाजिक प्रक्रिया नूतन व परातन के बीच अन्तर उत्पन्न करती है। मानव विकास की प्रक्रिया के प्रारंभिक स्तर से ही निरन्तरता बनाये परिवर्तन की प्रक्रिया विकास की गति से सापेक्ष तीव्र से तीव्रता की ओर है। जो स्थापित सामाजिक सम्बन्धों में तनाव, असामंजस्य, असन्तुलन को बढ़ावा देती है। आर्थिक, प्रोद्योगिकी, भौगोलिक विकास के प्रतिफल सामाजिक संस्कृति, धार्मिक व राजनैतिक व्यवस्थाओं को प्रभावित करते है। विकास के परिणाम स्वरूप उत्पन्न लाभों का विवरण असमान है। अशिक्षा, निर्धनता, भुखमरी निम्न वर्ग व जाति, नगरों से दूरी आदि कारक विकास के लाभों को प्राप्त करने की प्रक्रिया से नकारात्मक रूप से सम्बन्धित है। एक ओर जहाँ संचार क्रान्ति के आने से नगर विकास के प्रमुख केन्द्र है वही दूसरी ओर कृषि क्षेत्र में बढ़ते प्रौद्योगिक तकनीकी के उपयोग ने मानवीय शक्ति के उपयोग को कम किया है। नगरीय क्षेत्र में अत्यधिक जनसंख्या धनत्व से मलिन बस्तियों का विस्तार बढ़ा है जिससे अपराधों की संख्या में तीव्र वृद्धि आयी है साधनहीन श्रम आधारित रोजगार की खोज में नगरों में आये मानव व मानव समूह एक ओर अपने पहले सामाजिक परिवेश से अलग होकर उस सामाजिक परिवेश की नियन्त्रणकारी समाजिक शक्तियों से मुक्त हो जाते है तथा अपराध की ओर अग्रसर होते है। इंटरनेट ने समूचे विश्व को अपनी मुट्ठी में कैद कर लिया है यह संचार क्रान्ति का ऐसा सुगम व तेज माध्यम है जिससे हम कुछ ही पलों में अपने संदेशों का आदान-प्रदान कर सकते है एक ओर जहाँ व्यक्तियों को हर क्षेत्र में सफलता मिली वही अपराधों की संख्या में भी वृद्धि हुई। मनु ने धर्मशास्त्र में आठ भयों में एक भय चोरी बताया है जिससे कि मनुष्य भयभीत रहता है। इसी प्रकार चाणक्य का समय, यद्यपि स्वर्ण युग था लेकिन अपराधों की रोकथाम को अनेक कानून बनाये गये जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय भी अपराध होते थे।*

अपराध का प्रारूप एवं परिभाषा चाहे कुछ भी रही हो यह सदैव समाज में विद्यमान रहा है अपराध एवं अपराधी एक दूसरे के पूरक है संचार क्रान्ति ने आज समूचे विश्व में अपराधों को बढ़ावा दिया है इंटरनेट से ऑनलाईन संपर्क तेज और आसान हो गया है

★ सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, रमा जैन कन्या महाविद्यालय, नजीबाबाद
★★ छात्रा एम0ए0 फाईनल, इग्नू।

इसकी सहायता से मानव विश्व मे कुछ भी जानकारी प्राप्त कर सकता है। हम एक साथ असली और नकीली मतलब दो दुनिया में जी रहे है, तकनीकी भाषा में इसे वर्चुवल वर्ल्ड भी कहते है। संचार क्रान्ति व टेक्नोलॉजी के आज के समय में देश मे हर वर्ष करीब डेढ़ लाख साईबर अपराध दर्ज हो रहे है। संचार क्रान्ति से साइबर दुनिया में चौगुना बदलाव हो रहा है। दुनिया में पांच हजार साल में जितना बदलाव हुआ उतना बदलाव साईबर दुनिया में बीते पांच वर्ष में ही हो गया है।

संचार क्रान्ति के इस युग में फेसबुक, वाट्सएप, इंटरनेट, मोबाईल फोन का प्रयोग करके अपराधों को बढ़ावा दिया जा रहा है।

अपराधों का वर्गीकरण– अपराधी व्यवहार समरूपीय नही है इसलिए अपराधों का वर्गीकरण करने के कई प्रयास किये गये है-

अ. इलियट एवं मैरिल का वर्गीकरण- इलियट एवं मैरिल ने अपराध को 'अपराध की गहनता' के आधार पर दो श्रेणियों में विभाजित किया है-

1. कदाचार अथवा कम गम्भीर अपराध
2. महापराध अथवा गम्भीर अपराध

ब. हेज का वर्गीकरण- हेज ने 'अपराध किसके विरूद्व किया जाता है' को आधार मानकर अपराध को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है-

1. व्यवस्था के विरूद्व अपराध
2. सम्पत्ति के विरूद्व अपराध
3. व्यक्ति के विरूद्व अपराध

स. बोंगर का वर्गीकरण- बोंगर ने 'अपराध की प्रकृति' के आधार पर अपराधों को चार श्रेणियों में विभाजित किया है-

1. आर्थिक अपराध
2. यौन अपराध
3. राजनीतिक अपराध
4. विवधि अपराध

द. लेमर्ट का वर्गीकरण-

1. परिस्थितीय अपराध
2. नियोजित अपराध
3. विश्वास के विरूद्व अपराध

अपराधियों का वर्गीकरण- अपराध की भांति अपराधियों का वर्गीकरण भी विविध प्रकार से किया गया है

अ. सदरलैण्ड का वर्गीकरण-

1. निम्न वर्ग के अपराधी
2. श्वेतवसन अपराधी

ब. हेज का वर्गीकरण-

1. प्रथम अपराधी
2. आकस्मिक अपराधी
3. आदतजन्य अपराधी

4. व्यावसायिक अपराधी

स. लोम्ब्रोसों का वर्गीकरण-

1. जन्मजात अपराधी
2. पागल अपराधी
3. आकस्मिक अपराधी
4. भावुक अपराधी

द. क्लीनार्ड का वर्गीकरण-

1. अपराध, लिंग अथवा आयु के आधार पर
2. अप्रौढ़ तथा प्रौढ़ अपराधी व्यवहार व्यवस्थाओं के आधार पर
3. हिंसात्मक औरी वैयक्तिक अपराधी
4. आकस्मिक सम्पत्ति अपराधी
5. आदतन साधारण सम्पत्ति अपराधी
6. सफेदपोश अपराधी
7. संगठित अपराधी

8. पेशेवर अपराधी

अपराध के भौगोलिक व पारिस्थितिकीय कारक -

अपराधी कैलेण्डर

क्र0सं0	अपराधी की प्रकृति	मौसम
1	भ्रूण हत्या	जनवरी, फरवरी, मार्च व अप्रैल
2	हत्या और गम्भीर अपराध	जुलाई
3	पिता हत्या	जनवरी, अक्टूबर
4	प्रौढ़ो में बलात्कार	जुलाई अगस्त
5	युवकों मे बलात्कार	जून
6	सम्पत्ति सम्बन्धी अपराध	दिसम्बर, जनवरी
7	व्यक्ति के विरूद्व अपराध	मई, जून

कुछ अध्ययनों से यह भी पता चलता है कि शीत स्थानों पर यौन सम्बन्धी अपराध अधिक पाये जाते है परन्तु आज अनेक विद्वान भौगोलिक एवं पारिस्थितिकीय कारकों को अपराध के लिए अधिक उत्तरदायी नही मानते।

अपराध का सम्प्रदाय

सम्प्रदाय	समय	व्याख्या के आधार	पद्धतिया
शास्त्रीय सिद्वान्त	1775	सुखवादी सिद्वान्त	काल्पनिक
भौगोलिकवादी सिद्वान्त	1830	परिस्थिति, संस्कृति व जनसंख्या की बनावट	सांख्यिकी
समाजवादी सिद्वान्त	850	आर्थिक निश्चयात्मकवाद	सांख्यिकी
प्ररूपवादी सिद्वान्त		जैविक विशेषताएं	क्लिनिकल
1 लोम्ब्रोसों का सिद्वान्त	1875	जन्मजात अपराधी	सांख्यिकी
2 मानसिक परीक्षण	1905	मानसिक दुर्बलता	क्लिनिकल परीक्षण तथा

	सिद्वान्त			सांख्यिकी
3	मनोविश्लेषणात्मक सिद्वान्त	1905	मानसिक चिकित्सा	क्लिनिकल
	समाज शास्त्रीय सिद्वान्त	1915	समूह तथा सामाजिक प्रक्रियाएं	सांख्यिकी

भारत में अपराध का विस्तार-

व्यक्तियों को देश में विद्यमान अपराध स्थिति की जानकारी देने के लिए सन् 1953 से नेशनल क्राइम रिकार्डस ब्यूरों (National Crime Records Bureay) जोकि ग्रह मंत्रालय के अधीन कार्य करता है, द्वारा वार्षिक (प्रतिवेदन) तैयार की जाती है। इसका मूल आधार पुलिस स्टेशन स्तर पर 'भारतीय दण्ड संहिता' (Indian penal code) तथा 'स्थानीय व विशिष्ठ कानूनो' के अन्तर्गत दर्ज मुकदमें होते है जिसे जिला व राज्य स्तर के ब्यूरो को उपलब्ध कराया जाता है इसके अतिरिक्त यह ब्यूरो 12 महानगरो से भी इसी प्रकार के आँकडे संकलित है।

निम्नलिखित तातिका में भारत के विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रशसित प्रदेशों में 2007 से 2012 में भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत हुए कुल अपराधों का विवरण-

तालिका-1

भारत के विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में 2007 से 2012 में भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत हुए कुल अपराध, एवं अपराधों की संख्या एवं प्रतिशत

क्र0सं0	राज्य/केन्द्रशासित प्रदेश	2007	2008	2009	2010	2011	2012	प्रतिशत
1	आन्ध्र प्रदेश	175087	179275	180441	181438	189780	192522	8.1
2	अरूणाचल प्रदेश	2286	2374	2362	2439	2286	2420	6.1
3	असम	45282	53333	55313	61668	66714	77682	3.3
4	बिहार	109420	122669	122931	127453	135896	146614	6.1
5	छत्तीसगढ़	45845	51442	51370	54998	57218	54598	2.3
6	गोवा	2479	2742	3005	3293	3449	3608	0.2
7	गुजरात	123195	123808	115183	116439	123371	130121	5.5
8	हरियाणा	51597	55344	56229	59120	60741	62480	2.6
9	हिमाचल प्रदेश	14222	13976	13315	13049	14312	12557	0.5
10	जम्मू और कश्मीर	21443	20604	21975	23223	24504	24608	1.0
11	झारखण्ड	38489	38686	37436	38889	35838	40946	1.7
12	कर्नाटक	120606	127540	134042	142322	137600	134021	5.6
13	केरल	108530	110620	118369	148313	172137	158989	6.7
14	मध्य प्रदेश	202386	206556	207762	214269	217094	220335	9.2
15	महाराष्ट्र	195707	206243	199598	208168	204902	202700	8.5
16	मणिपुर	3259	3349	2852	2715	3218	3737	0.2
17	मेघालय	2079	2318	2448	2505	2755	2557	0.1
18	मिजोरम	2083	1989	2047	2174	1821	1766	0.1
19	नागालैण्ड	1180	1202	1059	1059	1083	1090	0.0
20	ओडिशा	54872	54755	55740	56459	61277	67957	2.8
21	पंजाब	35793	35314	35545	36648	34883	35790	1.5
22	राजस्थान	148870	151174	166565	162957	165622	170948	7.2
23	सिक्किम	667	730	669	552	596	528	0.0
24	तमिलनाडु	172754	176833	174691	185678	192879	200474	8.4

25	त्रिपुरा	4273	5336	5486	5805	5803	6264	0.3
26	उत्तर प्रदेश	150258	168996	172884	174179	195135	198093	8.3
27	उत्तराखण्ड	9599	8856	8802	9240	8774	8882	0.4
28	पश्चिम बंगाल	81102	105419	113036	129616	143197	161427	8.8
	कुल राज्य	1923363	2033483	2061155	2164628	2262885	2323714	97.3
29	अण्डमान और निकोबार द्वीपसमूह	807	882	941	980	793	683	0.0
30	चण्डीगढ़	3643	3931	3555	3373	3542	3606	0.2
31	दादरा और नागर हवेली	425	401	442	378	372	318	0.0
32	दमन और दीव	260	248	276	203	224	239	0.0
33	दिल्ली	56065	49350	50251	51292	53353	54287	2.3
34	लक्षद्वीप	56	95	134	42	44	60	0.0
35	पुण्डीचेरी	5054	4989	4591	3935	4362	4281	0.2
	कुल केन्द्र शासित प्रदेश	66310	59896	60190	60203	62690	63474	2.7
	कुल सम्पूर्ण भारत	1989673	2093379	2121345	2224831	2325575	2387188	100

क्राइम इन इण्डिया - 2012 नई दिल्ली, नेशनल क्राइम रिकार्डस ब्यूरो NCRB

तालिका 1.1 में दर्शाए गये आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि भारत में 2007 के बाद भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत होने वाले अपराधों में निरन्तर वृद्धि हुई है। 2012 के आंकड़ों को देखने के बाद स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक अपराध मध्य प्रदेश में हुए। उसके बाद महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश एवं आन्ध्र प्रदेश का स्थान क्रमशः दूसरा, तीसरा, चौथा एवं पांचवा रहा। केन्द्रशासित प्रदेशों में सर्वाधिक अपराध दिल्ली में हुए तथा पुण्डीचेरी व चण्डीगढ़ क्रमशः दूसरे व तीसरे स्थान पर रहे। यदि हम 2012 के इन आंकड़ों को महानगरों की दृष्टि से देखे तो साफ ज्ञात होता है कि सर्वाधिक अपराध दिल्ली (47.982) में घटित हुए। दूसरे, तीसरे चौथे एवं पांचवे स्थान पर क्रमशः मुम्बई (30.508), बंगलूरू (29.297), कोलकाता (25.370), अहमदाबाद (21.347), तथा चेन्नई (17.840) का स्थान रहा। उत्तर प्रदेश में इन अपराधों में लखनऊ (9.147) का प्रथम स्थान रहा जबकि आगरा (6.537), गाजियाबाद (5.254), मेरठ (4.404), इलाहाबाद (2.788), कानपुर (2.707), एवं वाराणसी (2.282) क्रमशः दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवे एवं छठे स्थान पर रहे।

तालिका-2

भारत में 2001, 2011 तथा 2012 ई0 में भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत दर्ज विभिन्न प्रकार के अपराधों की संख्या का आयतन।

क्र0सं0	अपराध का प्रकार	2001 में कुल अपराध आयतन	2011 में कुल अपराध आयतन	2012 में कुल अपराध आयतन
1.	हत्या	36,202(3.5)	34305(2.8)	34434(2.8)
2.	हत्या का प्रयास	31,523(3.1)	31385(2.6)	35,138(2.9)
3.	सदोष मानव वध	3,367(0.3)	3707(0.3)	3620(0.3)
4.	बलात्कार	16,075(1.6)	24206(2.0)	24923(2.1)
5	अपहरण व	22,487(2.2)	44664(3.7)	47592(3.9)

	व्यपहरण			
	1 महिलाओं व लड़कियों का	14,465(1.4)	35565(2.9)	38262(3.2)
	2 अन्यों का	7,842(0.8)	9099(0.8)	9330(0.8)
6	डकैती	6,154(0.6)	4285(0.4)	4314(0.4)
7	डकैती के लिये तैयारी व एकत्रित होना	1,614(0.2)	2895(0.2)	3099(0.3)
8	लूटमार	19,901(1.9)	24700(2.0)	27343(2.3)
9	सेंधमारी	1,01,182(9.9)	92504(7.6)	92892(7.7)
10	चोरी	2,52,803(24.6)	340800(28.2)	337407(27.8)
11	दंगा	76,222(7.4)	68500(5.7)	74633(6.2)
12	आपराधिक विश्वासघात	14,798(1.4)	17457(1.4)	17901(1.5)
13	धोखा	44,727(4.4)	87656(7.2)	94203(7.8)
14	छलकपट	1,683(0.2)	2307(0.2)	2351(0.2)
15	आगजनी	10.534(1.0)	9064(0.7)	11836(1.0)
16	चोर	2,71,487(26.4)	302843(25.0)	332324(27.4)
17	दहेज हत्या	6,851(0.7)	8618(0.7)	8233(0.7)
18	छेड़छाड./उत्पीड़न	34,124(3.3)	42968(3.6)	45351(3.7)
19	यौन उत्पीड़न	9,746(0.9)	8570(0.7)	9173(0.1)
20	पति एंव अन्य रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता	49,170(4.8)	99135(8.2)	106527(8.8)
21	लड़कियों का आयात	114(0.0)	80(0.0)	59(0.0)
22	लापरवाही से हत्या	57,182(5.6)	108890(9.0)	107591(8.9)
23	अन्य अपराध	7,01,362(68.3)	966032(79.8)	966244(79.6)
24	कुल अपराध	17,69,308(172.3)	2325575(192.2)	2387188(196.7)

उपयुक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि पिछले दशक में हत्या का प्रयास, बलात्कार, अपहरण व व्यपहरण, डकैती के लिए तैयारी व एकत्रित होना तथा धोखे देने जैसे अपराधो मे काफी वृद्धि हुई है, जबकि हत्या, सदोष मानव वध, डकैती, लूटमार, सेंधमारी, चोरी, दंगा, मापरधिक विश्वघात, छलकपट, व अन्य अपरधो, की संख्याओं में कमी हुई है। दहेज हत्याओं में भी वृद्धि हुई है। कुल अपरधों में पिछले दशक में काफी वृद्धि हुई है। स्थानीय व विशिष्ट कानूनो के अन्तर्ग दर्ज मामलों को देखने पर ज्ञात हुआ है कि 'मद्यनिषेध (नशाबंदी अधिनियम) के अन्तर्गत सबसे अधिक अपरध होते है तथा वे निरन्तर बढते जा रहे है दूसरें नम्बर पर जुआ खेलते हुए पकड़े जाने वाले अपराधियों का स्थान, तीसरे पर आबकारी अधिनियम के अन्तर्गत पकड़े गए अपराधियों का स्थान तथा चौथे नम्बर पर गैर-कानूनी हथियार रखने के जुर्म में पकडे गए अपराधियों का स्थान है।

कुल अपराधो को भारतीय दण्ड संहिता (Indian Penal Code) के अन्तर्गत को भारतीय हिंसात्मक अपराध (Violent Crimes) की श्रेणी में रखा गया है। अनमें हत्या (ध

ारा 302) डकैती का प्रयास (धारा 307), सदसेष मानव वध (धारा 304,308) डकैती के लिए एकत्रित होना धारा (399-402) लूटमार (धारा 392-394,397,398), दंगा (धारा 143,145,147,151,153,153।,153ठ,157,158,160), आगजनी (धारा 435,436,438 तथा दहेज हत्या(धारा 304ठ) प्रमुख है।

उपरोक्त विवेचनों से स्पष्ट होता है कि आज के बदलते दौर में एक ओर जहाँ दिन -प्रतिदिन नए-नए अविष्कार हो रहे है वही अपराधो की सख्या में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है आज के युवा वर्ग अपने नैतिक मूल्यों से भटक रहे है वह अपराधों में वृद्धि का एक प्रमुख कारण है आज मानव अपी भौतिक सुख सुविधाओं की आवश्यकताओं को पूरा कने के लिए वह अपराध की दुनिया की ओर अपने कदम बढानें से नही हिचकते। अतः आज समूचे भारत के लिए अपराध एक गम्भीर समस्या बनी हुई है हमें इस समस्या का निदान करने के लिए सरकार को ठोस कदम उठाने होगे, जिससे युवा अपने नैतिक मूल्यों को समझ पाए एवं अपराध की दुनिया से बाहार आ सके।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. K.S Shukla, 'Sociology of Deviant Behaviour', In ICSSR Survey of Research in Sociology and social Anthropology
2. Cyril Bwrt, The young Delinquent
3. Martin H. Neumeyer, Juvenile Delinquency in Morden society
4. Walter C. Reckless, Handbook of practical suggestions for the Treatment of Adult and Juvenile Delinquent
5. Varma-S.C, 1970- The young Delinquents A sociological Inquiry Lucknow: Pustak kendra
6. Willrnott.P., 1975- The symmetrical family, penguin Books Hormones worth.
7. Young, Pauline V., 1962 - Scientific social surveys and research 4th edn. New york : Prentice- Hall.Inc
8. Uttar.V.A, 1975- 'Urbanization and crime" social welfare, new Delhi.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की आर्थिक स्थिति

(जिला कटनी म.प्र. के विशेष संदर्भ में)

* सन्ध्या खरे

सारांश- *शिक्षा के क्षेत्र में अशासकीय शिक्षकों का बहुत बड़ा योगदान है। तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण छात्रों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई है किन्तु इनकी शिक्षा के लिए शासन द्वारा पर्याप्त विद्यालय नहीं खोले गए है। इस कारण अशासकीय शिक्षण संस्थाएँ पर्याप्त मात्रा में संचालित हो रही है। शिक्षित बेरोजगारी की समस्या के कारण अत्यन्त कम वेतन मिलने के बावजूद अशासकीय विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षक कार्यरत है। इन प्राथमिक शिक्षकों की आर्थिक स्थिति चिन्तनीय है। इस ओर समाज का ध्यान आकृष्ट करने हेतु यह संक्षिप्त शोधकार्य किया गया है। इस अध्ययन के अन्तर्गत इनकी आय, व्यय एवं रहन-सहन की दशा का निवारण प्रस्तुत किया गया है।*

शोध अवधि- जनवरी 2016 से मार्च 2016

शोध क्षेत्र- जिला कटनी (म.प्र.)

शोध का उद्देश्य- कटनी जिले के अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत प्राथमिक शिक्षकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

शोध शीर्षक का स्पष्टीकरण-

(अ) कटनी जिला- मध्यप्रदेश के जबलपुर संभाग के अन्तर्गत राजस्व जिला कटनी

(ब) अशासकीय विद्यालय- वे विद्यालय जो मध्यप्रदेश शासन शिक्षा विभाग से मान्यता प्राप्त एवं रजिस्टर्ड है तथा जिनमें प्राथमिक एवं मिडिल स्तर तक अध्यापन होता है।

(स) प्राथमिक शिक्षक- जो शिक्षक प्राथमिक कक्षाओं (कक्षा 1 से 5 तक) का अध्यापन करते हैं उन्हें प्राथमिक शिक्षक कहा जाता है।

(द) आर्थिक स्थिति- के अन्तर्गत निम्नलिखित बिन्दुओं का अध्ययन किया गया है।

1. आय के स्रोत एवं वार्षिक आय
2. व्यय की सीमा एवं क्षेत्र
3. बचत (वार्षिक)
4. ऋणग्रस्तता
5. रहन-सहन का स्तर
    * निवास की स्थिति
    * भौतिक संसाधन
    * बच्चों की शिक्षा

★ प्राचार्य, नालन्दा बी.एड. कॉलेज, कटनी (म.प्र.)

निदर्शन–

कटनी जिला शिक्षा के क्षेत्र में कम विकसित है। जिला मुख्यालय विकासखण्ड तथा तहसील मुख्यालयों में अशासकीय विद्यालय जिले में मान्यता प्राप्त प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 186 है जिसके कुल 763 प्राथमिक शिक्षक कार्यरत है इनमें से कुल 100 प्राथमिक शिक्षकों का अध्ययन किया गया है।

शोध विधि– साक्षात्कार एवं अवलोकन

शोध उपकरण– प्रश्नावली एवं साक्षात्कार अनुसूची

शोध प्रक्रिया– शोधार्थी ने सर्वप्रथम जिला शिक्षा केन्द्र (DEO Office) कटनी जिले के अशासकीय मान्यता प्राप्त विद्यालयों की सूची एवं शिक्षक संख्या प्राप्त किया तत्पश्चात् शोध विषय तथा उद्देश्य को ध्यान में रखकर एक प्रश्नावली तैयार की गई। प्रश्नावली में प्रत्येक बिन्दु से सम्बन्धित 50 प्रश्न रखे गये। 100 शिक्षकों के पास भेजा गया और सुविधानुसार उत्तर प्राप्त किए गए।

शिक्षकों के रहन-सहन की स्थिति ज्ञात करने हेतु शोधार्थी ने लगभग 1 माह तक स्वयं घर जाकर उनके निवास स्थान का अवलोकन किया और साक्षात्कार के माध्यम से विश्वसनीय जानकारी प्राप्त किया। इस कार्य हेतु निर्मित साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन अनुसूची का प्रयोग किया गया। इस प्रक्रिया में लगभग 2 माह का समय लगा।

प्रश्नावली 1 अवलोकन एवं साक्षात्कार के द्वारा प्राप्त समस्त जानकारी को अलग-अलग तालिकाओं में प्रदर्शित करते हुए उनका विश्लेषण किया गया। सारणीयन एवं विश्लेषण के आधार जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं के इस प्रकार है-

निष्कर्ष– आय के स्रोत- अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की आय का प्रमुख स्रोत उनका मासिक वेतन है किन्तु इससे उनकी सम्पूर्ण व्यवस्था नहीं हो पाती है। वेतन के अतिरिक्त कृषि कार्य, दुग्ध व्यवसाय, ट्यूशन, बीमा एजेन्ट का कार्य भी इनकी आय के अन्य स्रोत है।

आय एवं आय के स्रोत– अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की आय का नियमित साधन उनको मिलने वाला मासिक वेतन है, किन्तु वेतन से प्राप्त आय इतनी पर्याप्त नहीं होती है जिससे उनके परिवार का भरण-पोषण संतोषजनक रूप से हो सके। इसलिए इन्हें अन्य कार्य भी करने होते हैं।

तालिका क्रमांक-1.1

अशासकीय शिक्षकों का मासिक वेतन (स्रोत-निज सर्वेक्षण)

क्र.	वेतन सीमा (रूपयों में)	पुरूष	महिला	योग	प्रतिशत
1	रूपये– 1000–2000	12	10	22	22%
2	2000–3000	15	11	16	16%
3	3000–40000	07	16	23	23%
4	4000–5000	06	06	12	12%
5	5000–6000	05	03	08	08%
6	6000–7000	03	02	05	05%
7	7000–8000	02	02	04	04%
	योग	50	50	100	100%

तलिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 22 प्रतिशत अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों का मासिक वेतन रूपये 1000 से 2000 के अन्तर्गत है जबकि 26 प्रतिशत शिक्षक 2001 से 3000 तक वेतन पाते हैं। इसी प्रकार 23 प्रतिशत शिक्षक 3001 से 4000 रूपये तक मासिक वेतन प्राप्त करते हैं। शासकीय नियमानुसार इन्हें शासकीय प्राथमिक शिक्षकों के समान ही वेतन मिलना चाहिए किन्तु व्यावहारिक रूप से ऐसा नहीं होता है।

रूपये 1000 से 2000 तक मासिक वेतन वाले शिक्षकों की सेवा अवधि 2 से 5 वर्ष है और इनकी आयु 25 से 35 वर्ष है। ये शिक्षक अध्यापन कार्य करने के साथ-साथ प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करते रहते हैं तथा ट्यूशन भी करते है। इस प्रकार 71 प्रतिशत शिक्षक न्यूनतम 1000 रूपये तथा अधिकतम 4000 रूपये मासिक वेतन प्राप्त करते हैं। इनसे अधिक वेतन पाने वालों की संख्या एवं प्रतिशत 05.00 है जो रूपये 6001 से 7000 तक वेतन प्राप्त करते हैं। रूपये 7001 से 8000 मासिक वेतन पाने वाले केवल 4.00 प्रतिशत है। जो शिक्षक गणित, विज्ञान एवं अंग्रेजी का ट्यूशन देते हैं उन्हें न्यूनतम रूपये 500 मासिक पारिश्रमिक प्राप्त हो जाता है।

ग्रामीण क्षेत्र के अशासकीय शिक्षक प्रायः सभी कृषि कार्य करते हैं। इनमें से कुछ पशुपालक है जो कि दुग्ध व्यवसाय भी करते हैं। तालिक क्रमांक 1.1 के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि 30 प्रतिशत अशासकीय प्राथमिक शिक्षक संस्थागत शिक्षण कार्य के साथ कृषि कार्य संपादित करते हैं। 3 प्रतिशत ग्रामीण शिक्षक दुग्ध विक्रय का कार्य भी करते हैं। इस प्रकार 35 प्रतिशत शिक्षक अपने मासिक वेतन से अधिक आय कृषि प्राप्त करते हैं। 7 प्रतिशत शिक्षक व्यापार करते हैं इनमें से 4 प्रतिशत स्टेशनरी एवं पुस्तक की दुकान तथा 3 प्रतिशत किराने की दुकाने खोले हुए हैं। इन दुकानों में इनके परिवार के सदस्य कार्य करते हैं तथा खाली समय में शिक्षक स्वयं भी वह कार्य करते हैं। 03 प्रतिशत बीमा एजेन्ट का कार्य करते हैं इसके द्वारा उन्हें कमीशन की राशि प्राप्त होती रहती है।

सर्वेक्षण के दौरान यह भी ज्ञात हुआ है कि कुछ अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की पत्नियाँ अपने ही घर में वस्त्र, सिलाई, पीको, फाल लगाना आदि कार्य करती है, किन्तु स्पष्ट रूप से बताने को तैयार नहीं हुई इसलिए इनकी संख्या एवं आय का विवरण प्राप्त नहीं हो सका है।

तालिका क्रमांक-1.2

शिक्षण के साथ अन्य कार्य विवरण (अप्रशिक्षित)

क्र.	**कार्य विवरण**	**शिक्षण संख्या**		**योग**	**प्रतिशत**
		शहरी	**ग्रामीण**		
1	केवल शिक्षण (पति / पत्नी)	21	07	28	28%
2	शिक्षण + ट्यूशन / कोचिंग	17	07	24	24%
3	शिक्षण + कृषि	05	30	35	35%
4	शिक्षण + व्यापार	04	03	07	07%
5	शिक्षण +बीमा एजेन्सी	03	+	03	03%
6	शिक्षण + दुग्ध विक्रय	—	03	03	03%
	योग	50	50	100	100%

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1.2 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 28 प्रतिशत अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों की आय का साधन केवल मासिक वेतन है। ये सभी शिक्षक स्थायी है और वरिष्ठ है तथा इनके वेतन 4000 से 8000 रूपये मासिक के अन्तर्गत है। इनके परिवार में अन्य सदस्य भी कार्यशील है जो कि इनकी सहायता करते हैं।

किन्तु 72 प्रतिशत अशासकीय प्राथमिक शिक्षक शिक्षण कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य भी करते हैं, जिसका विवरण तालिका क्रमांक 1.2 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक- 1.3

सम्पूर्ण स्रोतों से मासिक आय

क्र.	आय सीमा (रूपयों में)	शहरी शिक्षक	ग्रामीण शिक्षक	योग	प्रतिशत
1	2000—3000	05	10	15	15%
2	3000—4000	07	12	19	19%
3	4000—5000	13	12	25	25%
4	5000—6000	04	04	07	07%
5	6000—7000	03	04	07	07%
6	7000—8000	02	04	06	06%
7	8000—9000	03	03	06	06%
8	9000—10000	04	01	05	05%
9	10000—11000	05	00	05	05%
10	11000—12000	04	00	04	04%
	योग	50	50	100	100%

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1.3 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि समस्त स्रोतों से मासिक आय की सीमा रूपये 2000 से 12000 तक है। इसमें सर्वाधिक संख्या एवं प्रतिशत 25 है जो कि 4000 से 5000 रूपये मासिक आय वाले शिक्षक है। सबसे कम प्रतिशत 04 है जो कि 11000 से 12000 रूपए मासिक के अन्तर्गत है। ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की मासिक आय में पर्याप्त अन्तर पाया गया है। इन शिक्षकों में 14 जोड़े शिक्षक ऐसे हैं जिनके पति एवं पुत्रियाँ दोनों अशासकीय शिक्षण संस्थाओं में कार्य करते हैं और शहरी क्षेत्र में इनकी संख्या 13 है जबकि ग्रामीण क्षेत्र में केवल एक है।

अशासकीय शिक्षकों का दूसरा मुख्य कार्य ट्यूशन/कोचिंग है। शहरी क्षेत्र के 17 शिक्षक एवं ग्रामीण क्षेत्र के 7 शिक्षक ट्यूशन करते हैं। इस प्रकार 24 प्रतिशत शिक्षक ट्यूशन के द्वारा अपनी आय में वृद्धि करते हैं। शहरी क्षेत्र में कक्षा 1 से 8 वीं तक के छात्रों को ट्यूशन देने में रूपये 300 से 500 तक प्रतिमाह पारिश्रामिक मिल जाता है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह सीमा 200 रूपये से 300 रुपये की है।

तालिका क्रमांक- 1.4

मासिक व्यय

क्र.	व्यय का स्तर	व्यय के मद	अशासकीय शिक्षकों द्वारा प्रतिशत व्यय
1	अनिवार्य व्यय	1. भोजन 2. वस्त्र 3. निवास	50.2% 10.8% 13.0%
2	आवश्यक व्यय	4. प्रकाश एवं जल 5. ईधन 6. शिक्षा 7. चिकित्सा	5.6% 5.8% 3.4% 2.2%
3	ऐच्छिक व्यय	8. मनोरंजन 9. आवागमन 10. धार्मिक कार्य 11. नौकर/सेवक	1.8% 2.3% 1.3% 1.3%
		योग व्यय	97.7%

व्याख्या-

आय के अनुपात में व्यय का प्रतिशत अलग-अलग मदों पर भिन्न है। आवश्यकताओं तो सभी की एक समान है किन्तु इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में परिवार की विचारधारा समान नहीं होती है। प्राथमिकताएँ भी भिन्न-भिन्न होती है। कोई परिवार शिक्षा को अधिक महत्व देता है तो वह भोजन एवं निवास में कम व्यय करता है।

शोधार्थी ने अनिवार्य व्यय के अन्तर्गत भोजन, वस्त्र एवं मकान को सम्मिलित किया हो। आवश्यक मदों के अन्तर्गत प्रकाश एवं जल, ईधन, शिक्षा, एवं चिकित्सा को सम्मिलित किया है तथा मनोरंजन आवागमन कार्मिक कार्य एवं नौकरी या सेवकों पर किए जाने वाले व्यय को ऐच्छिक व्यय माना है। डॉ. एन्जिल ने अपने निष्कर्ष में आवागमन, धार्मिक कार्य एवं सेवकों पर होने वाले व्यय को सम्मिलित नहीं किया गया।

अनिवार्य आवश्यकताओं पर होनें वाले व्यय का विवरण अगली तालिका में प्रस्तुत किया गया है। अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों का न्यूनतम मासिक वेतन 1000 रूपया तक पाया गया है। इस आय सीमा (1000-2000) में 22 शिक्षक है किन्तु इनका मासिक खर्च केवल मासिक वेतन से पूरा नहीं होता है इसलिए ये अपने मासिक व्यय की पूर्ति अन्य माध्यमों से आय अर्जित करके पूर्ण करते हैं। यह आय कम से कम 1000 तथा अधिकतम 2000 रूपए तक हो जाती है। अतः इन शिक्षकों को आय सीमा 2000 से 3000 रूपए तक मासिक के अन्तर्गत माना गया है और इनकी संख्या 15 दर्शायी गई है। इसी आय समूह के कुछ शिक्षक 3000 रूपए से अधिक अर्जित कर लेते हैं अतः उन्हें 3000 से 4000 रूपए के वर्ग में सम्मिलित कर दिया गया है।

जिन शिक्षकों का मासिक वेतन 1000 रूपया है वे अपने भोजन व्यय की पूर्ति भी इसी आय से नहीं कर पाते हैं। ये शिक्षक अपने परिवार के अन्य सदस्यों पर आश्रित हैं, कुछ की पत्नियाँ भी कार्य करती है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इन अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों को सम्पूर्ण मासिक आय के आधार पर व्यय का प्रतिशत ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमांक-1.5

अनिवार्य आवश्यकताओं पर मासिक व्यय (अशासकीय प्राथमिक शिक्षक)

आय सीमा (रूपयों में)	संख्या	भोजन		वस्त्र		निवास		योग
		राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	राशि	प्रतिशत	
2000—3000	15	1500	60	300	12	500	20	92
3000—4000	19	2100	60	425	12	700	20	92
4000—5000	25	2550	56	500	11	700	15	82
5000—6000	8	2870	52	600	10.5	700	12	74.5
6000—7000	7	3250	50	650	10.5	750	10.5	72
7000—8000	6	3643	48	730	10	825	11	69
8000—9000	5	4000	48	850	10	900	11	69
9000—10000	5	4375	46	900	9	900	10	65
10000—11000	5	4830	46	950	9	1000	10	65
11000—12000	4	4950	45	1000	9	1000	10	64
प्रति परिवार औसत व्यय		2825	50.2	472	10.8	730	13	

(स्रोत-निज सर्वेक्षण)

तालिका क्रमांक- 1.6

मसिक औसत व्यय-प्रति परिवार

व्यय के मद	राशि	प्रतिशत
भोजन	2825	50.2
वस्त्र	472	10.8
निवास	730	13.0

(प्रति परिवार औसत सदस्य संख्या 5 है)

भोजन पर व्यय-

तलिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि भोजन व्यय की राशि रूपये 1500 से 4950 तक है। आय सीमा बढ़ने के साथ भोजन पर होने वाला व्यय बढ़ता जाता है क्योंकि भोजन की गुणवत्ता का स्तर एवं भोजन में विविधता बढ़ती जाती है यद्यपि आय के आधार पर भोजन पर होने वाले व्यय का प्रतिशत कम होता जाता है। रूपये 2000 से 3000 तथा 3000 से 4000 रूपये मासिक आय सीमा के अन्तर्गत 34 प्रतिशत है।

अगला आय समूह रूपये 4000-5000 तथा 5000-6000 है जिसमें भोजन व्यय क्रमशः 56 प्रतिशत तथा 52 प्रतिशत है। रूपये 6000-7000 मासिक आय वर्ग में 7 शिक्षक आते हैं जिनका मासिक भोजन व्यय 50 प्रतिशत है जो कि एन्जिल के नियम के अनुसार धनी वर्ग के अनुकूल है।

कुल मासिक आय का 56 प्रतिशत से 60 प्रतिशत तक भोजन पर मासिक व्यय करने वाले शिक्षकों की संख्या 59 है। (यही प्रतिशत भी है) जो कि एन्जिल के वर्गीकरण के आधार पर मजदूर वर्ग के समान है।

शेष 26 प्रतिशत शिक्षकों का भोजन पर होने वाले व्यय कुल मासिक आय का 45 से 48 प्रतिशत है।

सभी 100 प्राथमिक शिक्षकों के भोजन का मासिक व्यय औसत रूप से प्रति परिवार 2825 रूपये जो कि औसत मासिक आय का 50.22 प्रतिशत है। एन्जिल के नियम के अनुसार मध्यम वर्ग का भोजन पर 55 प्रतिशत व्यय होता है अतः सभी प्राथमिक शिक्षक औसत रूप से मध्यम वर्ग में ही आते हैं। इस व्यय विवरण के आधार पर प्रति व्यक्ति मासिक भोजन व्यय न्यूनतम 300 रूपये तथा अधिकतम 990 रूपये है जबकि औसत व्यय प्रति व्यक्ति 565 रूपये है।

वस्त्र और व्यय–

अनिवार्य आवश्यकताओं के अन्तर्गत भोजन के बाद वस्त्र पर होने वाला है। तालिका क्रमांक के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि अशासकीय प्राथमिक शिक्षकों द्वारा वस्त्र पर मासिक व्यय 9 प्रतिशत से 12 प्रतिशत तक होता है। डॉ. एन्जिल के नियम के अनुसार वस्त्र पर 18 प्रतिशत व्यय होता है और यह सभी आय वर्ग में स्थिर रहता है किन्तु इस शोध अध्ययन से प्राप्त आँकड़े उक्त निष्कर्ष की पुष्टि नहीं करते हैं।

तालिका क्रमांक के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि रूपये 2000-3000 एवं 3000-4000 रूपये मासिक आय समूह के 34 शिक्षक अपनी आय का 12 प्रतिशत वस्त्र पर व्यय करते हैं जो कि 300 से 425 रूपये मासिक है।

बचत–

शासकीय शिक्षकों का वेतन मध्यप्रदेश के अन्य कर्मचारियों के समान है किन्तु अशासकीय शिक्षकों का वेतन शासकीय शिक्षकों की तुना में आधा या उससे भी कम है किन्तु शासन से अनुदान प्राप्त करने वाली अशासकीय शिक्षण संस्थाओं के शिक्षकों का वेतन शिक्षकों से लगभग 20 से 25 प्रतिशत कम रहता है।

वर्तमान समय में उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य बहुत बढ़ चुके हैं। सामान्य रहन-सहन के स्तर को बनाए रखने के लिए अशासकीय शिक्षकों का वेतन पर्याप्त नहीं है। इसलिए वे अन्य कार्य करके अपनी आय में वृद्धि करते हैं। यदि वे अतिरिक्त कार्य न करें तो बचत की संभावना बिलकुल नहीं है। शिक्षक अपने भविष्य का ध्यान रखते हुए खर्चों में कमी करते हैं और थोड़ी सी बचत कर लेते हैं। इसका विवरण अगली तालिका में दिया जा रहा है।

तालिका क्रमांक- 1.7

बचत का प्रतिशत

क्र.	आय सीमा (रूपयों में) मासिक	आय के आधार पर बचत का प्रतिशत
		अशासकीय प्राथमिक शिक्षक
1	1 से 3 हजार	कोई बचत नहीं
2	3 से 5 हजार	कोई बचत नहीं
3	5 से 7 हजार	3 प्रतिशत
4	7 से 9 हजार	5.9 प्रतिशत
5	9 से 11 हजार	8.3 प्रतिशत
6	11 से 13 हजार	9.9 प्रतिशत

तालिका क्रमांक- 1.8 ऋण ग्रस्तता की स्थिति

क्र.	**विवरण**	**अशासकीय प्राथमिक शिक्षक**
1	ऋण नहीं लेते हैं	26 प्रतिशत
2	ऋण लेने वाले	74 प्रतिशत

ऋण लेने के कारण

क्र.	कारण	अशासकीय प्राथमिक शिक्षक
1	बच्चों की उच्च शिक्षा	12 प्रतिशत
2	भवन निर्माण	06 प्रतिशत
3	भवन–मरम्मत	11 प्रतिशत
4	चिकित्सा	07 प्रतिशत
5	पुत्री का विवाह	14 प्रतिशत
6	कृषि कार्य	09 प्रतिशत
7	धार्मिक कार्य	05 प्रतिशत
8	वाहन क्रय	10 प्रतिशत
	योग	74 प्रतिशत

तालिका क्रमांक- 1.9 निवास व्यवस्था की स्थिति

क्र.	**विवरण**	**अशासकीय प्राथमिक शिक्षक**
1	निजी आवास–पक्का	33 प्रतिशत
2	निजी आवास–अर्द्धपक्का	27 प्रतिशत
3	निजी आवास–कच्चा	8 प्रतिशत
4	किराये का पक्का	16 प्रतिशत
5	किराये का अर्द्धपक्का	16 प्रतिशत
6	किराये का कच्चा	–
	योग	100 प्रतिशत

आवास में सुविधाएँ

क्र.	**सुविधा विवरण**	**अशासकीय शिक्षक**
1	बेडरूम	100 प्रतिशत
2	ड्राइंग रूम	56 प्रतिशत
3	किचन	78 प्रतिशत
4	शौचालय	67 प्रतिशत
5	स्नानागार	61 प्रतिशत
6	अतिथि कक्ष	38 प्रतिशत
7	विद्युत व्यवस्था	100 प्रतिशत
8	जल व्यवस्था	78 प्रतिशत
9	अन्य	–

आवागमन के साधन

क्र.	**माध्यम/साधन**	**अशासकीय शिक्षक**
1	मोटर कार	–
2	मोटर सायकिल	42 प्रतिशत
3	स्कूटर/स्कूटी	7 प्रतिशत
4	सायकिल/लूना	26 प्रतिशत
5	पैदल	15 प्रतिशत
6	आवागमन पर व्यय	2.3 प्रतिशत आय का प्रतिशत

घरेलू विद्युत उपकरण

क्र.	उपकरण	अशासकीय प्राथमिक शिक्षक		प्रतिशत
		शहरी	ग्रामीण	
1	फ्रिज	15	13	28
2	कूलर	27	13	40
3	ए.सी.	—	—	—
4	कम्प्यूटर	3	—	3
5	वाशिंग मशीन	3	—	3
6	वाटर फायर	—	—	—
7	वाटर हीटर	25	13	38
8	वाटर कूलर	—	—	—
9	इलेक्ट्रिक फैन	50	37	87
10	टेलीविजन	40	23	63

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. कटनी जिला सांख्यिकी
2. शिक्षा शोध- जे.डब्ल्यू वेस्ट
3. शिक्षा एवं मनोविज्ञान में शोध पद्धति- मो. सुलेमान

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

छत्तीसगढ़ में सशक्तिकरण की दिशाएँ

* मंजुलता कश्यप
** रामसेवक भगत

सारांश– *भारत में स्त्री के हित और अधिकारों से जुड़े आन्दोलन की शुरूआत 19वीं सदी के पूवार्द्ध में हुई। बीसवीं सदी के राष्ट्रीय जागरण काल में यद्यपि स्त्री–मुक्ति की चिन्ता भी शामिल थी, लेकिन राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन की तीव्रता के कारण यह चिन्ता कोई स्पष्ट आकर ग्रहण नहीं कर सकी। आकार की यह स्पष्टता कोई ढाई–तीन दशक पहले के स्त्रीवादी आंदोलनों में प्रकट होनी शुरू हुई, जब वैचारिक स्तर पर स्त्री मुक्ति की नई लहर उठी। महिला सशक्तिकरण इस लहर की तार्किक परिणति है। इसलिए इसे वक्त के कैनवास पर स्त्री के भविष्य का स्केच कहा जा सकता है। यह स्केच भारत सहित पूरी दुनिया में खींचा जा रहा है और यह प्रयास किए जा रहे है कि स्त्री इसमें अपनी इच्छानुसार रंग भर सके।*

मुख्य शब्द– महिला सशक्तिकरण, सशक्तिकरण के सहायक घटक।

लैंगिक विषमताओं को प्रोत्साहित करने वाली परम्परागत संस्थाओं व संरचनाओं में होने वाला ऐसा परिवर्तन जिससे कि महिलाओं की समानता सुनिश्चित हो सके, महिला सशक्तिकरण का आधार माना गया है। कुछ प्रमुख आधार निम्नलिखित है –

महिलाओं में आत्मसम्मान व आत्म विश्वास की भावना विकसित करना। महिलाओं की सकारात्मक छवि का निर्माण करना। महिलाओं में आलोचनात्मक चिंतन की क्षमता का विकास करना। निर्णय लेने की क्षमता का पोषण व उसे उन्नत करना। विकास प्रक्रिया में समान भागीदारी सुनिश्चित करना। आर्थिक स्वतंत्रता हेतु सूचना, ज्ञान व कुशलता उपलब्ध कराना। महिलाओं के कानूनी ज्ञान का विकास तथा स्वयं के अधिकारों संबंधी सूचनाओं तक उनकी पहुंच को सुनिश्चित करना। सामाजिक आर्थिक जीवन के सभी क्षेत्रो में समान रूप से उनकी सहभागिता में वृद्धि हेतु प्रयास करना। महिलाओं की शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में सहभागिता निश्चित करना। बालिकाओं एवं महिलाओं के प्रति व्याप्त विविध असमानताओं को खत्म करना।

जब हम शक्ति या क्षमता के प्राधिकारी संदर्भ में महिलाओं को विशेष अधिकार एवं कर्त्तव्य बोध कराते है, उन्हे समाज या समुदाय से जुड़े मुद्दों पर निर्णय लेने अथवा नीति लागू करने की क्षमता प्रदान करते है तो यह प्रक्रिया महिला शक्ति की ओर संकेत करती है। महिला सशक्तिकरण का मुख्य पक्ष स्त्रियों के अस्तित्व का अधिकार और

★ सहायक प्राध्यापक, (अर्थशास्त्र) ठाकुर छेदीलाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जांजगीर (छ.ग.)
★★ सहायक प्राध्यापक, (इतिहास) शासकीय श्यामा प्रसाद मुखर्जी महाविद्यालय, सीतापुर (छ.ग.)

समाज द्वारा उसकी स्वीकार्यता है। सशक्तिकरण एक लक्ष्य है और संपोषित विकास की आवश्यक दशा भी है।

10 अप्रैल 1930 के ''यंग इंडिया'' में गांधी जी ने लिखा था - ''नारी को अबला कहना अधर्म है। यह महापाप है, जो नारी के विरूद्ध पुरूष द्वारा किया जा सकता है, नारी को किसी भी परिस्थिति में डरना नहीं चाहिए। उसके पास विशाल शक्ति है, वह किसी से कम नहीं।'' महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में 1930 की यह पंक्तियां आज भी हमारा मार्गदर्शन कर रही है।

जनसंख्या का गणित और विविध क्षेत्रो में महिलाओं की समग्र भूमिका उन्हे बराबरी की हकदार बनाती है, किन्तु यह विडम्बनापूर्ण है कि समाज में उसे आज भी दोयम दर्जा प्राप्त है। स्त्रियां दोहरी मानसिकता की जकड़न में छटपटा रही है।

महिला सशक्तिकरण-पूर्वावलोकन-

यूरोप में इसकी शुरूआत कोई दो शताब्दी पहले हुई जब 1792 में मेरी बोल्स्टन क्राट की पुस्तक 'ए विन्डिक्शन ऑफ द राइट्स ऑफ विमेंन' का प्रकाशन हुआ। इसमें पहली बार मेरी ने फ्रांस क्रांति से प्रभावित होकर ''स्वतंत्रता-समानता-भ्रातृत्व'' के सिद्धान्त को स्त्री समुदाय पर भी लागू करने की मांग की। स्त्री मुक्ति की वकालत जॉन स्टुअर्ट मिल ने 1869 में प्रकाशित अपनी पुस्तक - 'द सब्जेक्शन ऑफ विमेंन' में की। इसे और मजबूत स्वर मिला-सिमोन द बोउबार की 1949 में प्रकाशित पुस्तक - 'द सेकंड सेक्स' से। इसके अतिरिक्त जां आंतुआं कोन्दोर्षे, ओलिम्पी द गुजे, चेर्नीशेव्स्की, अलेक्सान्द्रा, कोल्लोन्ताई तथा जर्मेन ग्रीयर आदि ने भी स्त्रीवादी विचारो को स्थापित और विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

भारत में स्त्री के हित और अधिकारों से जुड़े आन्दोलन की शुरूआत 19वीं सदी के पूवार्द्ध में हुई। बीसवीं सदी के राष्ट्रीय जागरण काल में यद्यपि स्त्री-मुक्ति की चिन्ता भी शामिल थी, लेकिन राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन की तीव्रता के कारण यह चिन्ता कोई स्पष्ट आकर ग्रहण नहीं कर सकी। आकार की यह स्पष्टता कोई ढाई-तीन दशक पहले के स्त्रीवादी आंदोलनों में प्रकट होनी शुरू हुई, जब वैचारिक स्तर पर स्त्री मुक्ति की नई लहर उठी। महिला सशक्तिकरण इस लहर की तार्किक परिणति है। इसलिए इसे वक्त के कैनवास पर स्त्री के भविष्य का स्केच कहा जा सकता है। यह स्केच भारत सहित पूरी दुनिया में खींचा जा रहा है और यह प्रयास किए जा रहे है कि स्त्री इसमें अपनी इच्छानुसार रंग भर सके।

भारतीय इतिहास के वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, परन्तु बाद में उसकी स्थिति बद्तर होती चली गई। स्वतंत्रता पश्चात् भारत में स्वतंत्रता, समानता, शिक्षा और स्वास्थ्य अधिकारों पर बल दिया गया।

सशक्तिकरण के सहायक घटक-

1. **सार्थक शिक्षा का प्रबंध-** शिक्षा से महिलाओं में आत्मविश्वास, अपने अधिकारो के बारे में जागरूकता तथा अन्याय से लड़ने की नैतिक शक्ति पैदा होती है। शिक्षा और जागरूकता के द्वारा महिलाएँ कानून द्वारा दी गई सुविधाओं का लाभ उठा सकती है।
2. **निर्णय लेने की क्षमता का विकास-** महिलाओं के शोषण और उत्पीड़न

को रोकने के लिए आवश्यक है कि उनका चहुंमुखी विकास किया जाए। इसके लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

3. **स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता**– यद्यपि सरकार ने स्वास्थ्य सुविधाओं का प्रसार किया है परंतु अशिक्षा, परंपरावादी दृष्टिकोण के कारण मातृ मृत्यु दर अभी भी अधिक है। प्रत्येक पंचायत में एक उप-स्वास्थ्य केन्द्र है। यह पंचायतों का कर्तव्य हो कि समस्त सुविधाओं का विस्तार हो।

4. **समााजिक कुरीतियाँ समाप्त करना**– समाज में अनगिनत कुरीतियाँ फैली हुई है, इन कुरीतियों में बाल-विवाह, पर्दा प्रथा नशाखोरी, भ्रूण हत्या आदि सम्मिलित है। महिलाओं को इतना सबल अवश्य बनाया जाए कि वे अत्याचारो के विरूद्ध अपनी आवाज उठा सके।

5. **अधिकारो तथा कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता**– समाज में ऐसी व्यवस्था को विकसित करे, जिससे कानूनी, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक अधिकारो एवं कर्त्तव्यों की ठीक से जानकारी हो सके। विचार विमर्श, सभा-सम्मेलनों व साहित्य के माध्यम से इन जानकारियों को निरंतर बढ़ाने के प्रति जागरूका रहना जरूरी है।

6. **आर्थिक रूप से आत्म निर्भरता**– सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता की है। आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं के श्रम का उचित मूल्यांकन हो ताकि उन्हे सही प्रतिफल मिल सके।

स्कूल में पढ़ने वाली बालिकाओं को शिक्षा के साथ व्यवसायिक शिक्षा दी जाए। रोजगार का सृजन करने वालों विभिन्न कार्यक्रमों और नीतियों को बनाते समय गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली ग्रामीण भूमिहीन महिलाओं को प्राथमिकता दी जानी आवश्यक है।

7. **कौशल विकास से क्षमता वृद्धि**– महिलाओं को इस प्रकार की दक्षता या प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए कि उन्हे अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी मिल सके।

8. **स्वरोजगार के लिए स्वयं सहायता समूह**– समूह में कार्य करने से लोगों में पहचान बनती है। नेतृत्व गुण का विकास होता है। छोटी-छोटी बचतों से पूंजी निर्माण होता है, जिसे आवश्यकता के समय काम में लिया जा सकता है।

9. **दृष्टिकोण में परिवर्तन**– महिलाओं की शिक्षा तथा अधिकारिता विकास एवं गरीबी उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हमारी नीतियाँ तथा कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो महिलाओं के हितो को ध्यान में रखे। एक ऐसा माहौल बनाए जिसमें महिलाएँ सम्मान एवं गरिमा के साथ रह सकें और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।

10. **महिलाओं की सकारात्मक सहभागिता**– महिलाएं अन्तर्निहित क्षमता को पहचाने उसे अभिव्यक्ति प्रदान करें।

11. **स्त्री शक्ति को जानना**– जीजा बाई, रानी लक्ष्मीबाई, अहिल्या बाई होल्कर आदि के नाम पर दिया जाने वाला स्त्री शक्ति पुरस्कार इस तथ्य के द्योतक है कि स्त्री शक्ति अब भी विद्यमान है उसे पहचानने और कार्य में परिणित करने की आवश्यकता है।

12. **समन्वयात्मक दृष्टिकोण**– स्त्री और पुरूष जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिए है, परिवार में उनके आपसी समन्वय से ही परिवार कायम रहता है, यही समन्वय समाज

में दिखाई दे इसके लिए आवश्यक है कि पुरूष भी स्वस्थ मानसिकता से महिलाओं की प्रगति में साथ दे।

13. **योजना का समुचित क्रियान्वयन**– सशक्तिकरण की दशा में प्रयास तभी सार्थक हो सकेगें, जबकि योजनाएँ पूर्ण निष्ठा से क्रियान्वित की जाए।

14. **सामाजिक मूल्यों का रूपान्तरण**– परिवार का पितृसत्तात्मक स्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र तक विस्तुत दिखाई देता है। मूल्यों में रूपान्तरण के लिए स्त्रियों की शिक्षा, आर्थिक आत्म निर्भरता आवश्यक है।

15. **स्त्री स्वयं पहल करें**– भारतीय महिलाओं को अपने उत्थान के लिए स्वयं पहल करनी होगी।

छत्तीसगढ़ में महिला सशक्तिकरण के लिए किए गए प्रयास–

छत्तीसगढ़ सरकार ने महिलाओं के कल्याण, विकास एवं सशक्तिकरण हेतु एक बहुआयामी महिला सशक्तिकरण नीति तैयार कर लागू की है। नीति के उद्देश्य निम्नलिखित है –

1. महिलाओं के विकास की संपूर्ण संभावनाओं के अनुरूप तथा उन्हे आत्म–निर्भरता प्रदान करने की दृष्टि से उपयुक्त वातावरण का निर्माण।
2. आर्थिक संसाधनों, जिनमें वन, सार्वजनिक संपत्तियां, भूमि तथा उत्पादन के अन्य साधन भी सम्मिलित है, तक उनकी पहुंच के समान अवसर उपलब्ध कराना।
3. राज्य के सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना।
4. स्वैच्छिक संस्थानों तथा महिला समूहों को विकास प्रक्रिया में प्रभावी ढंग से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पहल करने की दृष्टि से राज्य ने निम्नलिखित विशेष प्राथमिकता क्षेत्रो का निर्धारण किया है –

1. संवेदनशील वैधानिक एवं संस्थात्मक तंत्र की स्थापना।
2. आर्थिक विकास में महिलाओं की समान भागीदारी के दृष्टिकोण को सम्मिलित किया जाना।
3. सामाजिक विकास के लिए एक उपयुक्त वातावरण का निर्माण।

महिला सशक्तिकरण के लिए छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा निम्नलिखित प्रयास किए गए है –

1. **महिला समृद्धि बाजार**– महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने तथा उनके द्वारा उत्पादित सामाग्रियों को सुविधाजनक बाजार उपलब्ध कराने के लिए जिले में महिला समृद्धि बाजार की स्थापना की गई है।

2. **इंदिरा सहारा योजना**– यह योजना 19 नवम्बर 2000 से प्रारंभ की गई। इस योजना के अंतर्गत 18 से 50 वर्ष आयु समूह की सभी निराश्रित, विधवा व परित्यक्ता महिलाओं को सरकार द्वारा सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाती है। सामाजिक सुरक्षा के अन्य लाभों के अतिरिक्त 150 रू. प्रति माह की सहायता दी जायेगी, जो महिला स्वरोजगार में रूचि रखती है तो उसकी सहायता की जायेगी।

3. **छत्तीसगढ़ ग्रामीण गरीबी उन्मूलन परियोजना (नवा अंजोर)**– छत्तीसगढ़ के 40 विकासखण्ड के 2000 ग्रामों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति

एवं विशेषकर महिलाओं की आय बढ़ाने तथा उन्हे रोजगार के बेहतर अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य से विश्व बैंक की सहायता से यह परियोजना प्रारंभ की गई है।

4. **स्व–सहायता समूह योजनाएँ**– महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन को प्रोत्साहित करने के लिए स्व सहायता समूह योजना गठित की गई है।

5. **महिला समूहों के लिए**– स्व-सहायता के अंतर्गत कार्यरत महिला समूहों द्वारा बैंको से ऋण प्राप्त करने पर देय स्टाम्प शुल्क समाप्त कर दिया गया है।

6. **छत्तीसगढ़ सूचना शक्ति योजना**– छत्तीसगढ़ की सभी हाईस्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल में पढ़ने वाली कक्षा 9वीं से 12वीं की सभी निर्धन छात्राओं के लिए निःशुल्क कम्प्यूटर शिक्षा का प्रावधान है। यह योंजना 19 नवम्बर 2000 से प्रांरभ की गई।

7. **डॉ. पोर्ते चिकित्सा शिक्षा प्रोत्साहन योजना**– प्रदेश में चिकित्सा शिक्षा प्राप्त करने वाली कमजोर वर्ग की बालिकाओं को प्रोत्साहित करने के लिए प्रावीण्यता के आधार पर छात्रवृत्ति प्रदान की जायेगी।

8. **निःशुल्क दुर्घटना बीमा**– सरकारी स्कूलों और महाविद्यालयों के छात्र-छात्राओं को निःशुल्क दुर्घटना बीमा कवच की सुविधा उपलबध है।

9. **सरस्वती साइकिल प्रदाय योजना**– हाई स्कूल तथा हायर सेकेण्डरी कक्षाओं में अध्ययनरत अनुसूचित जाति एवं जनजाति की गरीब छात्राओं को निःशुल्क साइकिल प्रदान की जायेगी।

10. **गृह लक्ष्मी योजना**– अनुसूचित जाति एवं जनजाति के 50 हजार गरीब परिवारों को निःशुल्क रसोई गैस कनेक्शन प्रदान किया जा रहा है।

11. **निर्मला घाट योजना**– गांव के तालाबों में महिलाओं के उपयोग हेतु पृथक घाट का निर्माण किया गया है।

12. **श्यामा प्रसाद मुखर्जी युवा जन विकास**– इस योजना में छत्तीसगढ़ के सात बड़े शहरों रायपुर, दुर्ग, भिलाई, बिलासपुर, रायगढ़, राजनांदगांव व कोरबा में निवासरत आर्थिक रूप से कमजोर परिवार के बेरोजगार युवक-युवतियों की तकनीकी कौशल में वृद्धि कर उन्हे रोजगार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से रखा गया है। इस योजना के लिए पात्रता- कम से कम सातवीं उत्तीर्ण/अनुत्तीर्ण तथा 18 से 35 वर्ष की आयु हो।

13. **किशोरी शक्ति योजना**– इसके द्वारा प्रदेश में 11 से 18 वर्ष की किशोरी बालिकाओं को होने वाली शारीरिक परिवर्तन की जानकारी देने का उद्देश्य बालिकाओं को स्वयं के स्वास्थ्य पोषण एवं स्वच्छता के संबंध में जागरूक तथा आत्मनिर्भर बनाना है।

14. **मितानिन कार्यक्रम**– इस योजना का उद्देश्य प्रदेश की स्वास्थ्य सेवाओं एवं उससे जुड़े अधिकारों पर लोगों की चेतना बढ़ाना और स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना है।

15. **मेघावी बालिकाओं हेतु निःशुल्क कम्प्यूटर योजना**– इस योजना के अंतर्गत कक्षा 10वीं व 12वीं की परीक्षा में अधिकतम अंक पाने वाली अनुसूचित जाति, जनजाति की छात्राओं को पुरस्कार स्वरूप कम्प्यूटर देने का प्रावधान रखा गया है।

16. **महतारी एक्सप्रेस योजना**– प्रसव हेतु गर्भवती महिलाओं को अस्पताल तक पहुंचाने हेतु महतारी एक्सप्रेस योजना शुरू की गई है।

17. **दत्तक पुत्री शिक्षा योजना**– बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन देने तथा गरीब जरूरतमंद बालिकाओं की शिक्षा में जागरूक नागरिकों की सहभागिता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से यह योजना चलाई जा रही है। इस योजना के अंतर्गत सक्षम व्यक्ति/संस्था द्वारा प्राथमिक तथा माध्यमिक शाला में पढ़ने वाली पात्र गरीब बालिकाओं को सहायता प्रदान की जाती है।

18. **बालिका समृद्धि योजना**– बालिका शिशु तथा उसकी माता के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन लाने, बालिका भ्रूण हत्या की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करने, बालिकाओं को पढ़ने हेतु प्रोत्साहन एवं सहयोग देने, बाल विवाह को रोकने तथा बालिकाओं का विवाह 18 वर्ष के उपरांत करने संबंधी जागृति लाने के उद्देश्य से यह योजना चलाई जा रही है।

19. **आयुष्मति योजना**– इस योजना का उद्देश्य गरीब भूमिहीन परिवार की ग्रामीण महिलाओं को अस्वस्थता की स्थिति में इलाज हेतु सहायता प्रदान करना है।

20. **मातृ–कुटीर**– अनाथ बच्चों व निराश्रित महिलाओं को एक परिवार के रूप में एक इकाई का गठन कर पारिवारिक वातावरण निर्मित करने के उद्देश्य से यह योजना राजनांदगांव और बिलासपुर में संचालित हैं।

21. **महिला जागृति शिविर**– महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों प्रावधानो के प्रति जागृत एवं विभिन्न योजनाओं की जानकारी देकर जागरूक तथा सक्रिय बनाने एवं विभिन्न सामाजिक कुप्रथाओं के विरूद्ध जागृत एवं संगठित करने के उद्देश्य से यह योजना संचालित की जा रही है।

22. **नारी निकेतन**– 16 वर्ष से अधिक आयु की अनाथ कन्याओं, अविवाहित माताओं, विधवा, परित्यक्ता एवं बेसहारा महिलाओं को सामाजिक एवं शैक्षणिक संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से रायपुर, दुर्ग, दन्तेवाडा जिले में यह कार्यक्रम संचालित है।

23. **मातृत्व सहायता योजना**– इसका उद्देश्य गरीब परिवार की महिलाओं को गर्भावस्था के समय चिकित्सिकीय एवं आर्थिक सहायता प्रदान करना है।

24. **इंदिरा महिला योजना**– इसका उद्देश्य महिलाओं के संगठनात्मक क्षमता का विकास कर उन्हे संगठन में कार्य करने हेतु सक्षम बनाना है।

25. **अशासकीय संस्थाओं को अनुदान**– महिला एवं बाल विकास तथा कल्याण के क्षेत्र में कार्यरत स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रोत्साहन देने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

26. **शासकीय सिलाई–कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र**– इसका उद्देश्य गरीब बेसहारा निम्न मध्यमवर्गीय परिवार की महिलाओं को सिलाई-कढ़ाई का प्रशिक्षण देकर उन्हे अर्जन करने योग्य बनाना है।

27. **छत्तीसगढ़ राज्य महिला आयोग**– प्रदेश में महिलाओं को सशक्त बनाने उनका संरक्षण करने के उद्देश्य से 24 मार्च 2001 को राज्य महिला आयोग का गठन किया गया।

28. **छत्तीसगढ़ महिला कोष**– महिलाओ के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए ऐसी गतिविधियों का संचालन करना जिससे महिला समूहों को वित्त पोषण, प्रशिक्षण तथा अन्य आवश्यक संसाधन उपलब्ध हो सके।

29. **पंचायत व्यवस्था में आरक्षण**– 73वें संवधिान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को सहभागिता प्रदान कर उन्हे राजनीतिक शक्ति संरचना में स्थान देने का प्रयास किया गया है।

30. **कानूनी सहायता**– महिलाओं की सहायता के लिए विभिन्न कानून नियम बनाए गए है।

वर्तमान स्थिति–

* छत्तीसगढ़ में महिला साक्षरता दर 2011 में 60.59 प्रतिशत तथा निरंतर घटता लिंगानुपात।
* जीवन के विभिन्न क्षेत्रो (स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार) में लैंगिक आधार पर बढ़ती विषमताएं।
* निर्णय प्रक्रिया में नगण्य भागीदारी।
* महिलाओं के विरूद्ध अपराधों की निरंतर बढ़ती दर।

महिला सशक्तिकरण में बाधाएं–

* हमारा सामाजिक ढांचा समाज में पुरूष और महिलाओं की अलग-अलग भूमिकाएं निर्धारित करता है।
* समान शैक्षणिक योग्यता, समान पद के बावजूद विवाह के समय दिया जाने वाला दहेज समाज में महिलाओं की स्थिति स्वयं चरितार्थ करता है।
* आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर भी घर के मुख्य निर्णयों की जिम्मेदारी उन्हे नहीं सौपी जाती।
* अशिक्षा व तुलनात्मक रूप से निम्न शैक्षणिक स्तर।
* महिला कल्याण योजनाओं की अपूर्णता।

भावी रणनीति– महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते है-

सर्वप्रथम महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए प्रयास करने होगे। महिला संगठनो स्वयंसेवी संस्थाओं को इस दिशा में प्रयास करने होगें। शहरो के साथ ही गांवो में महिलाओं का शोषण और उत्पीड़न रोकने के लिए महिलाओं में शिक्षा का प्रसार करना होगा तथा उन्हे संगठित होकर अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा देनी होगी। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महिला सहभागिता को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। वर्तमान में लागू महिला संबंधी कानूनों में व्याप्त विसंगतियों को दूर करना चाहिए। महिलाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे उनकी कार्य करने की क्षमता में वृद्धि हो सके। आज का युग प्रतियोगिता का युग है। महिलाओं को मात्र कानूनी अधिकार दिए जाने से वे समान अधिकार का उपयोग नहीं कर सकती। आवश्यकता इस बात की है कि समाज में सामाजिक परिवर्तन हो। रोजगार का सृजन करने वाले विभिन्न कार्यक्रमों और नीतियो को बनाते समय गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाली ग्रामीण भूमिहीन महिलाओं को प्राथमिकता दी जानी आवश्यक है। विधि व्यवस्था को मजबूत बनाना ताकि महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त किए जा सके। महिला केन्द्रित और महिला संबद्ध क्षेत्रो में वर्तमान सेवाओ, संसाधनो, बुनियादी सुविधाओं और जनशक्ति को मिलाकर महिला सशक्तिकरण के लिए

एक समन्वित दृष्टिकोण अपनाया जाए। रोजगार के अतिरिक्त महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान देना जरूरी है। चूंकि महिलाओं और पुरूषों का जीवन असमानता के तंत्र में उलझा हुआ है दोनो के बीच असमानता को दूर करना महिलाओं के सशक्तिकरण का सही तरीका है। महिलाओं को सही अर्थो में सशक्त और समर्थ बनाने के लिए जरूरी है कि पहले उन्हे अपने घर में अधिकार मिले। यह प्रक्रिया घर और बाहर साथ-साथ चलानी होगी। महिला सशक्तिकरण का सबसे व्यापक तत्व है- उन्हे सामाजिक पद, प्रतिष्ठा और न्याय प्रदान करना। छत्तीसगढ़ में तीव्र आर्थिक विकास के लिए महिलाओं को उत्पीड़न और हिंसा से मुक्ति दिलाना आवश्यक है। महिलाओं में साक्षरता स्तर को बढ़ाना, ग्रामीण क्षेत्रो में बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करना विशेष रूप से आवश्यक है। महिला संबंधी कानूनो के क्रियान्वयन में भ्रष्टाचार एवं अनावश्यक देरी की प्रथा समाप्त करनी होगी। महिलाएँ समाज की रचनात्मक शक्ति होती है। आने वाले कल को सुधारने के लिए हमे आज की महिला की स्थिति में सुधार करना होगा। इसके लिए हमें रूढ़िवादी दृष्टिकोण से उबरकर एक नया विकासवादी दृष्टिकोण अपनाना होगा।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की भागीदारी के अवसर तो है लेकिन समान अवसर प्राप्त करने हेतु उन्हे अभी संघर्षो की लम्बी यात्रा करनी होगी। निश्चय की सशक्त होने पर महिला अपने कल्याण के लिए दूसरो पर आश्रित नहीं बल्कि स्वयं समर्थ होगी। महिला सशक्तिकरण हेतु अत्यंत आवश्यक है कि प्रशासनिक संरचना के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की गुणात्मक व संख्यात्मक सहभागिता भी अनिवार्य रूप से हो। शक्ति संरचना में महिलाओं की सहभागिता को सुनिश्चित करना होगा।

स्वामी विवेकानंद के अनुसार- ''औरतों की स्थिति में सुधार लाए बिना दुनिया का कल्याण संभव नहीं है। एक पंख से चिड़िया उड़ान नहीं भर सकती।''

आज जरूरत इस बात की है कि महिलाओं में आत्मशक्ति के बारे में चेतना जागृत की जाए जिससे न केवल महिलाओं का कल्याण होगा बल्कि वे सामाजिक विकास की प्रवर्तक भी बन सकेगी।

=====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. आधार शिला - महिला सशक्तिकरण विधिक साक्षरता अभियान पुस्तिका
2. छत्तीसगढ़ सामान्य ज्ञान - एस.एन. सलूजा
3. युगबोध छत्तीसगढ़ सामान्य ज्ञान
4. योजना - अगस्त 2000, मार्च 2001, अगस्त 2001, अप्रैल 2002, सितम्बर 2003, अगस्त 2004, अक्टूबर 2006, मार्च 2007, मार्च 2008, अक्टूबर 2008, मार्च 2010, मार्च 2012, मार्च 2013, मार्च 2014, मार्च 2015
5. कुरूक्षेत्र - अप्रैल 2003, मार्च 2005, सितम्बर 2005, मार्च 2007, मार्च 2008, मार्च 2009, जून 2010, मार्च 2013, मार्च 2014, मार्च 2015
6. समाज कल्याण - मार्च 2004, सितम्बर 2005, सितम्बर 2006, मार्च 2009, जनवरी 2010, मार्च 2014, मार्च 2015
7. शोध उपक्रम - अप्रैल 2010
8. रिसर्च लिंक - जनवरी 2006, अगस्त 2008
9. उद्योग व्यापार पत्रिका - नवम्बर 2008, जुलाई 2010, सितम्बर 2010

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

महाभारत में निरूपित राजधर्म

* राजरानी शर्मा

सारांश- राज-धर्म का अर्थ राजा का धर्म है। धार्मिक मान्यता के अनुसार क्षत्रिय को ही राजा होना उचित है। प्रजा की रक्षा और प्रजा का पालन राजा का मुख्य धर्म है। ये क्षत्रियों के ही कर्त्तव्य हैं। पुरूष सूक्त में क्षत्रियों के लिए 'राजन्य' शब्द का प्रयोग किया गया है। क्षत्रियों का वर्ग एक प्रकार से राजाओं का समूह (राजन्य) ही है। पराक्रम और रक्षा के द्वारा प्रत्येक क्षत्रिय राजधर्म का ही पालन करता है और वह 'राजन्य' पद का अधिकारी है। अतः व्यापक और सामान्य अर्थ में क्षत्रिय और राजा एक दूसरे पर्याय के समान हैं। किन्तु विशेष अर्थ में दोनों में कुछ भेद किया जा सकता है। राजा क्षत्रियों के सम्पूर्ण वर्ग का प्रतिनिधि होता है और वह एक भूखण्ड का शासक होता है। सामान्य क्षत्रिय-धर्म के अतिरिक्त उसके कुछ विशेष धर्म होते हैं। रक्षा और युद्ध की व्यवस्था एवं उनका नेतृत्व राजा का प्रमुख धर्म है। राजपद और राजधर्म की इसी विशेषता की दृष्टि से राजधर्म का पृथक् वर्णन किया गया है। शासन, न्याय, दण्ड, युद्ध, प्रजापालन आदि राजा के मुख्य धर्म हैं। महाभारत राजाओं का चरित है। अतः उसमें राजधर्म और राजनीति का विशद् वर्णन मिलता है। राजधर्म को क्षत्रिय धर्म का ही विशेष रूप मान सकते हैं। राजा के द्वारा राजधर्म के पालन के ऊपर ही प्रजा के सभी वर्णो का धर्मपालन निर्भर करता है। क्षत्रियों का सामान्य धर्मपालन भी राजधर्म पर ही अवलम्बित है। अतः राजधर्म सभी धर्मो में श्रेष्ठ है। वह समाज के धर्म-प्रसाद की नींव है। प्रजातन्त्र के शासन में भी राजधर्म का महत्त्व अक्षुण्ण रहता हैं। प्रजा के प्रतिनिधि होते हुए भी शासकों में प्रजा-पालन, धर्माचरण, राजनीति आदि के गुण अपेक्षित होते हैं। शासन का संचालन राजधर्म के अनुसार ही होता है। अन्तर केवल इतना ही है कि राजतन्त्र की परम्परा में राजा वंशपरम्परा से शासन का अधिकारी होता था और प्रजातन्त्र में वह जनमत से चुना जाता है।

महाभारत राजाओं का चरित है। अतः राजधर्मस की श्रेष्ठता और राजाओं के कर्त्तव्य का उसमें विशद् वर्णन मिलना स्वाभाविक है। उतथ्य ने राजा मान्धाता से कहा कि ''राजा की उपमा सब प्रकार से हजार नेत्रों वाले इन्द्र से दी जाती है। अतः राजा जिस धर्म को भली-भांति समझ कर निश्चित कर देता है, वही श्रेष्ठ धर्म माना गया है।'' राजा को इन्द्र के समान हजार नेत्र वाला इसलिए कहा गया है कि वह भी अपने देश के समस्त हजारों कार्यों को स्वयं देखता है तथा स्वयं कराता है। श्रेष्ठ राजा वही कहलाता है, जो प्रजा तथा देश के समस्त सुखों-दुखों को देखता रहे। राज-धर्म ही सब धर्मों में श्रेष्ठ है। क्योंकि अन्य सब धर्म इसी धर्म के आश्रय में पलते तथा बढ़ते हैं। यदि राजधर्म हमारा उचित धर्म का पालन न करे और देश के अन्य सब धर्म भी शिथिल पड़ जायेंगे और

★ संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

अपने धर्म से विचलित होने लगेंगे। राजधर्म की श्रेष्ठता बताते हुए भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा कि ''यदि दण्डनीति नष्ट हो जाय तो तीनों वेद रसातल को चले जायें और वेदों के नष्ट होने से समाज में प्रचलित हुए सारे धर्मों का नाश हो जाय। पुरातन राजधर्मस जिस क्षात्रधर्म भी कहते हैं, यदि लुप्त हो जाय तो आश्रमों के सम्पूर्ण धर्मों का ही लोप हो जायेगा।'' चारों आश्रमों के धर्म तथा वर्णों के धर्म सब राज-धर्म पर ही अश्रित रहते हैं। ब्रह्मचर्य आश्रम राजा की नीति के ऊपर ही रहता है, क्योंकि ब्रह्मचारी बालक ब्राह्मण के यहाँ आकर पढ़ते हैं तथा शहर से भिक्षा प्राप्त करके अपना उदर पालन करते हैं। यदि राजा धर्मात्मा होगा तब तो सम्पूर्ण प्रजा भी धर्मात्मा होगी और इन ब्रह्मचारियों को भिक्षा देकर उनका ब्रह्मचर्याश्रम सफल करेगी। ब्राह्मण भी उन ब्रह्मचारियों को ज्ञान की तथा विद्या की शिक्षा तभी दे सकेगा जब राजा की ओर से उसके मन में श्रद्धा आदर तथा धर्मपरायणता का भाव होगा। जंगत में हिंसक पशुओं से रक्षा का भार भी राजा पर ही होता है। यदि राजा ब्राह्मणों की रक्षा की सुविधास का ध्यान रखेगा, तभी ब्राह्मण शिष्यों को उचित शिक्षा का ज्ञान करा सकता था। इसी प्रकार गृहस्थाश्रम में रहने वालों मनुष्यों को अन्य तीनों आश्रमों के लोगों का ध्यान रखना पड़ता है। अन्य तीनों आश्रम ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा सन्यास गृहस्थाश्रम के आश्रय में ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। यदि राजा धर्मात्मा तथा दयावान होगा, तभी गृहस्थाश्रम में रहनेवाली प्रजा भी धर्मात्मा और दयावान होगी और अन्य तीनों आश्रमों के जीवन-निर्वाह का ध्यान रखेगी। इसलिए राजधर्म ही सब धर्मों में श्रेष्ठ है।

राजा के धर्म में सम्पूर्ण त्याग का दर्शन बताते हुए भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा कि ''राजा के धर्मों में सारे त्यागों का दर्शन होता है, राजधर्मों में सारी दीक्षाओं का प्रतिपादन हो जाता है। राजधर्म में सम्पूर्ण विद्याओं का संयोग सुलभ है तथा राजधर्म में सम्पूर्ण लोकों का समावेश हो जाता है।'' राजा का जीवन दूसरों को सुख पहुँचाने के लिए होता है। जब तक राजा त्यागी नहीं होगा, तब तक उसे दूसरों के सुख-दुःख का भान भी नहीं होगा। इसलिए राजा का जीवन त्यागपूर्ण होता था। राजा सम्पूर्ण विद्याओं का ज्ञाता होता था और इसी ज्ञान के कारण वह सम्पूर्ण विद्याओं जैसे बाण-विद्या, संगीत-विद्या, नृत्य-विद्या, कला की विद्या आदि का आदर-सम्मान करता था। राजा इन सभी विधाओं की उन्नति का प्रबन्ध करता था और श्रेष्ठ कलाकार को पुरस्कृत करके उसके उत्साह को बढ़ाता था। राजा को अपने लोक की तो चिन्ता रहती थी, उसे अपने परलोक के लिए भी उत्तम कार्य करने की चिन्ता रहती थी, उसे अपने परलोक के लिए भी उत्तम कार्य करने की चिन्ता रहती थी। इसलिए राजा प्रजा को तो सुखी करता ही था और पुण्य कर्मों द्वारा स्वर्ग प्राप्ति का भी प्रयत्न करता था। उत्तम कर्म करने से राजा को चारों आश्रमों का फल भी प्राप्त हो जाता था। इसके विषय में कहते हुए भीष्मजी ने युधिष्ठिर से कहा कि ''जो राजा पूजनीय पुरूषों को उनकी अभीष्ट वस्तुएं देकर सम्मानित करता है, उसे ब्रह्मचारियों को प्राप्त होने वाली गति मिलती है।'' ब्रह्मचारी पुरूष को तो जीवन भर भोगों की चीजों को त्यागकर जो पुण्यफल प्राप्त होता है, राजा को वह पुण्यफल पूजनीयों को अभीष्टस वस्तुओं को देकर तथा उन्हें सम्मानित करके प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार गृहस्थ के फल का वर्णन करते हुए भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा कि ''जो तत्वज्ञान, सर्वत्याग, इन्द्रियसंयम तथा प्राणियों पर अनुग्रह करना जानता है तथा जिसका पहले कहे

अनुसार उत्तम आचार-विचार है, उस धीर पुरूष को कल्याणमय गृहस्थाश्रम से मिलने वाले फल की प्राप्ति होती है।'' गृहस्थ लोग तो बड़े त्याग, दया तथा सदाचार से अपना जीवन व्यतीत करके जिस पुण्य फल को प्राप्त कर सकते हैं, राजा लोग उसी पुण्यफल को तत्त्वज्ञान, सर्वत्याग, इन्द्रिय संयम तथा प्राणियों पर दया करके प्राप्त कर लेता हैं। राजा का धर्म बहुत कठिन है इसलिए उसको इन अच्छे कर्मों के करने से उत्तम आश्रमों के फल की प्राप्ति हो जाती है। इतनी लक्ष्मी के अधिकारी होने पर भी जिस राजा को अहंभाव नहीं होता है, उसे ही इन आश्रमों का पुण्य फल प्राप्त होता है। राजा को वानप्रस्थाश्रम में रहने वाले पुरूष का पुण्य फल कैसे मिलता है, यह पूछने पर भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा कि ''जो नित्यप्रति संध्या-वन्दन आदि नित्यकर्म, पितृश्राद्ध, भूतयज्ञ, मनुष्य-यज्ञ (अतिथि-सेवा) इन सबका अनुष्ठान प्रचुरमात्रा में करता रहता है, उसे वानप्रस्थाश्रम के सेवन से मिलने वाले पुण्य फल की प्राप्ति होती है।'' जो राजा संकट में पड़े हुए अपने सजातियों, सम्बन्धियों और सुहृदों का उद्धार करता है उसे भी वानप्रस्थ-आश्रम द्वारा मिलने वाले फलों की प्राप्ति हाती है। जो राजा जगत के श्रेष्ठ पुरूषों और आश्रमियों का निरन्तर सत्कार करता है तथा बलिवश्वदेव के द्वारा प्राणियों को उनका भाग समर्पित करता है, शिष्ट पुरूषों की रक्षा के लिए अपने शत्रु के राष्ट्रों को कुचल डालता है, उसे वानप्रस्थ आश्रम से प्राप्त होने वाला पुण्य मिलता है। जिस वानप्रस्थ-आश्रम में मनुष्य पच्चीस वर्षों तक लगातार रहकर दुःख उठाता हुआ रहता है तथा उसका जो फल उसे कठोर तपस्या से प्राप्त होता है, वह फल राजा को कर्त्तव्य पालन करने से प्राप्त होता जाता है। यह राजधर्म की श्रेष्ठता का ही फल है। इसी प्रकार संन्यास आश्रम से प्राप्त होने वाले फल की प्राप्ति के विषय में भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया कि ''चारों आश्रमों का पालन करने वाले सदाचारपरायण पुरूषों को जिन फलों की प्राप्ति होती है, वे ही फल राग-द्वेष छोड़कर दण्डनीति के अनुसार बर्ताव करने वाले राजा को भी प्राप्त होते हैं। यदि राजा सब प्राणियों पर समान दृष्टि रखने वाला है तो उसे सन्यासियों को प्राप्त होने वाली गति प्राप्त होती है।'' समस्त प्राणियों के पालन तथा अपने राष्ट्र की रक्षा करने से राजा को नाना प्रकार के यज्ञों की दीक्षा लेने का पुण्य प्राप्त होता है। जो प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय करता है, क्षमाभाव रखता है, आचार्य की पूजा करता है, इष्ट मन्त्र का जप और देवताओं का सदा पूजन करता है, जो राजा युद्ध में प्राणों की बाजी लगाकर निश्चय के साथ शत्रुओं का सामना करते-करते मर जाता है, जो सदा समस्त प्राणियों के प्रति माया और कुटिलता से रहित यथार्थ व्यवहार करता है, उसे संन्यास-आश्रम से प्राप्त होने वाला पुण्य फल प्राप्त होता है।

युगों का प्रवर्त्तक भी राजा ही होता है, ऐसा धर्मशास्त्रों का कथन है। महाभारत में भी कुन्ती ने श्रीकृष्ण से कहा है कि ''अपने सत्कर्मों द्वारा सतयुग उपस्थित करने के कारण राजा को अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति होती है। त्रेता की प्रवृत्ति करने से भी उसे स्वर्ग प्राप्ति होती है। किन्तु वह अक्ष्य नहीं होता।'' इसका मतलब यही है कि राजा जैसी नीतिवाला होगा उसकी प्रजा भी वैसे ही आचरण वाली हो जाती है। इसीलिए राजा को युग का प्रर्वतक कहते हैं। यदि राजा सद्गुणों वाला होगा तो उसकी प्रजा भी सद्गुणों वाली होगी और उस राजा का समय सतयुग जैसा कहलायेगा। सद्गुणों से राजा देश में ऐसी नीति रखेगा, जिससे शहर में चोर, डाकू आदि दुष्ट लोगों की कठोर दण्ड से समाप्ति हो जाय

तो सब लोग सद्‌गुणों वाले ही रहेंगे और देश में सुख-शान्ति रहेंगी। कहते हैं कि चन्द्रगुप्त के राज्य में लोग घरों में ताले भी नहीं लगाते थे और सब निश्चित तथा निर्भय होकर सोते थे, किसी को चोरी का डर नहीं था। उस राज्य में सबको सतयुग ही लगता होगा। ऐसे ऐसे कठोर नीति वाले राजा हुए हैं, जिन्होंने चोर, डाकुओं को तथा ऐसे ही बुरे आचरण वाले मनुष्यों को फांसी कमरे में न देकर सड़क पर, पेड़ों पर लटका कर दिलवाई थी, जिससे उनकी दुर्गति को समस्त राहगीर दखें और उसमें समझे कि बुरे काम करने से क्या होगा। इस डर के कारण बहुत से लोग तो स्वयं ही सुधर जायेंगे और देश में शान्ति बनी रहेगी। राजा को युग का निर्माता कहना उचित ही है - ''यथा राजा तथा प्रजा'' वाली कहावत सही ही लगती है। जिस जिस देश में अवनति हुई है, उस देश का इतिहास जानने से ज्ञात होता कि उस देश का राजा स्वयं ऐसा ही था, जो कुछ न तो देश की उन्नति कर सका और न प्रजा को सुख-शान्ति दे सका।

सब देवताओं की भांति राजा भी पूजनीय होता है। युधिष्ठर के यहाँ अश्वमेध के सहस्त्रों राजा इकट्ठे हुए थे, उस समय भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा था कि ''यदि राजा एक वर्ष बिताकर अपने यहाँ आवें, तो उनके लिए अर्ध्य निवेदन करके उनकी पूजा करनी चाहिए, ऐसा शास्त्रज्ञ पुरूषों का कथन है, ये सभी नरेश दीर्घकाल के बाद आये हैं।''

क्षत्रिय राजा का सबसे पहला धर्म है प्रजा का पालन करना। प्रजा की आय के छठे भाग का उपभोग करने वाला राजा धर्म का फल पाता है। राजा के प्रधान कर्त्तव्य बताते हुए शिवजी ने पार्वती को बताया कि ''इन्द्रिय-संयम, स्वाध्याय, अग्निहोत्र कर्म, दान, अध्ययन, यज्ञोपवीत-धारण, यज्ञानुष्ठान, धार्मिक कार्य का सम्पादन, पोष्यवर्ग का भरण-पोषण, आरम्भ किये हुए कर्म को सफल बनाना, अपराध के अनुसार उचित दण्ड देना, वैदिक आदि कर्मो का अनुष्ठान करना, व्यवहार में न्याय की रक्षा करना और सत्यभाषण में अनुरक्त होना, ये सभी राजा के लिए धार्मिक कर्म हैं। राजा को इन्द्रिय-संयम होना चाहिए, जिससे उसकी बुद्धि उचित ढंग से सब के अपराधों को देख सके और दूसरों की स्त्रियों के साथ सद्व्यवहार कर सके। स्वाध्याय, राजा के लिए नित्य कर्म है, जिससे उसका मन नियमों में बंधा रहे ओर अनुचित बातों की ओर राजा का मन न जाये। जो राजा नित्य कर्म, स्वाध्याय तथा धार्मिक कार्यो में नित्य कर्म है, जिससे उसका मन नियमों में बंधा रहे और अनुचित बातों की ओर राजा का मन न जाये। जो राजा नित्य कर्म, स्वाध्याय तथा धार्मिक कार्यों में नित्य लगा रहता है, उसकी प्रजा सुखी तथा धर्माचरण करने वाली रहती है। श्रेष्ठ राजा का राज्य सदैव सबको सुख देने वाला होता है। संजय से पाण्डवों की बाते करते समय श्रीकृष्ण ने श्रेष्ठ राजा के कर्त्तव्य इस प्रकार बताये कि ''राजा सावधानी के साथ इन सब वर्णों का पालन करते हुए इन्हें अपने-अपने धर्म में लगावे। वह कामभोग में आसक्त न होकर समस्त प्रजाओं के साथ समान भाव से बर्ताव करे और पापपूर्ण इच्छाओं का कदापि अनुशरण न करे।'' चारों वर्णो की रक्षा करना तथा उन्हें अपने धर्मो में प्रवृत बनाये रखना राजा का ही कर्त्तव्य है। यदि राजा स्वंय अपने धर्म में आसक्त रहेगा तो आधे लोग तो स्वयं ही अपने-अपने धर्मो के अनुसार आचरण करेंगे और शेष आधे लोग राजा के भय से उचित मार्ग पर चलेंगे। यदि राजा का भाव प्रजा की ओर समानता का रहेगा तो प्रजा भी राजा के बताये हुए मार्ग पर ही चलेगी, क्योंकि जो राजा सारी प्रजा को समान दृष्टि से देखता है, उसे प्रजा ईश्वर

के समान पूजनीय मानती है। इसलिए राजा को अपनी प्रजा में ऐसा व्यवहार रखना चाहिए जिससे प्रजा किसी भी प्रकार असन्तुष्ट होकर राजा की आलोचना न करे और राजा को श्रेष्ठ एवं देव पुरूष समझे। श्रीकृष्ण ने संजय से कहा कि ''यदि राजा को ज्ञात हो जाय कि उसके राज्य में कोई सर्वधर्म सम्पन्न श्रेष्ठ पुरूष निवास करता है, तो वह उसी को प्रजा के गुण-दोष का निरीक्षण करने के लिए नियुक्त करे तथा उसके द्वारा पता लगवावे कि मेरे राज्य में कोई पाप कर्म करने वाला तो नहीं है।'' राजा यदि श्रेष्ठ पुरूषों का आदर देगा, तो वे श्रेष्ठ पुरूष भी राजा के लिए अपना तन, मन, सब कुछ प्रसन्न्ता से देंगे। श्रेष्ठ पुरूषों के आधिक्य से राजा के सम्पूर्ण कार्य विश्वास और अपनेपन से पूर्ण होंगे। प्रत्येक कार्य करने वाला राजा के काम को अपना समझ कर ही करेगा और इससे राजा के देश की उन्नति होगी और वह राजा दूर-दूर तक प्रसिद्धि पायेगा।

राजा का आचरण सदा धर्म से युक्त होना चाहिए। धर्म का आचरण करने वाले राजा को ही सद्बुद्धि प्राप्त होप्ती है और सद्बुद्धि से सब संकट दूर होते हैं। जो राजा धर्म का आचरण नहीं करता है, उसके सब कर्म व्यर्थ होते हैं तथा सदैव संकटों में फंसा रहता है। धर्म से विमुख राजा का कभी उद्धार नहीं होता और न वह राजा अपना जीवन शान्ति से व्यतीत कर सकता है। उसके राज्य में प्रजा अशान्त जीवन शान्ति से व्यतीत कर सकता है। उसके राज्य में प्रजा अशान्त रहती हैं तथा चोर, डाकुओं आदि दुष्ट लोगों का आतंक बढ़ जाता है और प्रजा में त्राहि-त्राहि मची रहती है। धर्म से विमुख राजा की प्रजा विद्रोह करने को उद्यत रहती है और समय देखकर विद्रोह हो भी जाता है। इसलिए राजा को सदैव धर्म का आचरण करना चाहिए। राजा धृतराष्ट्र से कणिक ने कहा कि ''राजा यदि संकट में हो तो कोमल या भयंकर - जिस किसी भी कर्म के द्वारा उस दुरवस्था से अपना उद्धार करे, फिर समर्थ होने पर धर्म का आचरण करे।'' धर्म से विमुख राजा भी जब संकट में पड़ जाता है, तभी उसे धर्म का ज्ञान होता है और संकट के छूट जाने पर यदि वह सद्बुद्धि रखे और धर्म का आचरण करना आरम्भ कर दे, तो वह संकट भी उसके मार्ग दर्शन कराने वाला सिद्ध होता है। मनुष्य का प्रायः स्वभाव ऐसा ही देखा जाता है कि जब तक उस पर संकट नहीं पड़ता, तब तक वह बुद्धि को काम में नहीं लाता और आलस्य में रहकर अनुचित कार्य करता रहता है। किन्तु यदि किसी को संकट से ज्ञान हो जाय तो यह सबसे उत्तम मार्ग है। संकट से ज्ञान होने वाले को भी सद्बुद्धि वाला ही समझना चाहिए। धर्म की प्रशंसा करते हुए द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा कि ''यदि धर्म की रक्षा की जाय, तो वह धर्म भी स्वयं राजा की रक्षा करता है। किन्तु वह आपकी रक्षा नहीं कर रहा है।'' यदि राजा धर्म का आचरण करने वाला होता है, तो या तो उस पर संकट आते ही नहीं और यदि आते भी है, तो धर्म से वह सब टल जाते हैं अर्थात् धर्म ही उन्हें नष्ट कर देता है। धर्मात्मा राजा की सुरक्षित प्रजा यहाँ जिस धर्म का अनुष्ठान करती है, उसका चौथाई भाग उस राजा को मिल जाता है। कुन्ती ने श्रीकृष्ण से कहा कि तुम युधि ाष्ठिर से यह संदेश कहना कि ''यदि राजा धर्म का पालन करता है, तो उसे देवत्व की प्राप्ति होती है और यदि अधर्म करता है तो नरक में ही पड़ता है।'' इसका मतलब यही है कि यदि राजा धर्मात्मा होगा, तो उसकी प्रजा उसे ईश्वर तुल्य मानने लगेगी और वह इहलोक तथा परलोक में देवत्व को प्राप्त करता है। अधर्म करने वाला राजा इहलोक में भी अशान्ति तथा असन्तोष प्राप्त करता है तथा प्रजा द्वारा अपमानित होता है और परलोक

भी बिगाड़ लेता है अर्थात् नकर में नाना प्रकार के दुःख उठाता है। युधिष्ठिर के धर्ममय स्वभाव को देखकर श्रीकृष्ण ने उनसे कहा कि ''राज्यलाभ की अपेक्षा धर्म महान् है। धर्म की वृद्धि के अिलए तप को ही प्रधान सामधन बताया है। आप सत्य और सरलता आदि सद्गुणों के साथ-साथ स्वधर्म का पालन करते हैं, अतः आपने इहलोक और परलोक दोनों को जीत लिया है।'' आप जैसे जो राजा भी कामना से प्रेरित होकर कुछ नहीं करते हैं तथा धन के लोभ से धर्म का त्याग नहीं करते हैं, वे धर्म के प्रभाव से ही धर्मराज कहलाते हैं, कृष्ण ने युधिष्ठिर से ऐसा कहा। राज्य की अपेक्षा धर्म महान् होता है, इसलिए राजा को धर्म में रत रहना चाहिए।

अष्टक-ययाति संवाद में अष्टक ने अपने सम्पूर्ण लोक राजा ययाति को देते हुए कहा कि तुम मेरे ही लोकों में धूमते रहना और नीचे न उतरना, मैं तुम्हें अपने लोकों को देता हूँ। इस पर ययाति ने कहा कि दान लेना केवल ब्राह्मण का ही कर्त्तव्य है, धर्मशास्त्रों में अन्य और किसी को दान का अधिकारी नहीं बताया है। इसलिए आपके द्वारा दिये जाने वाले लोकों को मैं ग्रहण नहीं करता हूं क्योंकि ये मेरे लिए उचित कार्य नहीं है। ययाति ने अष्टक से कहा कि ''कोई भी राजा समान तेजस्वी होकर दूसरे से पुण्य तथा योग क्षेम की इच्छा न करे। विद्वान् राजा दैववश भारी विपत्ति में पड़ जाने पर भी कोई पापमय कार्य न करें।'' राजा को महान् संकट पड़ने पर भी अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए। राजा को धर्म की रक्षा राज्य से भी बढ़कर करनी चाहिए। राज्य का सुख तो थोड़े से समय का ही होता है, वृद्धावस्था आते ही उसे पुत्र को सौंपना पड़ना पड़ता है, किन्तु धर्म ही एक ऐसी वस्तु है, जो इहलोक में तो अन्त समय तक काम आती ही है, मृत्यु के बाद परलोक में भी धर्म ही सहायक बनता है, ऐसा धर्मशास्त्रों का मत है। इसलिए राजा को धर्म ही सहायक बनता है, ऐसा धर्मशास्त्रों का मत है। इसलिए राजा को धर्म का ही पालन कठिन से कठिन समय पड़ने पर भी करते रहना चाहिए। मृत्यु के समय न पुत्र साथ जाता है, न बन्धु-बान्धव और न स्त्री ही, केवल धर्म ही साथ रहता है और उसी से सद्गति मिलती है। धनदौलत, मकान - जायदाद, ठाट-बाट सब क्षणिक और संसार में रहने तक के ही साथी हैं। धर्म अमरवस्तु है जो मृत्युपर्यन्त तक साथ जाती है। युधिष्ठिर ने भीष्म जी से धर्मात्मा राजा के आचरण के विषय में पूछा तब भीष्मजी ने वसुमना नामक राजा को वामदेवजी ने जैसा आचरण बताया था उसका उदाहरण देकर इस प्रकार कहा कि वसुमना राजा को वामदेवजी ने यह व्यवहार बताया कि ''जो भूपाल कहा कि वसुमना राजा कों वामदेवजी ने यह व्यवहार बताया कि ''जो भूजाल धर्म को अर्थसिद्धि की अपेक्षा भी बड़ा मानता है और उसी को (धर्म को) बढ़ाने में अपने मन और बुद्धि का उपयोग करता हैं, वह धर्म के कारण बड़ी शोभा पाता है।'' इसके विपरीत जो राजा अधर्म का व्यवहार या आचरण करता है, उसे धर्म और अर्थ दोनों पुरूषार्थ शीघ्र छोड़कर चले जाते हैं। अधर्म का आचरण करने वाले राजा की शक्ति भी क्षीण हो जाती है और उसका पराक्रम भी लुप्त हो जाता है। अधर्मी राजा के राज्य में सत्पुरूषों का लोप हो जाता है या तो सत्पुरूष स्वयं ही धर्मात्मा राजा के राज्य में चले जाते हैं या एकान्तवास करके अपने सत्कर्म में लगे रहते हैं और ईश्वर से सर्वदा राजा को सद्बुद्धि प्रदान करने की प्रार्थना करते रहते हैं। भीष्मजी ने युधिष्ठिर से कहा कि राजा मान्धाता को क्षत्रियों के धर्म के विषय में जो बातें बताई थी, वह तुम्हें बताता हूँ। भीष्मजी ने कहा कि उतथ्य ने इस

प्रकार कहा है कि ''जब राजा व्यापारियों की पुत्र के समान रक्षा करता है और धर्म की मार्यादा को भंग नहीं करता, वही राजा का धर्म कहलाता है।'' इसी प्रकार जो राजा पर्याप्त दक्षिणा वाले यज्ञों द्वारा श्रद्धापूर्वक यजन करता है, वह धर्मात्मा राजा कहलाता है। जो भूख गरीबों को भोजन देकर स्वयं भोजन करता है, वह राजा धर्मात्मा समझा जाता है। जो गरीबों को धन की सहायता देकर बलवान बनाता है, वह राजा भी धर्मात्मा कहलाता है। वैशम्पायन जी ने भीष्मजी से राजा के धर्म के विषय में बताने को कहा तब भीष्मजी ने कहा कि ''राजा समस्त प्रजाओं को अपने-अपने धर्मों में स्थापित करके उनके द्वारा शान्तिपूर्ण समस्त कर्मों का धर्म के अनुसार अनुष्ठान करावे।'' राजा स्वयं तो धर्म का आचरण करे ही किंतु अपनी चारों वर्णों की प्रजा को भी उनके धर्म के अनुकूल आचरण करने के लिए प्रोत्साहित करें और समय-समय पर उन्हें धर्म का महत्व बताते हुए उन्हें धर्म के आचरण की ओर ही सचेत रखे। उतथ्य ने राजा मान्धाता को राजा के धर्माचरण के विषय में इस प्रकार कहा कि ''सम्पूर्णप्राणी धर्म के ही आधार पर स्थित हैं और धर्म राजा के ऊपर प्रतिष्ठित है। जो राजा अच्छी तरह धर्म का पालन और उसके अनुकून शासन करता है, वही दीर्धकाल तक पृथ्वी का स्वामी बना रहता है।'' सारी प्रजा राजा के व्यवहार पर ही दृष्टि लगाये रहती है। यदि राजा धर्मात्मा होता है तो उसकी प्रजा भी धर्म का आचरण करने वाली होती है। राजा को संसार समुद्र से पार करने वाली नौका के समान बताते हुए भीष्म जी ने युधिष्ठिर से कहा कि ''राजधर्म एक नौका के समान है। वह नौका धर्म रूपी समुद्र में स्थित है। सत्वगुण ही उस नौका का संचालन करने वाला बल (कर्णधार) है, धर्मशास्त्र ही उसे बांधने वाली रस्सी है, त्यागरूपी वायु का सहारा पाकर वह मार्ग पर शीघ्रतापूर्वक चलती है, वह नाव ही राजा को संसार समुद्र से पार कर देगी।'' इस संसार रूपी समुद्र को राजा ही अपने आचरण द्वारा प्रजा से पार करता है। यहां राजा रूपी नौका धर्मशास्त्र रूपी रस्सी से बंधती है अर्थात् राजा धर्मशास्त्र के नियमों से बंधा रहता है और उन्हीं नियमों के आधार पर अपना जीवन श्रेष्ठ बनाता है। राजा में धर्म का पालने करने से जिस सत्त्वगुण का उदय होता है, वही उसका बल अथवा पराक्रम होता है। त्याग से राजा का जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है और त्याग से ही वह अपने सम्मान का ध्यान रखकर ज्ञानी विद्वानों का सम्मान करता है, वहीं राजा श्रेष्ठ होता है।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. सहस्त्राक्षेण राजा हि सर्वर्थवोपमीयते।
   स पश्यति च यं धर्म स धर्मः पुरूषर्षभ।।
   शान्तिपर्व - अध्याय 91, श्लो. 45
2. मज्जेत् त्रयी दण्डनीतौ हतायां
   सर्वेस धर्माः प्रक्षयेयुर्विबुद्धाः।
   सर्वे धर्माश्चाश्रमाणां हताः स्युः
   क्षात्रे त्यक्ते राजधर्मे पुराणे।
   शान्तिपर्व - अध्याय 36, श्लो. 28
3. सर्वे त्यागा राजधर्मेषु दृष्टाः
   सर्वा दीक्षा राधर्मेषु चोक्ताः।
   सर्वा विद्या राजधर्मेषु युक्ताः

सर्वे लोका राजधर्मे प्रतिष्टाः।।
शान्तिपर्व - अध्या. 36, श्लो. 29

4. अर्हान् पूजयतो नित्यं सविभागेन पाण्डव।
सर्वतस्तस्य कौन्तेय भैक्ष्याश्रमपदं भवेत्।।
शान्तिपर्व - अध्या. 66, श्लो. 7

5. वेति ज्ञानंविसर्ग च निग्रहानुग्रह तथा।
मथोक्तवृत्तेर्धीरस्य क्षेमाश्रमपदं भवेत्
शान्तिपर्व - अध्या. 66, श्लो. 6

6. आन्हिक पितृयज्ञाच भूतयज्ञान् समानुषान्
कुर्वतः पार्थ विपुलान् वन्याश्रमपदं भवेत्
शान्तिपर्व - अध्या. 66, शलो. 10

7. सर्वाण्येतानि कौन्तेय विद्यन्ते मनुजर्षभ।
साध्वाचारप्रवृत्तानां चातुराश्रम्यकारिणाम्।।
अकामद्वेषयुक्तस्य दण्डनीत्या युधिष्ठिर।
समदर्शिनच भूतेषु भैक्ष्याश्रमपदं भेवत्।।
शान्तिपर्व - अध्याय 66, श्लो. 4,5

8. कृतस्य करणाद् राजा स्वर्गमत्यन्तश्नुते।
त्रेतायाः करणाद् राजा स्वर्ग नात्यन्तमश्नुते।,
उद्योगपर्व - अध्याय 132, श्लोक 18

9. एतानर्ध्यानभिज्ञगतानाहुः संवत्सराषितान्।
त इमे कालपूगस्य महतोऽस्मानुपागताः।
सभापर्व - अध्याय - 63, श्लोक 24

10. तस्य राज्ञः परो धर्मो दमः स्वाध्याय एव च।
अग्निहोत्रपरिस्पन्दो दानाध्ययनमेव च।।
यज्ञोपवीतधरण यज्ञो धर्म क्रियास्तथा।,
भृत्यानां भरणं धर्मः कृते कर्मष्यमोघताः।।
सम्यग्दण्डे स्थितिर्धर्मो धर्मो वेदक्रतुक्रियाः।
अनुशासन पर्व - अध्याय 141, 49-50-51

11. एतान् राजा पालयन्प्रमत्तो।
नियोजयन् सर्ववर्णन् स्वधर्मे।
अकामात्मा समवृतिः प्रजासु
नाधार्मिकाननुरूध्येत कामान्।
उद्योगपर्व - अध्याय - 29, श्लोक 27

12. श्रे यास्तस्माद् यदि विद्येत कश्चि
दभिज्ञातः सर्वधर्मोपपन्नः
स तं द्रष्टुमनुशिष्यात् प्रजानां
न चैतद् बुध्येदिति तस्मिन्नसाधुः।।
उद्योगपर्व - अध्याय 29, श्लोक 28

13. कर्मणां येन केनैव मृदुना दारूणेन च।
उद्धरेद् दीनमात्मानं समर्थो धर्मचारेत्।
आदिपर्व - अध्या. 139, श्लो. 72

14. राजानं धर्मगोप्तारं धर्मो रक्षति रक्षितः।
इति में श्रु तमार्यारणं त्वां तु मन्ये न रक्षति।।
वनपर्व - अध्या. 30, श्लो. 8

15. राजा चरित चेद् धर्म देवत्वायैव कल्पते।
स चेदधर्म चरित नरकायैव गच्छति।।
उद्योगपर्व अध्या. 162, श्लो. 16

16. धर्मः परः पाण्डव राज्यलाभात्
तस्यार्थमाहुस्तप एव राजन्।
सत्यार्जवाभ्यां चरता स्वधर्म
जितस्त्वयायं च परच लोकः।।
वनपर्व - अध्याय 183, श्लो. 16

17. धर्म्य मार्ग यतमानो यशस्यं
कुर्यान्नृपो धर्ममवेक्षमाणः।
न मद्विधो धर्मबुद्धिः प्रजानन्
कुर्यादवें कृपणं मां यथाऽऽत्थ।।
आदिपर्व - अध्या. 92, श्लो. 18

18. अर्थसिद्धेः परं धर्म मन्यते यो महीपतिः।
वृद्धयां च कुरूते स धर्मेण विराजते।।
शान्तिपर्व - अध्या. 92, श्लो. 7

19. यदा शारणिकान् राजा पुत्रवत् परिरक्षति।
भिनति च न मर्यादां स राज्ञो धर्म उच्यते
शान्तिपर्व - अध्या. 91, श्लो. 36

20. स्वेषु धर्मेष्ववस्थाप्य प्रजाः सर्वा महीपतिः।
धर्मेण सर्वकृत्यानि शमनिष्ठानि कारयेत्।।

21. धर्मे तिष्ठन्ति भूतानि धर्मो राजनि तिष्ठति।
तं राजा साधु यः शास्ति स राजा पृथिवीपतिः
शान्तिपर्व - अध्या. 90, श्लो. 5

22. धर्मे स्थिता सत्त्ववीर्या धर्मसेतुवटारका।
त्यागवाताध्वगा शीघ्रा नौस्तं संतारयिष्यति।।
शान्तिपर्व - अध्या 66, श्लो. 37

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

मध्यप्रांत विधान परिषद का प्रथम निर्वाचन एवं कार्यकाल

(सन् 1920 ई. से 1923 ई. तक)

* महेन्द्र कुमार सार्वा

सारांश– *दि सेंन्ट्रल प्राविसेंस नेशलन एसोशिएसन के निर्वाचित सदस्यों में देशभक्ति और स्वतंत्रता प्राप्ति की भवना कूट–कूट कर भरी थी। 1920 के निर्वाचन में भाग लेकर इन्होंने प्रजातंत्र की पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करने का प्रयास किया और अपने कार्यो से जनता में जागृति पैदा किये।*

माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार (1919) के द्वारा प्रांतो मे एक सदनात्मक विधान मण्डल की स्थापना की गयी। इसे प्रांतीय विधान परिषद के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम द्वारा ब्रिटिश भारत के प्रांतो में द्वैध शासन व्यवस्था स्थापित की गई। इस सदन के सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा विस्तृत मताधिकार के आधार पर चुने जायेगें। साथ ही इसमें साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की दोषपूर्ण व्यवस्था को भी लागू किया गया।

मध्यप्रांत बरार एवं विधान परिषद की रचना इस प्रकार थी :- यह 73 सदस्यीय विधान मंडल होगा जिसमें 55 सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित, 10 सदस्य सरकारी पदेन व नामांकित होगें तथा8 नामांकित गैर सरकारी सदस्य होगें इनका कार्यकाल तीन वर्ष का होगा जिसे एक वर्ष तक बढ़ाया भी जा सकता था, लेकिन प्रांतीय गर्वनर उसे समय से पहले विघटित कर सकता था।

द्वैध शासन प्रणाली में प्रांतीय विषयों को दो भागों रक्षित और हस्तान्तरित में बांटा गया था संरक्षित विषय गर्वनर के अधीन व हस्तांतरित विषय मंत्रियों के अधीन था। मंत्रिगण प्रांतीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी थे तथा उसके प्रसाद पर्यन्त अपने पद पर रह सकते थे। भारत में पहली बार आंशिक रूप से उत्तरदायी सरकार की स्थापना की गई। वास्तव में द्वैध शासन एक अनोखा प्रयोग था जिसका प्रयोजन भारतीयों को उत्तरदायी शासन की कला में प्रशिक्षण देना था।

1920 का निर्वाचन

भारत शासन अधिनियम 1919 के अन्तर्गत मध्यप्रांत और बरार की नवगठित विधान परिषद के लिए नवम्बर 1920 में निर्वाचन किए गए। कांग्रेस जैसी राष्ट्रीय पार्टी और मुस्लिम लीग ने इस चुनाव का बहिष्कार किया।

कांग्रेस ने 1919 के अधिनियम को अपर्याप्त मानकर कौसिल प्रवेश को स्वतंत्रता व उत्तरदायी प्रशासन की प्राप्ति के लिए बेईमानी माना व इसका विरोध किया। किन्तु कांग्रेस का एक गुट निर्वाचन में भाग लेकर कौंसिल प्रवेश के पक्षधर थे, यह उदार वादियों का गुट था।

★ सहायक प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय दू.ब. महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मध्यप्रांत एवं बरार में कांग्रेस के कुछ ऐसे नरमदलीय नेता थे, जो कौंसिल बहिस्कार के प्रस्ताव से सहमत नहीं थे, इन लोगों ने जनवरी 1920 में ही ''द सेन्ट्रल प्राविसेसं नेशनल एसोशिएसन'' नामक नये राजनीतिक दल की स्थापना की। इस एसोशिएसन का उद्देश्य नरमदलीय कांग्रेस नेताओं का विधान परिषद के निर्वाचन में भाग लेने हेतु कांग्रेस से एक पृथक राजनीतिक मंच प्रदान करना था। इस दल के अध्यक्ष श्री पी.के. बोस थे।

विधान परिषद में जाने का विवाद कांग्रेस के दोनों गुटों में उस समय और गहरा हो गया जब महात्मागांधी के असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव को अंतिम स्वीकृति प्रदान करने हेतु कांग्रेस का विशेष अधिवेशन दिसम्बर 1920 ई. में नागपुर में आयोजित किया गया। मध्यप्रांत के खापर्डे व मुंजे जैसे अनेक नेताओं का विचार था कि इस अधिवेशन का अध्यक्ष सी. राघवाचार्य को बनाया जाय जो असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव का विरोध और विधान परिषद प्रवेश का समर्थन कर सकते हैं, किन्तु श्री राघवाचार्य ने अपने अध्यक्षीय भाषण में असहयोग आन्दोलन का समर्थन करते हुए कहा कि '' इस प्रस्ताव को बिना किसी भय या पक्षपात के स्वीकार करते हैं कि असहयोग आन्दोलन द्वारा हम अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेगें।

नवम्बर 1920 के निर्वाचन मुस्लिम लीग ने भाग नहीं लिया। खिलाफी के विरूद्ध थे जिसका कारण था प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति पर टर्की साम्राज्य का विभाजन व खलीफा के सम्मान में कमी लाना। इसी परिपेक्ष्य मुस्लिम लीग ने भारत में खिलाफत आन्दोलन प्रारंभ कर दिया।

कांग्रेस के सदस्यों ने जिन निर्वाचन क्षेत्रों से अपनी उम्मीदवारी घोषित की थी असहयोग आन्दोलन के फलस्वरूप अपनी उम्मीदवारी वापस ले ली। जिन सदस्यों ने अपने नाम वापस लिए उनका विवरण निम्नानुसार है।

तालिका -1

कं.	उम्मीद्वारों का नाम	निर्वाचन क्षेत्र
1	डॉ. बी.एस. मुंजे	नागपुर
2	एन.पी.खरे	नागपुर
3	एन.आर. अल्तेकर	नागपुर
4	एन.के. पाध्ये	नागपुर
5	एस.के. बारलिंगे	नागपुर
6	एन.के. वैद्य	नागपुर
7	एम.एस. अणे	नागपुर
8	एम.आर. गोलकर	नागपुर
9	अव्दुल रहीम	बालाघाट
10	बलंवत राव देशमुख	चांदा
11	रविशंकर शुक्ल	रायपुर
12	यादव राव देशमुख	रायपुर
13	पी.यू. खारघोरे	वर्धा
14	एन.आर. देशमुख	वर्धा

15	बी.जी. घाटे	काटोल
16	बी.एस. खापर्डे	अमरावती
17	जे.के. असनारे	अमरावती
18	एस.जी. सांचे	अमरावती
19	व्हाई. एम. काले	बुलढ़ाना
20	बी.डी. पिम्पिलिकर	मलकापुर
21	विष्णुदत्त शुक्ल	सिहोर
22	गोविन्द दास	जबलपुर
23	श्यामसुन्दर	जबलपुर
24	भवानी शंकर नियोगी	सिवनी
25	एस.एन. नायक	मंडला
26	माधवराव श्रीकरी	रामटेक
27	बी.के. भगत	सागर
28	घनश्याम सिंह गुप्त	दुर्ग
29	ठाकुर छेदीलाल	बिलासपुर
30	डॉ. ई. राघवेन्द्र राव	बिलासपुर
31	सी.एम. ठक्कर	रायपुर

यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि असहयोग आन्दोलन के परिपेक्ष्य में कांग्रेस व मुस्लिम लीग ने मतदाताओं से भी निर्वाचन में मत न देने की अपील की। दोनों दलों ने संयुक्त प्रपत्र तैयार कर हस्ताक्षर लेने का अभियान भी चलाया। मतदाताओं के लिए निर्धारित प्रपत्र इस प्रकार थी-

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग द्वारा पारित प्रस्तावों के परिपेक्ष्य में हम क्षेत्र के मतदाता सभी उम्मीदवारों को सूचित करते हैं कि विधान परिषद में हमारा कों प्रतिनिधित्व नहीं होगा और यदि उन्होंने निर्वाचन में भाग लिया तो यह हमारे इच्छा के विरूद्ध करेगें।

अभिमत- इस प्रकार विधान परिषद के प्रथम निर्वाचन में कांग्रेस व मुस्लिम लीग के बहिष्कार से अनेक क्षेत्रों में निर्वाचन ही नहीं हुए व जहां हुए वहां मतदान कम हुआ।

निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट हो जाएगा कि मध्यप्रांत की विधान सभा के प्रथम निर्वाचन किस प्रकार सम्पन्न हुए :-

तालिका-2

क्र.	निर्वाचन क्षेत्र सामान्य (शहरी)	मतदाताओं की संख्या	मतदान की संख्या	विशेष
1	जबलपुर नगर	2380	824	
2	जबलपुर संभाग	3241		निर्वाचन नहीं
3	छत्तीसगढ़ संभाग	2911		''—''
4	नर्मदा संभाग	3629	478	
5	नागपुर नगर	3045	1145	
6	नागपुर संभाग	3049		निर्वाचन नहीं

	(ग्रामीण)			
7	जबलपुर जिला दक्षिण	2580	1109	
8	जबलपुर जिला	2352	1573	
9	दमोह जिला	3114		निर्वाचन नहीं
10	सागर जिला	5901	220	
11	सिवनी जिला	3532		निर्वाचन नहीं
12	रायपुर जिला (उत्तर)	3523	709	
13	रायपुर जिला (दक्षिण)	1978		निर्वाचन नहीं
14	बिलासपुर जिला	2972		निर्वाचन नहीं
15	दुर्ग जिला	5616		निर्वाचन नहीं
16	होशंगाबाद जिला	6517		निर्वाचन नहीं
17	निमाड़ जिला	3976	1977	
18	नरसिंहपुर जिला	4106		
19	छिंदवाड़ा जिला	3707		
20	बैतूल जिला	3665		
21	नागपुर जिला पूर्व	3201	449	
22	नागपुर जिला पश्चिम	5536		
23	वर्धा तहसील	2428		
24	वर्धा जिला	2408		
25	चांदा जिला	2929		
26	भण्डारा जिला			
27	बालाघाट जिला			
	मुस्लिम शहरी/ग्रामीण			
28	जबलपुर संभाग		339	
29	छत्तीसगढ़ संभाग			निर्वाचन नहीं
30	नर्मदा संभाग			
31	नागपुर संभाग			निर्वाचन नहीं
	विशेष निर्वाचन क्षेत्र			
32	जबलपुर व नर्मदा संभाग के भूमिपति			
33	नागपुर व छत्तीसगढ़ ''—''			
34	मध्यप्रांत व बरार खान संगठन		33	
35	''—'' वाणिज्य व उद्योग			निर्वाचन नहीं

अभिमत— उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मध्यप्रांत व बरार के नवगठित विधान परिषद के प्रथम निर्वाचन में अनेक निर्वाचन क्षेत्र में मतदान नही हुए व जहां हुए वहां बहुत कम मतदाताओं ने मतदान में भाग लिए फलतः निर्वाचन में द सेन्ट्रल प्राविसेंस नेशनल एसोशिएशन के अधिकांश सदस्य ही निर्वाचित हुए।

मध्यप्रांत व बरार विधान परिषद के कार्य

अभिमत— उदार वादियों द्वारा गठित द सेन्ट्रल प्राविसेंस नेशनल एसोशिएशन कांग्रेस रूपी शरीर का एक अंग था। इनके नसों में भी कांग्रेसी विचारधार रूपी रक्त प्रवाहित हो रही थी। अन्तर केवल इतना था कि ये कौंसिल प्रवेश के हिमायती थे।

1921 का वर्ष भारत में असहयोग आन्दोलन का काल था। सम्पूर्ण देश के साथ-साथ मध्यप्रांत में भी आन्दोलन जोर पकड़ता गया।असहयोग आन्दोलन में कौंसिल न्यायालय सरकारी शिक्षण संस्था, मदिरा, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार व स्वदेशी का प्रचार आदि कार्यक्रम था जिसमें बड़ी संख्या में भारतीय जनता वकील, राजनीतिज्ञ व विद्यार्थी भाग ले रहे थे। अतः अनेक अवसर पर विधान परिषद के निर्वाचित सदस्य ब्रिटिश सरकार से उसकी कार्यवाही के संबंध में प्रश्न पूछते थे व सरकार की दमन नीति को लेकर विरोध प्रकट करते थे। 13

15 मार्च 1921 को देशमुख ने सरकार से शिक्षण संस्थाओं का बहिष्कार करने

वाले विधार्थियों की जानकारी देने की मांग की। 12 अगस्त 1921 को के.पी. पाण्डे ने ये जानना चाहा कि सरकार मध्यप्रांत की सरकारी शिक्षण संस्थाओं के बहिष्कार करने वाले विद्यार्थियों के संबंध में कौन सी नीति अपनाने जा रही ह। इसी प्रकार के प्रश्न एल. के. कटारे ने भी 29 नवम्बर 1921 को उठाया जिसका उत्तर देते हुए शिक्षा विभाग के सचिव ए.ई. नेल्सन ने विधान परिषद में जानकारी दिया कि मध्यप्रांत से एंग्लो वर्नाक्यूलर स्कूलों के 3200 विद्यार्थियों तथा नार्मल स्कूलों के 3000 विद्यार्थियों ने बहिष्कार किया था।

असहयोग आन्दोलन के अन्तर्गत वकीलों द्वारा न्यायालयों का बहिष्कार संबंधी प्रश्न अनेक बार विधान परिषद में उठाया गया। 13 सितम्बर 1921 को सेठ शिवलाल द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देते हुए विधि विभाग के सचिव ने यह जानकारी दिया कि न्यायालय का बहिष्कार करने वाले वकीलों के साथ लीगल प्रेक्टिशनर एक्ट की धारा (13) एफ के अन्तर्गत कार्यवाही की जायेगी। इस उत्तर का सदस्यों ने तीव्र विरोध किया।

विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार व स्वदेशी के प्रचार का मामला विधान परिषद में उठाया गया। अप्रैल 1921 ई. में मध्यप्रांत के जुडिशियल कमिश्नर द्वारा अपने कार्यालय के कर्मचारियों को गांधी टोपी पहनने को प्रतिबंधित करने व जबलपुर स्थित बुनियादी प्रशिक्षण संस्थान के विद्यार्थियों द्वारा गांधी टोपी पहनने के विरूद्ध महाविद्यालय के प्राचार्य द्वारा जारी किए गये आदेश का मामला मों. अहमद ने 15 मार्च 1922 को विधान परिषद में उठाया इसके साथ ब्रिटिश प्रशासन की कार्यवाही की अनेक सदस्यों ने निंदा की।

विदेशी वस्त्रों के साथ ही मदिरा का बहिष्कार भी असहयोग आन्दोलन का एक प्रमुख कार्यक्रम था। विधान परिषद के निर्वाचित सदस्य सेठ बद्री प्रसाद द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर देते हुए 9 अगस्त 1921 को सरकार की ओर से विधान परिषद में यह जानकारी दी गई कि प्रदेश के विभिन्न स्थानों में भारी जन विरोध को देखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों से न केवल मदिरा दुकानों को हटाया गया था, अपितु शहरी क्षेत्रों में मदिरा दुकानों की संख्या में कमी की गई है।

हथकड़ी कांड-

विधान परिषद के संसदीय इतिहास में हथकड़ी कांड छत्तीसगढ़ के लिए एक महत्वपूर्ण घटना है। जिसको छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करने में विशेष महत्व रहा है। यह ब्रिटिश प्रशासन की दोहरी नीति का परिचायक रहा।

द्वैध शासन के अन्तर्गत मध्यप्रांत की विधान परिषद के गैर सरकारी सदस्यों ने 13 एवं 14 सितम्बर 1922 को रायपुर में रविशंकर शुक्ल को पुलिस द्वारा हथकड़ी पहनाये जाने की घटना की न्यायिक जांच की मांग को लेकर अपनी राष्ट्रवादिता का एक और मिशाल प्रस्तुत किए।

हथकड़ी कांड के संबंध में हुए वाद विवाद का विश्लेषण करते हुए माननीय निर्वाचित सदस्य एन.ए.द्रविण ने निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किया :- ''यह परिषद महामहिम गवर्नर को यह अनुशंसाा करती है कि रायपुर हथकड़ी कांड की निष्पक्ष तथा गहन जांच हेतु एक समिति का गठन करें, जिसमें एक न्यायाधीस तथा दो गौर सरकारी सदस्य हो।

प्रस्ताव पर चर्चा करतु हुए द्रविण ने तर्क दिया कि रायपुर जिला राजनीतिक सम्मेलन के आयोजकों द्वारा अधिकारियों को प्रवेश स्थल पर रोकना कोई जल्दबाजी में लिया गया निर्णय तो नहीं था, वास्तविकता यह थी कि आयोजकों द्वारा सम्मेलन में प्रवेश के लिए सशुक्ल पत्र उपलब्ध कराये थे जिन्हें खरीद कर कोई भी व्यक्ति प्रवेश कर सकता था। इस प्रश्न को लेकर अधिकारियों द्वारा बलात प्रवेश करना तथा रोके जाने पर पं. शुक्ल को हथकड़ी पहनाना नितान्त अन्यायपूर्ण था। उन्होंने पूछा कि कानून के मजबूत हाथ क्या उसी समय कार्य करते हैं जब जनता का मामला हो तथा उस समय खामोश रहते हैं जब सरकारी अधिकारियों का मामला हो।

गृह सदस्य द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को तथ्यों से परे बताते हुए कहा कि ''रायपुर के नगर पुलिन निरीक्षक का यह कथन कि सम्मेलन स्थल पर गड़बड़ी की आशंका को देखते हुए पं. रविशंकर शुक्ल को वहां से हटाकर कोतवाली ले जाया गया, गलत था वस्तुतः जिस समय घटना घटी उस समय रविशंकर शुक्ल, वामनराव लाखे और डॉ. ई. राघवेन्द्र के साथ सम्मेलन के प्रवेश द्वार पर थे। पं. शुक्ल को हथकड़ी पहनाकर कोतवाली ले जाने की घटना सम्मेलन में उपस्थित लोगों को उस समय चला जब लाखे एवं राव ने सम्मेलन स्थगित करने की सूचना दी।

गृह सदस्य की जांच को अपर्याप्त मानते हुए द्रविण ने स्पष्ट किया कि गृह सदस्य ने स्थानीय प्रलिस अधिकारियों द्वारा कथकड़ी कांड की जांच कराकर विधान परिषद के सम्मुख केवल प्रशासनिक पक्ष को रखा। अतः यह जांच निष्पक्ष नहीं मानी जा सकती। उनके अनुसार हम इस घटना की जांच किसी भी स्वतंत्र पंचार से करने की मांग करते हैं जिससे कि शासन में जनता का विश्वास बहाल किया जा सके।

इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए माननीय सदस्य एम.आर.दीक्षित ने हथकड़ी कांड के संदर्भ में की गई विभागीय जांच को अपर्याप्त निरूपित करते हुए कहा कि ''आयोजकों द्वारा अधिकारियों को निःशुक्ल प्रवेश देने से इंकार करने पर पं. शुक्ल को हथकड़ी लगाकर रायपुर के सड़कों में उन्हें घुमाना तथा गैर कानूनी तरीकों से उन्हें दो दिनों तक बंदी बनाए रखना अनुचित था।

आनंदी प्रसाद ने प्रशासन पर आरोप लगाते हुए कहा कि वस्तुतः इस घटना को लेकर प्रशासन के अधिकारियों को पश्चाताप करना चाहिए था जो कि उन्होंने नहीं किया। इसके विपरीत उन्होंने पं. रविशंकर शुक्ल को हथकड़ी पहनाकर उनको प्रतिष्ठा को नीचा गिराने तथा प्रशासन की शक्ति का प्रदर्शन करने का प्रयास किया है।

विधान परिषद के निर्वाचित सदस्यों ने गृह विभाग के प्रभारी सदस्य एम.व्ही.जोशी पर सरकार का पक्ष लेने का आरोप लगाया। जे.बी.साने ने यहां तक कहा कि ''लोगों ने ब्रिटिश न्याय पर विश्वास करना छोड़ दिया है'' समाज के लोग तभी शांत होंगे, जब शासन जांच समिति में गैर सरकारी सदस्यों को नियुक्त करने का साहस करें।

उपरोक्त तमाम तर्को का उत्तर देते हुये गृह सदस्य एम.व्ही.जोशी ने विधान परिषद में कहा कि जिस अनुभवी पुलिस अधिकारी के द्वारा हथकड़ी कांड की जांच की गई थी वह अपनी निष्पक्षता के लिए प्रसिद्ध था। उनके द्वारा की गई जांच हर प्रकार से गहन और परिपूर्ण थी। जांच अधिकारी ने लगभग 30 गवाहियों का परीक्षण किया था। पं. रविशंकर शुक्ल से भी जांच समिति के समक्ष बयान देने कहा गया तो उन्होंने इंकार कर

दिया। अतः यह कहना कि जांच अधिकारी द्वारा की गई जांच अपर्याप्त और एकपक्षीय है, कहना सवर्था गलत थी। उन्होंने सदन को यह सूचना भी दी कि शासन ने अपनी ओर से एक पृथक जांच समिति के गठन का प्रस्ताव भी किया था, जिसमें जुडिशियल कमिश्नर, कमिश्नर तथा एक वकील को रख जाना था।

सम्मेलन स्थल में अधिकारियों द्वारा निःशुल्क बलात् प्रवेश करने के आरोप का खंडन करते हुए गृह सदस्य ने बताया कि रायपुर के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर ने सम्मेलन के संयोजकों से पांच टिकटों की मांग करते हुए उनके देयक शासन को भेजने का अनुरोध किया था, इसके बाद भी संयोजकों ने अधिकारियों के लिए टिकटें उपलब्ध नहीं करवाई। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि पं. रविशंकर शुक्ल ने अधिकारियों पर बल प्रयोग किया तथा जिस समय यह सब हो रहा था उस समय बाहर हिंसा के लिए आतुर भीड़ एकत्रित होने लगी थी। अतः पुलिस ने स्थिति को बिगड़ने से रोकने के लिए आवश्यक कार्यवाही की।

गृह सदस्य के स्प्टीकरण पर असंतोष व्यक्त करते हुए माननीय सदस्य व्ही. महाजनी ने यह टिप्पणी की कि यदि यह तथ्य सही है कि रायपुर के डिप्टी कमिश्नर ने सम्मेलन में प्रवेश करने हेतु पांच टिकटें क्रय करने का प्रयास किया तो फिर पांच से अधिक व्यक्ति के साथ सम्मेलन स्थल पर जाने की क्या आवश्यकता थी। डिप्टी कमिश्नर का काफी संख्या में पुलिस अधिकारियों और कर्मचारियों के साथ सम्मेलन स्थल में पहुँचना इस बात का संकेत था कि सम्मेलन के संयोजकों द्वारा उसे निःशुल्क प्रवेश पत्र देने से इंकार करने पर उसका प्रमुख उददे्श्य संयोजक पं. शुक्ल को गिरतार कर प्रशासन की शक्ति का प्रदर्शन करना मात्र था।

शासन पक्ष के स्पष्टीकरण का विरोध करते हुए जी.पी.जायसवाल ने विधान परिषद में तीन मांगे रखी :-

1. हथकड़ी कांड के लिये जिम्मेदार व्यक्ति को चेतावनी दी जाये।
2. पं. रविशंकर शुक्ल से सरकार माफी मांगे।
3. सरकार यह आश्वासन दे कि भविष्य में ऐसी घटना की पुनरावृत्ति नहीं होगी। 29

यह उल्लेखनीय है कि विधान परिषद में हथकड़ी कांड की गूंज दो दिनों तक होती रही। अनेक गैर सरकारी सदस्यों ने पुलिस और प्रशासकीय अधिकारियों के अन्यायपूर्ण घटना की निन्दा करते हुये निष्पक्ष जांच की मांग की। अतः 14 सितम्बर 1922 को एन. ए.द्रविण के प्रस्ताव पर मतदान कराया गया। मतदान के प्रस्ताव के पक्ष में 22 तथा इसके विरूद्ध 32 वोट पड़े।

इस प्रकार पुनः जांच संबंधी द्रविण के प्रस्ताव के अस्वी त होते ही हथकड़ी कांड पर विधान परिषद में 301 विवाद समाप्त हो गया।

निष्कर्ष–

उपरोक्त स्त्रोतों के अध्ययन से पता चलता है कि 1919 के सुधार अधिनियम द्वारा स्थापित द्वैधशासन प्रणाली ने प्रजातांत्रिक व्यवस्था की नींव रखी। इन्होंने भारतीय जनता को आंशिक उत्तरदायी प्रशासन की प्रशिक्षण प्रदान किया। यद्यपि द्वैधशासन के उददे्श्य श्रेष्ठ थे, किन्तु इनके क्रियान्वयन दोषपूर्ण रहा, जिसके कारण यह व्यवस्था अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल रहा।

कांग्रेस जैसी राष्ट्रीय संस्था ने इस प्रणाली को दिखावा माना और भारत में पूर्ण उत्तरदायी प्रशासन स्थापित करने की मांग की ।

नवम्बर 1920 में हुए निर्वाचन में कांग्रेस और मुस्लिम लिंग द्वारा सम्मिलित नहीं होने पर यह निर्वाचन एक औपचारिकता मात्र रह गया। इसमें किसी प्रकार के मुकाबला देखने को नहीं मिला।

कौसिल प्रवेश के इच्छुक नरमदलीय कांग्रेसियों द्वारा ''द सेन्ट्रल प्राविसेंस नेशलन एसोशिएसन'' का गठन कर निर्वाचन में भाग लेना संसदीय इतिहास में नये युग की शुरूवात करता है। इस दल के निर्वाचित विधान परिषद में द्वैध सरकार में सम्मिलित नहीं हुए, बल्कि सशक्त विपक्ष में बैठकर शासन के कार्यो व नीतियों की आलोचना करने लगे। वास्तव में यह कार्य उनके राष्ट्रवादिता का परिचायक हैं।

मध्यप्रांत के विधान परिषद में इस दल ने निर्वाचन सदस्यों का स्वर्णीय काल उस समय आया जब उन्होंने पं. रविशंकर शुक्ल को हथकड़ी पहनाये जाने की घटना की निन्दा प्रस्ताव प्रस्तुत किया। वास्तव में ब्रिटिश प्रशासन ने अनैतिक आचरण का परिचय देते हुए गैर कानूनी ढंग से पं. रविशंकर शुक्ल को हथकड़ी पहना कर अपमानित किया था। इन सदस्यों द्वारा घटना की न्यायिक जांच की मांग को जिस ढंग से सदन के पटल पर रखा और विभिन्न तर्को के द्वारा सरकार के गैर कानूनी कार्यो की निन्दा की गई व सरकार से माफी मांगने कहा गया। निश्चय ही यह कार्य उनके विधान परिषद सदस्य होने के गरिमा को रेखांकित करता है। सरकारी जांच को एकपक्षीय बताकर दोषियों को सरकार द्वारा समर्थन किये जाने की तीव्र भर्त्सना करते हुए पुनः न्यायिक जांच की मांग करना अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ''द सेंन्ट्रल प्राविसेंस नेशलन एसोशिएसन'' के निर्वाचित सदस्यों में देशभक्ति और स्वतंत्रता प्राप्ति की भवना कूट-कूट कर भरी थी। 1920 के निर्वाचन में भाग लेकर इन्होंने प्रजातंत्र की पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करने का प्रयास किया और अपने कार्यो से जनता में जागृति पैदा किये।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. एम.एम.एंड एस.पी. जैदी -: ''इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन नेशनल कांग्रेस'' खण्ड 7 पृष्ठ 572
2. वीरकेश्वर-: भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एवं सवैधानिक विकास पृष्ठ.
3. वीरकेश्वर -: उपरोक्तानुसार पृष्ठ....
4. चोपड़ा बी.एन. -: ''द गलेटियर ऑफ इण्डिया'' खण्ड 2 पृष्ठ 342
5. ....
6. शुक्ल प्रयाग दत्त :- क्रांति के चरण पृष्ठ 161
7. मुंजे पेपर्स -: डॉ मुंजे का पत्र 14 सितम्बर 1920
8. होम पोलिटिकल फाईल 77/1921 पक्षिक रिपोर्ट दिसम्बर 1920 का द्वितीय पक्ष
9. ....
10. होम पोलिटिकल फाईल 18/05/1922 पक्षिक रिपोर्ट मई 1922 का द्वितीय पक्ष एवं डॉ. रोशन आरा -: मध्यप्रांत में द्वैधशासन का कार्यान्वयन एवं उसके सवैधानिक परिणाम शोध प्रबंध पृष्ठ 96, 97
11. होम पोलिटिकल फाईल नं. 23/1920-ए.आई.सी.सी. पेपर्स पृष्ठ 8
12. होम पोलिटिकल फाईल -: निटर्न शिलिंग द रिजल्ट्स ऑफ इलेक्शन इन इण्डिया-1920 पृष्ठ 22, 24
13. शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ -: जीवनी खण्ड पृष्ठ 15

14. होम पोलिटिकल फाईल -: सी.पी. लेजिस्लेटिव कौसिल प्रोसीडिंग 1921 पृष्ठ 248
15. उपरोक्तानुसार...
16. उपरोक्तानुसार... 290 से 310
17. उपरोक्तानुसार... पृष्ठ 331, 33

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

डी.पी.आई.पी. विकासखण्ड अमहा जिला सीधी के सन्दर्भ में

* संध्या शुक्ला

सारांश- *मध्यप्रदेश के पिछड़े हुए 14 जिलो के चुने हुए गाँवों में अत्यन्त गरीब परिवारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में बदलाव लाने के उद्देश्य से जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना डी.पी.आई.पी. लागू कि गयी है राज्य सरकार की पहल पर विश्व बैंक के वित पोषण से संचालित इस महत्वाकांक्षी परियोजना की लागत 600 करोड़ रूपयें हैं इस राशि में से 559 करोड़ रूपयें समुदाय द्वारा अपने अंशदान के रूप में तथा शेष 41 करोड़ रूपयें विश्व बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण और राज्य सरकार के अंशदान के रूप में गाँव के स्तर पर निर्मित अपना कोष में भविष्य में स्वंय के उपयोग के लिए जमा करायें जायेगे।*

परियोजना का कार्यक्षेत्र प्रदेश के उतरी और उत्तर पश्चिम भाग के 14 जिलो के 53 विकासखण्डों के 2933 गाँव हैं। उल्लेखनीय है कि प्रदेश के बुन्देलखण्ड अंचल के सभी 5 जिले परियोजना में सम्मिलित हैं गाँवों के चयन का आधार मानव विकास प्रतिवेदन है जिसमें यह तथ्य रेखांकित हुआ था कि बुन्देलखण्ड अंचल में गरीबी की स्थिति सबसे अधिक है प्रदेश के चुने हुए पिछड़े इलाको में प्रारंभ की गई यह परियोजना गरीबों के जीवन में नयी उम्मीदे और आशाए जगाती है। परियोजना में महिलाओं के आर्थिक विकास और स्वाबलम्बन पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है जो महिला सशक्तीकरण का मार्ग प्रशस्त है जो महिला सशक्तीकरण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

डी.पी.आई.पी. परियोजना का मिशन-

परियोजना गरीबी उन्मूलन की दशा में काम करने के खास मूल्यों को एक मिशन का रूप प्रदान कर रही है-

- जनभागीदारी
- लोगो का सशक्तिकरण
- प्रक्रिया का मूलक
- विकेन्द्रीकरण
- अनुभवों से सीखना
- पारदर्शिता और सहयोगात्मक रवैया अपनाना

डी.पी.आई.पी. परियोजना का लक्ष्य और उद्देश्य-

परियोजना के निर्धारित लक्ष्यों और उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इन बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

- साधनाहीन लोगो के समान उद्देश्यों की पूर्ति के गठित समहित समूहों को मजबूत

★ विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय ठा. रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

और सक्रिय बनाना।

* ऐसे अनुकूल अवसर पैदा करना जिससे गाँवों के गरीबो की आय में वृद्धि हो सके।
* विकास के लिए माँग पर आधारित अवधारणा को प्रोत्साहन देना।
* गाँवों में ऐसी संस्थाओं को बढ़ावा देना जो ज्यादा प्रभावी और ज्यादा जबावदेह हो।

डी.पी.आई.पी. परियोजना किसके लिए–

परियोजना के 14 जिलो के चुने हुए गाँवों में परिवारों को इस तरह चुना जाता है–

* अनुसूचित जाति/जनजाति परिवार।
* मजदूरी के लिए बाहर जाने (पलायन करने वाले परिवार)
* ऐसे परिवार जिनके स्थायी घर नही है महिलाएँ और ऐसे परिवार भी जिनकी मुखिया महिला हैं।
* भूमिहीन और सीमान्त किसान परिवार।

लक्षित परिवार–

परियोजना के 14 जिलो में चुने हुए गाँवो में परिवारों को इस तरह चुना जाता है–

* आर्थिक श्रेणीकरण के आधार पर वर्णित किए हुए गरीब एवं अति गरीब परिवार।
* अनुसूचित जाति/जनजाति के परिवार।
* मजदूरी के लिए पलायन करने वाले परिवार।
* ऐसे परिवार जिनके पास कोई स्थानीय मकान नहीं है और हर वर्ष मरम्मत करनी पड़ती हैं।
* महिलाएँ और ऐसे सभी परिवार जिनकी मुखिया महिला हो।
* भूमहीन और सीमान्त किसानो के परिवार।

राज्य शासन की मंशा के अनुरूप इस परियोजना में शामिल 2933 गाँवो को समग्र विकास की दृष्टि से पंच-ज गाँवों के रूप में विकसित करने की योजना बनायी गई है।

रणनीति–

यह महत्वाकांक्षी परियोजना लोगो की गरीबी दूर करने की दिशा में की गयी पिछली कोशिशों और उपायो से एकदम अलग हटकर हैं अलग इस मायने में कि यह परियोजना शासन और सरकारी तंत्र के तरीको से पूरे दूर दराज इलाको में रहने वाले गरीब परिवारों के लोगो तक सीध पहुँच बनाकर उन्ही के सामूहिक जुड़ाव से उनके जीवन को बेहतर बनाने के आसान मौके सुलभ कराती है।

परियोजना की रणनीति में व्यक्ति की बजाय समूह को प्राथमिकता दी गयी है इससे एक समान उद्देश्यों के लिए संगठित होने वाले समूहो को उनकी सामूहिक जरूरत के आधार पर सहायता राशि सीधे उनके बैंक खाते में उपलब्ध करायी जाती हैं जरूरत के अनुसार बैंक से पैसा निकालकर खर्च करने का अधिकार समहित समूहो के पास हैं। इस तर गरीबों के समहित समूहों की भागीदारी उनकी सामूहिकता समूह की ताकत में उनका भरोसा, गाँव के स्तर पर गतिविधियों का संचालन एक-दूसरे से सीखने की कोशिश और हर स्तर पर पारदर्शिता (खुलापन) इस योजना को ऐसा रूप देते है जिसमें यह किसी सरकारी योजना या कोशिश की जगह अपनी स्थिति में बदलाव और सुधार लाने की

लोगो की खुद की कोशिश हो जाती हैं।

अवधारणात्मक विवेचन– ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन परिवार गरीबी के कुचक्र में फॅसे रहते है। इस कुचक्र को तोड़ने के लिए यह आवश्यक है कि भूमिहीन मजदूरी तथा सीमांत एवं लघु किसानों को अपनी आजीविका के साधनों के लिए सहज एवं आसान दरों पर पूँजी उपलब्ध कराई जाए। स्व-सहायता समूहों तथा महिला बचत एंव साख समूहों के माध्यम से इन उद्देश्यों की काफी हद तक पूर्ति होती है, जहॉ समूह के सदस्य नियमित रूप से निर्धारित राशि की बचत कर सामूहिक बचत कोष की स्थापना करते हैं एवं जरूरत के अनुरूप सदस्यों को उस कोष में से ऋण उपलब्ध करते है। परन्तु अक्सर यह देखा गया है कि समूह के कोष में जितनी राशि उपलब्ध होती है उससे कहीं अधिक राशि की मॉग सदस्यों द्वारा की जाती है। सामुदायिक वित्तीय संगठन (सी. एफ. ओ.) के माध्यम से स्व-सहायता समूहों की अतिरिक्त वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है। सी. एफ. ओ. अपने माध्यम से बैंकों एवं अन्य संस्थानों जैसें राष्ट्रीय महिला कोष, नाबार्ड आदि से ऋण प्राप्त कर संघ हेतु एक सामूहिक कोष की स्थापना कर सकता है और जरूरत के अनुसार विभिन्न समूहों को राशि उपलब्ध करा सकते है।

अध्ययन का उद्देश्य–

ग्रामीण महिलाएँ सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई है उनको सक्षम बनाने के लिए सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ संचालित या क्रियान्वित की गयी उन्हीं में से पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा डी.पी.आई.पी. परियोजना क्रियान्वित कि गयी है इसके अन्तर्गत स्वसहायता समूह कार्यक्रम संचालित किया गया है जो महिलाओं को सक्षम बनाने के लिए हर संभव प्रयास कर रहा है इन उपरोक्त पक्षो को ध्यान में रखकर अध्ययन का उद्देश्य निर्धारित किया गया है -

(1) ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

(2) परियोजना (डी. पी. आई. पी.) के अन्तर्गत महिलाओं को सक्षम बनाने के लिए सहायतार्थ स्वसहायता समूह के बारे में महिलाओं को विभिन्न जानकारियों के विषय में अवगत कराना।

(3) स्वसहायता समूह का सदस्य बनने के लिए महिलाओं को परामर्श देकर प्रेरित करना।

(4) स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर प्राप्त होने वाले लाभो के बारे में महिलाओं को जानकारी देना।

(5) जो महिलाएँ स्वसहायता समूह का सदस्य नहीं बन पाती उसके पीछे छिपे हुए कारणो को जानने का प्रयास करना।

(6) जो महिलाएँ स्वसहायता समूह से जुड़ी हुई है उनको किस प्रकार का लाभ प्राप्त हो रहा है इसके बारे में जानकारी प्राप्त करना।

(7) स्वसहायता समूह की गठन प्रक्रिया के विषय में महिलाओं को जानकारी देना।

(8) स्वसहायता समूह के माध्यम से समाज में आपसी समरस्ता लाने का प्रयास करना।

अध्ययन की सीमाएँ–

शोधार्थी द्वारा अध्ययन क्षेत्र में जाकर अनुसूची व साक्षात्कार के माध्यम से आंकड़े एकत्रित किए गए। अध्ययन की जो सीमाएँ हैं ये मुख्य रूप से शोधार्थी के लिये ही है।

अर्थात् शोधार्थी के द्वारा आंकड़े एकत्रित करने के समय ऐसी विधियों का ही प्रयोग किया जाय जो कि पूर्णतः सूचना दाताओं को जानकारी देने के समय किसी भी प्रकार की समस्या का सामना न करना पड़े एवं सूचनादाता को जानकारी देने में सरलता हो।

ँउचसपदह ज्मबीदपुनम (निदर्शन प्रविधि)- द्वारा उन कारणों का चयन पता लगाना जिसकी वजह से पारिवारिक विघटन हो रहे हैं।

साक्षात्कार–

साक्षात्कार शोध मे आंकडे संकलन करने की एक प्राचीन तथा बहुचर्चित प्रविधि है। साक्षात्कार प्रविधि के माध्यम से सूचनादाता के सामने बैठकर वार्तालाप के द्वारा अनेक प्रकार की जानकारियॉं प्राप्त कर सकते है।

मापन– शोधार्थी द्वारा अध्ययन क्षेत्र में जाकर स्व सहायता समूह के मदद से गरीब परिवारों के इंदिरा गांधी गरीबी हटाओं योजना के तहत निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया जिसमें कुल 15 प्रश्न है।

प्रक्रिया– इस प्रक्रिया मे प्रयोज्य को प्रपत्र भरने को दिया जाता है और प्रपत्र भरने के बाद उसमे मैनुअल की सहायता से स्कोरिंग करेगें और उसमे प्राप्तांक के आधार पर उसका विश्लेषण करेगें।

सांख्यिकीय विश्लेषण–

अमहा गाँव जिला सीधी में रहने वाली महिलाओं को सक्षम बनाने के लिए स्वसहायता समूह क्या कर रहा हैं और कहाँ तक अपने उद्देश्य को पूरा कर सका हैं आदि पक्षों को ध्यान में रखकर अध्ययन प्रस्तुत किया गया जिसका विवरण आगे प्रस्तुत सारणियों में अंकित है।

प्रश्न-1 परिवार का स्वरूपः-

तालिका क्र0 1, उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	**परिवार का स्वरूप**	**आवृति**	**प्रतिशत**
01	सयुक्त परिवार	15	60 प्रतिशत
02	एकल परिवार	10	40 प्रतिशत
	योग	**25**	100 प्रतिशत

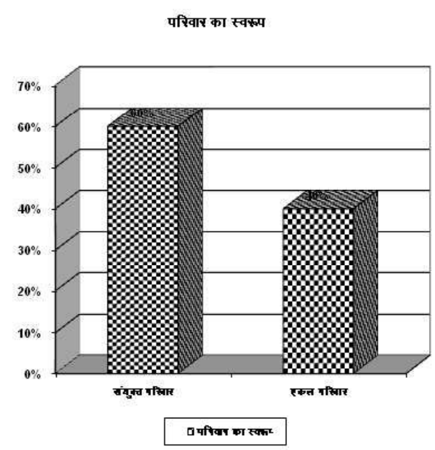

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि समुदाय के अन्तर्गत 60 प्रतिशत महिलाएँ सयुक्त परिवार में रह रही हैं तथा 40 प्रतिशत महिलाएँ एकल परिवार में रह रही हैं।

प्रश्न- 2 आपके परिवार में महिला सदस्यों की संख्या कितनी है ?

तालिका क्र0 2, उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	महिला सदस्यो की संख्या	आवृति	प्रतिशत
01	2	15	60 प्रतिशत
02	4	10	40 प्रतिशत
	योग	**25**	100 प्रतिशत

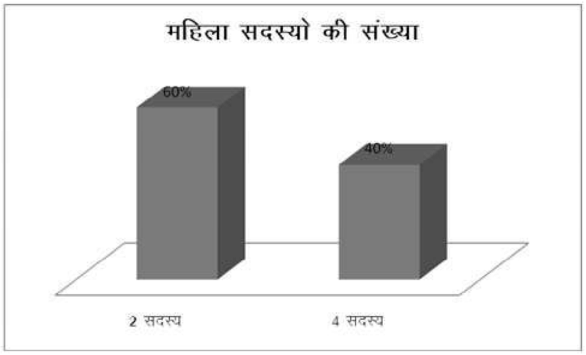

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि परिवार में महिला सदस्यो की संख्या जिसमें 60 प्रतिशत परिवार में 2 महिला है। एवं 40 प्रतिशत परिवार में 4 महिला है।

प्रश्न-3 क्या आपको स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी है:-

तालिका क्र0 3, उत्तरदाताओ का दृष्टिकोण

क्र.	स्वसहायता समूह के विषय मैं जानकारी है	आवृति	प्रतिशत
01	हाँ	16	64 प्रतिशत
02	नही	09	36 प्रतिशत
	योग	**25**	100 प्रतिशत

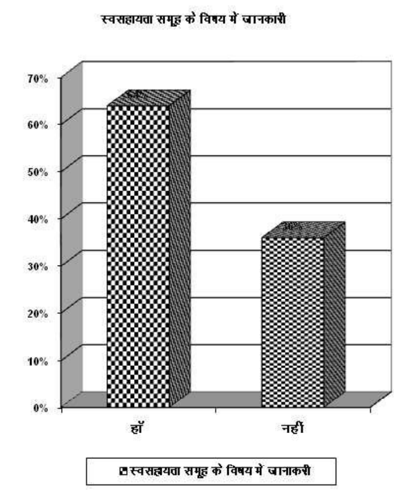

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 64 प्रतिशत महिला को स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी हैं और 36 प्रतिशत महिलाओं को स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी नहीं है।

प्रश्न-4 परियोजना (डी. पी. आई. पी.) के अन्तर्गत संचालित स्वसहायता समूह कार्यक्रम महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है क्या आप इस नीति से सहमत है:-

तालिका क्र0 4, उत्तरदाताओं को दृष्टिकोण

क्र.	**स्वसहायता समूह महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है।**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
01	हाँ	20	80 प्रतिशत
02	नही	05	20 प्रतिशत
	योग	**25**	**100**प्रतिशत

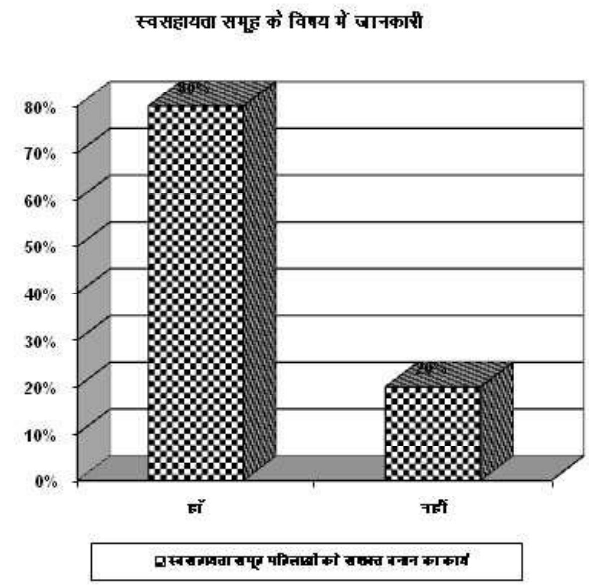

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 80 प्रतिशत महिलाएँ इस नीति से सहमत है कि स्वसहायता समूह कार्यक्रम महिलाओं को सश्सक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है और 20 प्रतिशत महिलाएँ इस नीति से सहमत नही है कि स्वसहायता समूह कार्यालय महिलाओ को सशक्त बनाने के लिए कार्य रही है।

प्रश्न-5 आपके विचार में जादातर स्वसहायता समूह से जुड़ना क्यों आवश्यक है।

तालिका क्र0 5, उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	**स्वसहायता समूह से जुड़ने का कारण**	**आवृति**	**प्रतिशत**
01	गरीबी दूर करने के लिए	8	32 प्रतिशत
02	परिवार के विकास के लिए	7	28 प्रतिशत
03	महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए	10	40 प्रतिशत
04	उपर्युक्त में से कोई नहीं	0	0 प्रतिशत
	योग	**25**	100 प्रतिशत

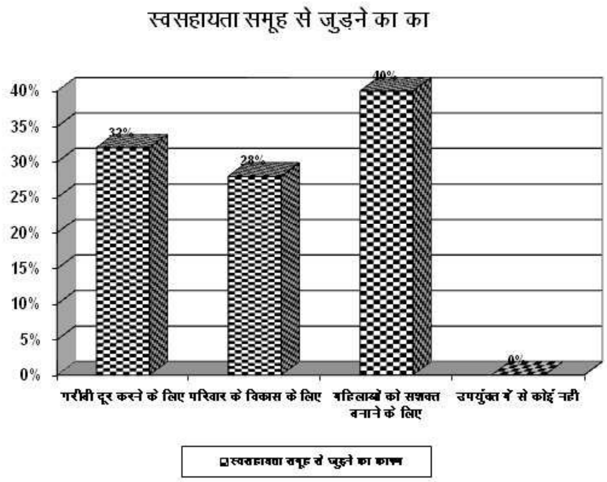

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि गरीबी दूर करने के लिए आवश्यक है 28 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि परिवार के विकास के लिए स्वसहायता समूह से जुड़ना आवश्यक है और 40 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए स्वसहायता समूह से जुड़ना आवश्यक है।

प्रश्न-6 कौन सी महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है या जुड सकती है

तालिका क्र0 6, उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	कौन सी महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है	आवृति	प्रतिशत
01	गरीब महिलाएँ	6	24 प्रतिशत
02	अति गरीब	4	16 प्रतिशत
03	समस्याग्रस्त	8	32 प्रतिशत
04	उक्त सभी	7	28 प्रतिशत
	योग	**25**	**100 प्रतिशत**

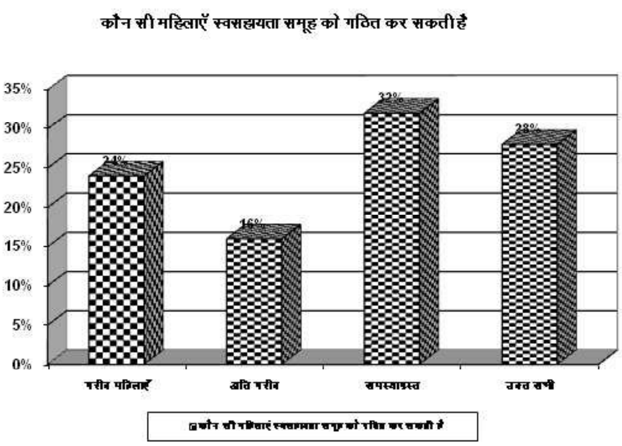

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 24 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि गरीब महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती हैं 16 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि अति गरीब महिलाएँ ही स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि समस्याग्रस्त महिलाएँ ही स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है 28 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि उक्त सभी महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है।

प्रश्न-7 क्या स्वसहायता समूह का सदस्य के बनने पर महिलाएँ अधिक आत्मनिर्भर बन जाती है-

तालिका क्र0 7, उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	**स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर महिलाऐं आत्मनिर्भर हो जाती हैं।**	**आवृति**	**प्रतिशत**
01	हाँ	18	72 प्रतिशत
02	नहीं	7	28 प्रतिशत
	योग	**25**	**100 प्रतिशत**

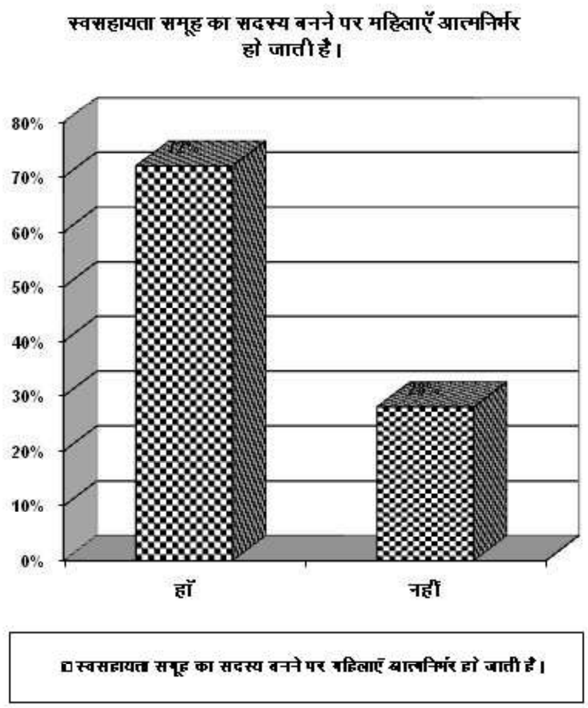

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 72 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाएँ स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर आत्मनिर्भर हो जाती हैं जबकि 28 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाएँ स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर आत्मनिर्भर नहीं बन पाती।

प्रश्न-8 आपके विचार में जो महिलाऐं स्वसहायता समूह की सदस्य होती है। वे उन महिलाओं की अपेक्षा अधिक सक्षम होती है। जो स्वसहायता समूह की सदस्य नहीं होती है।

तालिका क्र0 8

उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण

क्र.	**जो महिलाएं स्वसहायता समूह की सदस्य होती है वे उन महिलाओं की अपेक्षा अधिक सक्षम होती है जो समूह की सदस्य नही होती है।**	**आवृति**	**प्रतिशत**
01	हाँ	25	100प्रतिशत
02	नहीं	0	0 प्रतिशत
	योग	**25**	**100 प्रतिशत**

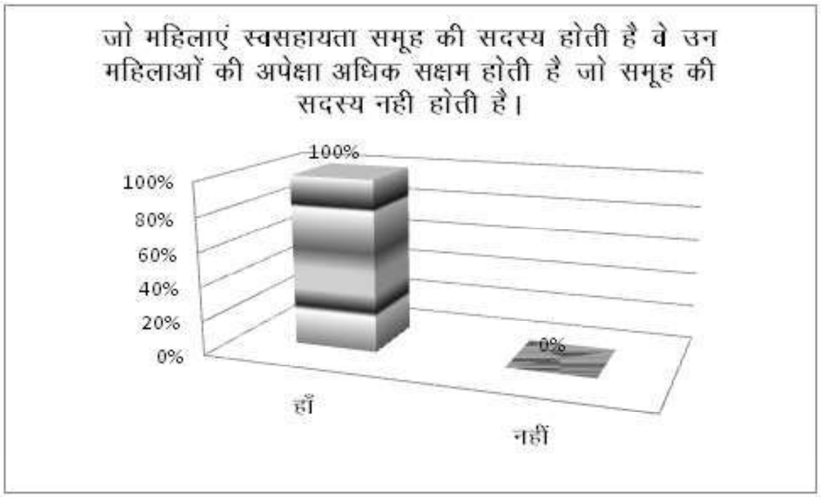

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है। की पूर्ण 100 प्रतिशत का माना है की स्वसहायता समूह भी सदस्य उन महिलाओ से सक्षम है जो समूह की सदस्य नही है।

निष्कर्ष एवं सुझाव–

निष्कर्ष– मैने अपने अध्ययन में जिन महिलाओं का चुनाव किया उन सभी से स्वसहायता समूह महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए क्या कर रहा है तथा जो महिलाएँ स्वसहायता समूह की सदस्य नही बन पाती उसके पीछे क्या कारण है आदि के संबंध में उनके विचारों को जानने का प्रयास किया और निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए

1. समुदाय के अन्तर्गत 60 प्रतिशत महिलाएँ सयुक्त परिवार में रह रही है तथा 40 प्रतिशत महिलाएँ एकल परिवार में रह रही है।
2. 64 प्रतिशत महिलाओं को स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी है तथा 36 प्रतिशत महिलाओं को स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी नही है।
3. 80 प्रतिशत महिलाएँ इस नीति से सहमत है कि स्वसहायता समूह कार्यक्रम महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है तथा 20 महिलाएँ इस नीति से सहमत नहीं है कि स्वसहायता समूह कार्यक्रम महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है।
4. 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि गरीबी दूर करने के लिए स्वसहायता समूह से जुड़ना आवश्यक है 28 प्रतिशत महिलाओं का कहना है परिवार के विकास के

लिए 40 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए स्वसहायता समूह से जुड़ना आवश्यक है।

5. 24 प्रतिशत महिलाएँ यह कहती है कि गरीब महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है 32 प्रतिशत महिलाएँ यह कहती है कि समस्याग्रस्त महिलाएँ स्वसहायता समूह को गठित कर सकती है तथा 16 प्रतिशत महिलाएँ कहती है कि समस्याग्रस्त महिलाएँ गठित कर सकती हैं।
6. 76 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि जो महिलाएँ स्वसहायता समूह की सदस्य है वे इन महिलाओं से सक्षम है जो स्वसहायता समूह की सदस्य नही है जबकि 24 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि जो महिलाओं स्वसहायता समूह की सदस्य होती है वे उन महिलाओं से अधिक सक्षम नही होती जो स्वसहायता समूह की सदस्य नही होती।
7. 12 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि स्वसहायता समूह महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महिलाओं में आत्मविश्वास जगाने की कोशिश कर रहा है 16 प्रतिशत महिलाओं का कहना है महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महिलाओं को शिक्षित कर रहा है 40 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महिलाओं को बचत के बारे में बताता है जिससे वे अपने परिवार का विकास कर सकती है।तथा 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए उपरोक्त सभी कार्य करता है।
8. 40 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि पारिवारिक दबाव की बजह से महिलाएँ स्वसहायता समूह की सदस्य नही बन पाती 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि महिलाएँ अशिक्षित होने के कारण स्वसहायता समूह की सदस्य नही बन पाती 12 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि साँस-ससुर का घर से बाहर बहूँ का काम पे जाना न पसन्द किया जाना महिलाओं कों स्वसहायता समूह का सदस्य न बनने देता और 16 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि समाज में प्रचलित पर्दा प्रथा महिलाएँ स्वसहायता समूह का सदस्य नही बन पाती।
9. 32 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि स्वसहायता समूह का उद्देश्य महिलाओं को सामाजिक और आर्थिक रूप से सक्षम बताना है 24 प्रतिशत महिलाओं का कहना हैं कि स्व सहायता का उद्देश्य महिलाओं को बचत हेतु प्रेरित करना है कि 16 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि स्वसहायता समूह का उद्देश्य महिलाओं को नवीन योजनाओं के बारे में जानकारी प्रदान करना है तथा 28 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि उपरोक्त सभी स्वसहायता समूह के उद्देश्य है।
10. 84 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि उन्हें स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर लाभ प्राप्त हो रहा हैं तथा 16 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि उन्हें स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर लाभ नहीं प्राप्त हो रहा है।

सुझाव– ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने में स्वसहायता समूह किस प्रकार कार्य कर रहा है और कहा तक अपने उद्देश्य को पूरा कर सका है तथा कितने और अच्छे ढंग से कार्ययोजना बनाकर अपने उद्देश्य को पूरा कर सकता इसके संबंध में शोधार्थी द्वारा

निम्न सुझाव प्रस्तुत किये गए हैं

1. स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को पहले इन बातों की सूची तैयार कर लेनी चाहिए वे किस प्रकार षुरूआत में महिलाओं से बात करेगे फिर धीरे-धीरे उन्हें स्वसहायता समूह के बारे में जानकारी प्रदान करेगे जिससे महिलाओं को यह महसूस न हो कि वे उनके पास किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए आये है और जबरजस्ती उन्हें स्वसहायता समूह का सदस्य बनने के लिए मजबूर कर रहे हैं।
2. स्वसहायता समूह के कर्मचारी महिलाओं के बीच बैंठकर उनको स्वसहायता समूह का सदस्य बनने के लिए अत्यन्त सरल षब्दों में परार्मशन दे जिससे महिलाओं को अपनापन महसूस हो।
3. जो महिलाएँ स्वसहायता समूह की सदस्य तो बनना चाहती है लेकिन पारिवारिक दबाव की बजह से नहीं बन पाती तो स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को उनके परिवार के मुखिया से मिलकर बात करनी चाहिए और उनको समझाने की कोशिश करनी चाहिए कि इसका सदस्य बनने पर लाभ ही प्राप्त होता है उससे कोई हानि नही होती।
4. जो महिलाएँ स्वसहायता समूह की सदस्य है यदि वे किसी पारिवारिक दबाव जैसी समस्या से ग्रसित हो जाती है और इच्छा के विरूद्ध सदस्यता छोड़ने को तैयार हो जाती है तो स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को उनके परिवार के सदस्यों से मिलकर बात करनी चाहिए और उनको समझाने की कोशिश करनी चाहिए जिससे महिलाओं को यह महसूस हो कि स्वसहायता समूह केवल उन्हें सक्षम बनाने का कार्य नही करता बल्कि यदि वे किसी पारिवारिक दबाव जैसी समस्या से ग्रसित हो जाती है तो उससे भी निजात दिलात है।
5. स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को गाँव में समय-समय पर जाकर महिलाओं के लिए विशेष रूप से शिक्षा से संबंधित कार्यक्रमों का अयोजन करना चाहिए और उसमें स्वसहायता समूह कार्यक्रम के बारे में भी जानकारी देनी चाहिए और स्वसहायता समूह का सदस्य बनने पर प्राप्त होने वाले लाभों के बारे में भी जानकारी देनी चाहिए।
6. स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को महिलाओं को स्वसहायता समूह का सदस्य बनने के लिए परामर्शन देते समय इस बात की अधिक जानकारी देनी चाहिए वे किस प्रकार इसका सदस्य बनने पर इससे प्राप्त होने वाले लाभो से अपनी छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा कर सकती है इसके लिए उन्हें अपने परिवार के सदस्यों पर निर्भर नहीं रहना पाड़ेगा।
7. जो महिलाएँ गरीब है, अति गरीब और समस्याग्रस्त है और वे अन्य महिलाओं के साथ समायोजन नहीं कर पाती है तो स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को उन्हें परामर्शन देकर इस समस्या से निजात दिलाना चाहिए।
8. समूह में होने वाले सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमो के प्रति उनके साथ स्वसहायता समूह के कर्मचारियों को सहभागिता प्रदाशित करना चाहिए।
9. स्वसहायता समूह के माध्यम से बनाये जाने वाले समान की बिक्री हेतु उचित व्यवस्था की जानी चाहिए।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास

* अमृता सिंह

सारांश– प्राचीन काल से ही भारतीय गॉव प्रशासन के घुरी रहे इन संस्थाओं के माध्यम से गॉवों को संगठित किया गया था। गॉव में निवासी न्याय, ईमानदरी एवं कार्यकुशलता के साथ ऐसी संस्थाओं का संचालन करते थे, बदले में राज्य के द्वारा इन संस्थाओं को सम्बन्धित कार्यो पर पूरी शक्ति प्रदान की जाती थी। प्राचीन काल की स्थानीय संस्थाओं में 'ग्रामणी' को मुख्य स्थान प्राप्त था। यह ग्रामीण जनता का मॉ बाप माना जाता था। राज्य का कर इकट्ठा करना तथा उसका पूर्ण अभिलेख रखना इसका प्रमुख कार्य था। संक्षेप में कहा जा सकता है पंचायतें पूरे गॉव का शासन चलाती थी। प्रो. अल्तेकर के अनुसार, ''आधुनिक काल में भरत या यूरोप, अमरिका में ग्राम पंचायतों को जितने अधिकार प्राप्त है उनसे कहीं अधिक इन प्राचीन कालीन ग्राम संस्थाओं को प्राप्त थे और इनकी रक्षा करने में हमेशा सावधान रहती थी ग्रामवासियों के अभ्युदय और उनकी सर्वागीण भौतिक, नैतिक और धार्मिक उन्नति के साधन में इनका भाग प्रशंसनीय और महत्वपूर्ण था।''

मौर्यकाल में स्थानीय शासन बहुत विकसित था गुप्त काल में उच्चकोटि की प्रशासनिक व्यवस्था को लागू कर अपने विशाल साम्राज्य पर सुचारू रूप से शासन किया। राजपूत काल में ग्राम प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी। सल्तनकाल में प्रशासन मूलत सैनिक था और सुलन निरंकुश प्रवृत्ति के थे। मुगल काल में भी ग्राम स्वायत शासन के सबसे महत्वपूर्ण निकाय थे।

यूरोपियनों के आगमन से भारत में स्थानीय स्वशासन के रूप में बदलाव आया ब्रिटिशकालीन स्थानीय शासन का आरम्भ 1687 से माना जाता है। इन स्थानीय स्वशासन क्षेत्रों में भारतीयों को कम अधिकार प्राप्त थे।

भारत की स्वतन्त्रता के साथ ही स्थानीय स्वशासन व्यवस्था में भारतीयों को सहभागिता बढ़ी और सामुदायिक विकास कार्यक्रम से इसे गति प्राप्त हुयी। 73 एवं 74 वे संवैधानिक संशोधनों के द्वारा इन स्थानीय संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा अप्रैल 1993 में प्राप्त हुआ। अब भारत में केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार की भांति स्थानीय सरकार भी संविधान का एक अंग बन गयी है।

भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास–

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में ग्रामीण प्रशासन प्रचलित था। रामायण, महाभरत कालीन साहित्य में सभाओं समितियों तथा गॉव का उल्लेख मिलता है। प्रो0 अल्तेकर के अनुसार, ''अतिप्राचीन काल से ही भारतीय ग्राम

★ सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, एम.जे.बी. पी.जी. महाविद्यालय फिरोजाबाद

शासन व्यवस्था की धुरी रहे है।''

शुक्रनीति में गॉवों के विषय में लिख गया है कि ''जहाँ से एक सहस्त्र चांदी के पण की आय हो वह गॉव है।'' वैदिक कालीन राज्यों का आकार छोटा होने से गॉवों का विशेष महत्व था। इस काल के गॉवों को (क) घोष (ख) ग्राम कहा जाता था। इनके अधिकारियों को क्रमशः घोष महत्तर एवं ग्राम महत्तर कहा जाता था।[2] रामायण में एक अन्य अधिकारी ग्रामणी का भी उल्लेख मिलता है। महाभरत में भी घोष एवं ग्राम का वर्णन किया गया है। घोष प्रायः जंगल के पास क्षेत्र होते थे वहां के निवासी गोप था गायों रखवाले होते थे।

मनुस्मृति में गॉव के अधिकारी को ग्रामिक कहा जाता था जो कर वसूली करता था। इस गॉवों के ऊपर के अधिकारी को दनिश, 100 ग्रामों के ऊपर का अधिकारी शतपाल या शताधिपति कहा जाता था। 200 ग्रामों के ऊपर के अधिकारी को विशाधिपति, 1000 ग्रामों के ऊपर अधिकारी को सहस्त्राधिपति कहा जाता था।

गॉवों का प्रशासन प्रजातन्त्रात्मक था। मेगस्थनीज (विदेशी विद्वान) के अनुसार, ''भारतीय ग्राम छोटे-छोटे आत्मनिर्भर गणतन्त्र थे।'' आचार्य शुक्र प्रत्येक गांव में 6 तरह के कर्मचारी रखने के पक्षघर थे। गॉव का अधिपति सुरक्षा अधिकारी, कृषि सम्बन्धी आय लेने वाला (सीताध्यक्ष) लेखक, प्रतिहार तथा व्यापारिक वस्तुओं पर शुल्क लेने वाला समाहर्त्ता।[3]

प्राचीन विद्वानों नारद, ब्रहस्पति, कात्यायन आदि स्मृतिकारों ने गॉवों के प्रशासन के लिए अनेक नियम बनायें और उन्हें स्थापित किया। आचार्य कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' में ग्रामीण प्रशासन के विषय में उल्लेख किया हैं कि उस समय स्थानीय स्वशासन पर्याप्त रूप से विकसित था। गॉव के प्रशासकीय समूह में एक अध्यक्ष, एक संख्यादक, एक स्थानिकख एक संघकारिक आदि कर्मचारी होते थे। इस काल के सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य की शासन व्यवस्था उच्च कोटि की थी।[4] डा0 सत्यकेतु विघालंकार के अनुसार, ''सम्राट चन्द्रगुप्त ने एक बड़ा साम्राज्य पाया तथा भारत में एक केन्द्रीय सरकार की स्थापना की किन्तु उसने भी ग्राम समाज के प्रति हस्तक्षेप की नीति नहीं अपनायी उस काल में प्रत्येक गॉव अपने विषयों में पूर्णतः स्वतन्त्र एवं स्वायत्रशासी था।''

हर्षकालीन स्थानीय शासन की मुख्य इकाई ग्राम थी ग्रामों के अधिकारी को महत्तर कहा जाता था ग्राम के प्रतिष्ठित व्यक्ति इस पद पर चुने जाते थे ग्राम महत्तर ग्राम के शासन की देखभाल करता था।

दक्षिण भारत के चोल साम्राज्य को बेहतरीन स्थानीय स्वशासन कर्त्ता कहा जा सकता है। शासन को अच्छे ढंग से संचालित करने के लिए समस्त साम्राज्य को मंडलों में विभाजित किया गया था। एक नाडु में अनेक कुर्रम अथवा गॉवों के समूह होते थे कुर्रम को अनेक नगरों व गॉवों में विभाजित कर दिया गया था। ग्रामों में स्थानीय स्वशासन सभाओं की व्यवस्था की गयी थी। प्रशासनिक कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए विभिन्न समितियॉ जैसे ग्राम की स्थायी समिति, तड़ाग समिति, कृषि समिति, उपवन समिति, न्याय समिति की स्थापना की गयी थी। चोल काल में दो प्रकार के गॉव होते थे। पहली श्रेणी में साधारण ग्राम 'डर' जिसकी सभा को उरार कहा जाता था। दूसरी श्रेणी में वे ग्राम थे जिन्हे चतुर्वेदि मंगलम कहा जाता था ये ग्राम ब्राहमणों को दान में दिये

गये थ। इनकी संस्था को सभा कहा जाता था।

गुप्तका में कुछ प्रान्तों में ग्राम समितियों का विकास हो चुका था। ये समितियाँ मध यभारत में पंचमंडली तथा बिहार में ग्राम जनपद कही जाती थी प्रो0 अल्तेकर के अनुसार, ''गुप्तकाल तथा उसके बाद में बिहार, राजपूताना, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक में ग्राम सभाओं की कार्यकारिणी समितियाँ स्थापित हो चुकी थी।

प्राचीन भारत में ग्रामीण संस्थाओं के निर्वाचन में दलबन्दी, साम्प्रदायिकता का प्रभाव नहीं थ। गुप्तशासकों ने अत्यन्त उच्च कोटि की प्रशासनिक व्यवस्था को लागू कर अपने विशाल साम्राज्य पर सुचारू रूप से शासन किया।

राजपूतकालीन समय में ग्राम प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी। ग्राम का प्रबन्ध ग्राम सभाओं द्वारा सम्पन्न किया जाता था। प्रत्येक ग्राम की एक सभा होती थी जो अपने क्षेत्र में शासन का समस्त कार्य करती थी। शासन की सुविधा के लिए अनेक समितियाँ गठित की गयी थी। नगरीय स्वशासन के प्रबन्ध के लिए 'पहनाधिकारी' नामक एक अधिकारी हेता था। जो आजकल नगर पालिका के कार्यपालिका अधिकारी के समान था।

सल्तनकालीन प्रशासन मूलतः सैनिक, निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी था। नगर प्रशासन केन्द्रीकृत नौकरशाही द्वारा संचालित था लेकिन गाँव अधिक स्वतन्त्र थे।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत से लेकर मध्ययुग के विभिन्न भागों में ऐसे स्वायन्तशासी निकाय थे जो गाँव था गाँव समूह पर प्रशासन करते थे।

भारत अपने प्राचीन काल में ग्राम प्रशासन के लिए प्रसिद्ध था तो वही नगरों के लिए बेहतर प्रशासन कार्यो के लिए भी जाना जाता है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की खुदाई से विद्वानों ने यही निष्कर्ष निकाला कि यहाँ (नगरों) सुव्यवस्थित प्रशासनिक व्यवस्था थी। इस काल में सड़के एवं नालियाँ सुनियोजित तरीके से बनायी गयी थी जो बिना अच्छे प्रशासन से सम्भव नहीं है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण सिन्धु प्रदेश में एक ही विशाल साम्राज्य संगठित था इस प्रदेश में एक संगठन, एक व्यवस्था तथा एक प्रशासन कायम था।

ब्रिटिश शासन के अनुसार स्थानीय स्वशासन का प्रारम्भ 1687 से माना जा सकता है जब मद्रास के लिए एक स्थानीय शासन के निकाय (नगर निगम) की स्थापना की गयी अतः भारत में स्थानीय शासन 300 वर्ष पुराना है। 1687 से उसका इतिहास कई रंग रूपों के दौर से गुजरा इसे हम मोटे तौर पर छः भागों में विभाजित कर सकते है।

1. प्रथम युग 1687 से 1881 तक[5]

भारत में स्थानीय मुख्यरूप से ब्रितानी स्वार्थो के सिद्ध करने के लिए स्थापित किया गया था, न कि देश में स्वशासी संस्थाओं का विकास करने के लिए लार्ड मेयों के प्रस्ताव (1870) में भी स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को विकसित करने की कल्पना की गयी थी, किन्तु उद्देश्य गौण था, मूल उद्देश्य राजस्च के स्थानीय स्त्रोंतो का दोहन करना और विकेन्द्रीकरण के द्वारा प्रशासन में मितप्ययिता लाना था। स्थानीय शासन की संस्थाओं पर अंग्रेजों का अधिपत्य था। भारतीय जनता की भागीदारी गौण थी।

2. द्वितीय युग 1882 से 1919

इस काल में भारतीयों में राजनीतिक चेतना का प्रसार हुआ लार्ड रिपन ने अंशतः

लोकमत को संतुष्ट करने के लिए 1882 में स्थानीय शासन को स्वशासी बनाने की प्रस्ताव करने की हर सम्भव कोशिश की।

3. तृतीय काल 1920 से 1937

प्रथम महायुद्ध (1914-18) के छिड़ जाने पर ब्रिटिश सरकार ने भारत की जनता का समर्थन और सहयोग प्राप्त करना आवश्यक समझा सरकार का उद्देश्य भारतीवासियों को प्रशासन की प्रत्येक शाखा से सम्बद्ध किया जाना और स्वशासी संस्थाओं का धीरे-ध ीरे विकास करना था जिससे उत्तरदायी शासन को सफल बनाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए 1920 में 1915 के भारतीय शासन अधिनियम को लागू किया गया प्रान्तों में द्वैध शासन प्रणाली को लागू करके उत्तरदायी शासन की शुरूआत हुई। कुछ विकासात्मक प्रकृति के कार्यों जैसे स्थानीय स्वशासन, सहकारिता तथा कृषि, जनता द्वारा निर्वाचित मन्त्रियों के नियन्त्रण में सौंप दिये गये। ये मन्त्री विधानमंडल के प्रति उत्तरदायी थे।

4. चतुर्थ काल 1937 से 1949

1937 में 1935 के भारतीय शासन अधिनियम का प्रान्तीय भाग लागू किया गया और प्रान्तों में द्वैध शासन के स्थान पर प्रान्तीय स्वायन्त्र शासन स्थापित किया गया। यहाँ भी कई कमियां और दोष मौजूद थे। 1947 में देश की स्वतन्त्रता के साथ-साथ भारत में स्थानीय शासन के इतिहास में एक नया युग शुरू हुआ विदेशी शासन के इतिहास में एक नया युग शुरू हुआ विदेशी शासन समाप्त होने के साथ-साथ केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय सभी स्तरों पर स्वशासन की स्थापना हुई। 1948 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री की अध यक्षता में प्रांतों के स्थानीय स्वशासन मंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ यह अपने प्रकार का पहला सम्मेलन था। इस काल में स्थानीय शासन जीर्णोधार और पुनर्निमाण की अवस्था में था।

5. पांचवाँ काल 1950 से 1992

लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण स्थानीय स्वशासन का ही एक प्रमुख रूप है सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए जिससे अधिक संख्या में जनता को सत्ता में भगीदारी मिलने का अवसर प्राप्त हो। इसे ग्रासरूट डेमोक्रेसी के नाम से भी जाना जाता है। आर. बी. जैन के शब्दों में, 'धरातल पर लोकतन्त्र की यह अवधारणा केवल लोकन्त्र का मुख दर्शन मात्र नहीं है बल्कि किसी भी देश की धरती में लोकतंत्र के गहराई से बीजारोधक का प्रयत्न है।[6]'' लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों की सहभागिता प्राप्त करने का एक सशक्त उपाय है। इसका ध्येय शासन कार्यों में लोगों की अधिकतम और जीवन्त सहभागिता को सुनिश्चित करना होता है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के तीन रूप है राजनीतिक आर्थिक और प्रशासनिक। राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत स्थानीय संस्थाओं में स्वायन्त शासन अधिक से और जनता की संस्थाओं की निर्धारित दायित्वों को पूर्ण करने के लिए आर्थिक संसाधनों के प्रबन्ध का अधिकार हो तथा प्रशासनिक दृष्टि से बिना ऊपर के हस्तक्षेप के अपने कार्यों के निर्देशन, पर्यवेक्षण और व्यावहारिक आयोजन का अधिकार हो। सामुदायिक विकास कार्यक्रम इस दिशा में आगे बढता हुआ एक कदम था। समय-समय पर गठित विभिन्न समितियों ने इन समस्याओं के समाधान के लिए समाधान खोजे लेकिन केन्द्र सरकार ने

रूचि 1989 में दिखानी शुरू की 1989 के पश्चात् स्थानीय सरकारों का पुनरूधार राजीव गाँधी सरकार की चिन्ता बना। राजीव गाँधी सरकार ने नगर पालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों से परामर्श लेकर इस विचार को जीवित रखा। तीन क्षेत्रीय सम्मेलन जून 1989 में बंगलौर, कटक, दिल्ली में आयोजित किए गए मुख्य सचिवों, स्थानीय स्वशासन मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों से पृथक-पृथक विचार विमर्श करके नगरीय सरकारों को संवैधानिक आधार प्रदान करने का मार्ग तैयार हुआ 65 वां संशोधन विधेयक संसद में प्रस्तुत किया जो राज्य सभा में पास नहीं हो सका। वी.पी. सिंह के नेतृत्व में बनी राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने पुन 74 वॉ संवैधानिक संशोधन विधेयक 1990 में प्रस्तुत किया इसमें पंचायत तथा नगर पालिका से सम्बन्धित प्रावधान भी थे। संसद के विघटन के कारण यह विधेयक समाप्त हो गया। जब पी.वी. नरसिंह राव जब 1991 में सत्ता में आये तब यह विधेयक दिसम्बर 1992 के लोकसभा तथ इसी महीने राज्य सभा ने भी इस विधेयक को स्वीकृति दे दी आधे से अधिक राज्यों की स्वीकृति के बाद 20 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद यह विधेयक 74 वॉ संशोधन अधिनियम 1992 कहा जाता है।[7] नगर पालिका से सम्बन्धित भाग 9 क 1.06.1993 को प्रवृत्त हुआ इससे नगरीय क्षेत्र में स्थानीय स्वायत्त शासन की इकाईयों को सांविधानिक आधार प्रदान किया गया है। ये संस्थाएँ सम्पूर्ण देश में विद्यमान है।

======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. भारत में लोक प्रशासन अवस्थी एवं अवस्थी पंचम संस्करण पृष्ठ 638-639।
2. वाल्मिकी रामायण एवं विष्णु स्मृति 3/7/10।
3. शुक्रनीति सार, शुक्र 2/362-369।
4. कौटिल्य, अर्थशास्त्र।
5. भारत में स्थानीय शासन, डॉ0 एस.आर. माहेश्वरी, पृष्ठ 23-36
6. आर.बी. जैन, पंचायती राज, आई.आई. पी.ए. पृष्ठ 11
7. डी.डी. बसु भारत का संविधान एक परिचय पृष्ठ 317

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences
ISSN 0975-4083, Vol.- XVI, Hindi-I, Year-VIII, April, 2017
Impact Factor 1.223 (IIFS)

राज्यों के विकास में स्थानीय स्वशासन की भूमिका

(राजनांदगांव नगर पालिक निगम के विशेष संदर्भ में)

* भारती सोनी
** डी.एन. सूर्यवंशी

सारांश– *1947 में प्राप्त स्वतंत्रता के पश्चात् ज्यों ही भारत एक सर्वप्रभुत्व सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में उभरा त्यों ही भारत की सरकार ने स्थानीय शासन की व्यवस्था को अत्यधिक महत्व देना आरंभ कर दिया। स्थानीय स्वशासन की ये इकाईयॉ वास्तव में लोकतंत्र की आधारशिला होती है यह बात स्वतंत्र भारत की सरकार ने अनुभव कर लिया था। आज के युग के मनुष्यों की अनंत आकांक्षाओं ने लोक कल्याणकारी राज्यों के कार्य को इतना बढ़ा दिया है कि केवल केन्द्रीय या राज्य सरकार इन कार्यो का निष्पादन नहीं कर सकती। तब आवश्यकता पड़ती है शासकीय विकेन्द्रीकरण की जहां केन्द्र व राज्य के मध्य कार्यो व उत्तरदायित्व का बंटवारा होता है तथा केन्द्र सरकार व प्रांतीय सरकार के कार्यो का जो विभाजन संविधान में किया गया है उससे यह स्पष्ट है कि नागरिकों की स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति का दायित्व संविधान निर्माताओं ने स्थानीय स्वशासन पर छोड़ा है, जिसे राज्य सूची का एक अंग बनाया गया है।*

भारत में प्राचीन काल से व्यवस्था के आधार पर दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति जितनी प्राचीन है उतना ही पुराना यहां की राजनीतिक व्यवस्था का इतिहास विश्व में प्राचीनकाल से लेकर अभी तक प्रमुख रूप से राजतंत्र, कुलीनतंत्र अधिनायकतंत्र व प्रजातंत्र चार प्रकार की व्यवस्थाएं संचालित हुई है। सन् 1947 से भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ब्रिटिश शासन प्रणाली को ही अपनाया गया जो संसदीय प्रजातंत्र व्यवस्था थी, पूर्व में इन व्यवस्थाओं को विकसित करने में छोटे-छोटे नगर, राज्य, कबिलों आदि का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा। अतः हम कह सकते है कि शासन व स्थानीय इकाईयों का संबंध उतना ही पुराना है जितनी हमारी शासन-व्यवस्था, अर्थात देश की शासन व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए इन छोटे-छोटे नगर, राज्यों का महत्व प्राचीन काल से निरंतर बना हुआ है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है यहां पहली बार लोकतंत्र के आधार पर चुनाव सन् 1952 में कराया गया किन्तु उस समय भी स्थिति स्पष्ट नहीं थी, भारत जैसे विशाल देश में यह संभव नहीं है कि प्रत्येक नागरिक की भागीदारी राजनीति अथवा शासन मे हो परंतु हम भारत में प्रत्येक नागरिक को शक्ति का स्त्रोत अवश्य कह सकते है। भारत में लोकसभा एवं विधानसभा में निर्वाचन के माध्यम से राज्य एवं राष्ट्रीय

★ शोधार्थी, शोध केन्द्र-सेठ रतनचंद सुराना कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
★★ प्राचार्य, सेठ रतनचंद सुराना कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

स्तर पर जनप्रतिनिधियों को चुना जाता था जो कि इस विशाल राष्ट्र की विशाल जनसंख्या की प्रत्यक्ष देखभाल करने में असमर्थ थे इसलिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण के सिद्वांत के अनुसार शहरों के विकास हेतु भारत में नगर पालिका, नगर निगम एवं साडा (SADA) (विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण) की स्थापना करके शहरी विकास का कार्य शहरी सत्ता को सौंपा गया। क्योंकि स्थानीय स्तर की समस्याओं को सत्ता के विकेन्द्रीकरण के माध्यम से ही दूर किया जा सकता है। अतः सत्ता के विकेन्द्रीकरण के आधार पर शहरी क्षेत्र के विकास का उत्तरदायित्व नगर निगम तथा नगर पालिक निगम को सौंपा गया।

शहर के प्रशासन में नगर निगम बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है एवं इसका नेतृत्व नगर निगम आयुक्त द्वारा किया जाता है, जिसके पास समस्त कार्यकारी अधिकार होते है। नगर निगम अपने क्षेत्र में रहने वाले निवासियों के स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने और समस्याओं का समाधान करने संबंधित अनेकानेक कार्यो को सम्पन्न कराने का कार्य करता है। प्रायः सभी अधिनियमों में नगर निगम के कार्यो को तीन भागों में विभाजित किया गया है। सांविधिक या अनिवार्य तथा ऐच्छिक या विवेकाधीन तथा विशेष कार्य। विभिन्न राज्यों के अधिनियमों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि सभी राज्यों द्वारा नगर निगम को प्रदत्त उत्तरदायित्व लगभग एक जैसे है अंतर केवल इतना ही है कि कोई एक कार्य किसी अधिनियम में अनिवार्य कार्यो की सूची में सम्मिलित है तो किसी अन्य अधिनियम में वह ऐच्छिक कार्यों के रूप में है। सभी राज्यों के नगरीय निकायों से संबंधित अधिनियमों में निर्दिष्ट अनिवार्य कार्यो को निम्न सूची में व्यक्त किया जा सकता है-

1. जल वितरण, सड़क परिवहन व्यवस्था
2. पीने योग्य शुद्ध जल स्त्रोतों का निर्माण तथा जल वितरण
3. विद्युत का प्रबंध
4. खाद्य पदार्थों व भोजनालयों का नियमन व नियंत्रण
5. नालियों व सड़क की साफ सफाई
6. सार्वजनिक मार्गों की सफाई
7. गंदी बस्तियों की सफाई
8. जन्म-मृत्यु दर का लेखा-जोखा रखना
9. प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना
10. चिकित्सालयों व प्रसुति एवं बाल कल्याण केन्द्र की स्थापना
11. खतरनाक भवनों को निरापद बनाना या हटाना
12. अग्निशमन सेवाओं की व्यवस्था करना
13. नगर निगम की संपत्ति का रख रखाव
14. बिमारियों की रोकथाम के लिए टीके लगवाना
15. निगम प्रशासन के संबंध में वार्षिक प्रतिवेदनों व नक्शे का प्रकाशन आदि।

वर्तमान में नगर पालिका प्रत्यक्ष रूप से राज्य सरकार के साथ संपर्क साधे हुए है। यह जिला प्रशासन का भाग व स्थानीय स्वशासन का रूप है। नगर पालिका के कार्य तथा उत्तरदायित्व संविधान के 74वां Amendment Act 1992 द्वारा मागदर्शित है जो 01 जून

1993 से प्रभावी हुआ। 74वां संविधान संशोधन अधिनियम 1993 द्वारा नगरों में स्थानीय स्वशासी संस्थाओं की स्थापना तथा उनके कार्यों के संबंध में वैधानिक प्रावधान किए गए।

भारत वर्ष में मध्यप्रदेश राज्य का निर्माण 1 नवम्बर सन् 1956 में हुआ तथा 1 नवम्बर सन् 2000 को मध्यप्रदेश का विभाजन कर छत्तीसगढ़ राज्य का गठन हुआ। गठन के समय यहां 16 जिले थे तथा 26 जनवरी 1973 में राजनांदगांव जिले की स्थापना की गयी, जो पूर्व में दुर्ग जिले का भाग था। राजपथ क्रमांक-6 पर स्थित राजनांदगांव जिला उत्तर में कबीरधाम, पूर्व में दुर्ग, दक्षिण में बस्तर जिले तथा पश्चिम में महाराष्ट्र राज्य से घिरा हुआ है। जो 8222 वर्ग कि.मी. भौगोलिक क्षेत्र में फैला हुआ है। राजनांदगांव जिले के गठन के पश्चात् प्रारंभ में इस नगर के नागरिकों को मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने एवं नगरीय व्यवस्था हेतु किसी स्थानीय निकाय का नितांत अभाव था। 5 सितम्बर सन् 1983 को राजनांदगांव नगर पालिका की स्थापना की गयी। राजनांदगांव नगर पालिक निगम छत्तीसगढ़ का ऐसा निगम है जहां जनता की भाषा, धर्म, संस्कृति अलग होने के बाद भी सामाजिक एकरूपता तथा सुख-दुख में एकता की मिशाल सबके लिए प्रेरणा बनी हुई है।

चूंकि छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री माननीय डॉ. रमन सिंह जी राजनांदगांव के विधायक तथा उनके सुपुत्र माननीय अभिषेक सिंह जी यहां के सांसद है अतः यहां का राजनैतिक महत्व और भी बढ़ जाता है। मुख्यमंत्री के विधानसभा क्षेत्र होने के कारण यह जिला सदैव ही पूरे प्रदेश की नजरों में रहा है तथा चूंकि राजनांदगांव के विकास का दारोमदार नगर पालिक निगम पर ही होने से इस स्थानीय निकाय का महत्व व कार्य और भी बढ़ जाता है। किसी भी देश के विकास को मापने का पैमाना उस देश में राज्यों की स्थिति ही होता है अर्थात देश का विकास इस बात पर निर्भर करता है कि राज्यों में विकास का स्तर क्या है तथा राज्यों के विकास का उत्तरदायित्व इन स्थानीय निकायों पर ही होता है तथा राजनांदगांव नगर पालिक निगम भी इससे अछूता नहीं। वर्तमान में राजनांदगांव नगर पालिक निगम राजनांदगांव के शहरी क्षेत्र की जनता की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में पूरी तरह व्यस्त है। मुख्यमंत्री तथा उनके बेटे का इस जिले से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े रहने के कारण यह जिला सदैव ही विरोधी दलों के निशाने पर रहा है तथा यही बात नगर पालिक निगम के उत्तरदायित्व व कार्यो को और भी ज्यादा विस्तृत करता है जिसका निर्वहन नगर पालिक निगम के द्वारा भली भांति किया जा रहा है।

वर्तमान में राजनांदगांव नगर पालिक निगम की प्रमुख योजनाएं-

1. **सरोवर धरोहन योजना**- इस योजना के तहत नगर पालिका क्षेत्रों के तालाबों का संरक्षण एवं संवर्धन किया जाता है।
2. **ज्ञान स्थली योजना**- इस योजना में नगर पालिका द्वारा नगरीय निकायों में नए उद्यान विकसित कर बच्चों के खेलने की व्यवस्था की जाती है।
3. **मुख्य मंत्री स्वावलंबन योजना**- इस योजना के अंतर्गत नगर पालिका द्वारा निकाय क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले शिक्षित बेराजगारों को व्यवसाय शुरू करने के लिए कम लागत वाली दुकानों, चबूतरों का निर्माण कर आबंटित किया जाता है।

4. **बाबा गुरूघासीदास झुग्गी बस्ती उत्थान योजना**– इस योजना में नगर पालिका निकाय क्षेत्र में आने वाली झुग्गी बस्ती क्षेत्रों में मुलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराती है।
5. **ट्रांसपोट नगर योजना**– इस योजना में नगर पालिका द्वारा नगर के सघन क्षेत्रों में स्थित ट्रांसपोर्ट से संबंधित आयोमों को शहर के बाह्य सीमा में स्थानांतरित योजनाबद्ध रूप से विकास करना।
6. **गोकुल नगर योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका द्वारा नगरी क्षेत्रों की डेयरी को नगर की सीमा के बाहर आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक स्थानों पर व्यवस्थापित कराती है।
7. **अटल–आवास योजना एवं वाल्मिकी**– आंबेडकर आवास योजना - इस योजना के तहत नगर पालिका शहरी क्षेत्रों नवासरत आर्थिक रूप से कमजोर गंदी बस्तियों में गरीबी रेखा के नीचे या उसके आसपास जीवन-यापन करने वाले आवासहीन लोगों को आवास उपलब्ध कराती है।
8. **निर्मल भारत योजना एवं नवीन प्रसाधन योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका द्वारा गंदी बस्ती क्षेत्र में सुलभ शौचालय व नगरीय क्षेत्र में सुलभ कॉम्प्लेक्स का निर्माण कराया जाता है।
9. **मुक्तिधाम योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका नगरीय क्षेत्रों में मुक्तिधामों का उन्नयन कराती है।
10. **प्रतीक्षा बस स्टैण्ड योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका निकायों में सर्वसुविधा युक्त बस स्टैण्ड का निर्माण कराती है।
11. **स्वच्छ छत्तीसगढ़ योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका द्वारा नगरीय क्षेत्रों में शुष्क शौचालय का निर्माण करवाया जाता है।
12. **पं.श्यामप्रसाद मुखर्जी युवा जन विकास योजना**– इस योजना के तहत नगर पालिका शिक्षित बेरोजगारों को प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वावलंबित बनाती है।
13. **मिनीमाता शहरी निर्धन बीमा योजना**– इस योजना के अंतर्गत नगर पालिका द्वारा गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले या गरीबी रेखा के सीमा के उपर रहने वाले न्यूनपतम 25 व्यक्तियों के समूह का बीमा किया जाता है।

निष्कर्ष–

हमारे संविधान की मंशा थी कि स्थानीय निकायों के माध्यम से ऐसा समावेशी समाज बने जहां सामाजिक न्याय, आर्थिक तरक्की के साथ-साथ शासन में जनता की भागीदारी हो तथा शक्ति के विकेन्द्रीकरण के माध्यम से यह मंशा सफल भी हुई। लोक कल्याण के लिए नई नई योजनाओं का निर्माण व उनका सफल क्रियान्वयन परम आवश्यक है जो कि केवल केन्द्रीय स्तर तक सीमित रहने से नहीं हो पाता, परंतु स्थानीय निकायों के माध्यम से यह संभव हो पा रहा है। इसी तरह राजनांदगांव नगर पालिक निगम भी केन्द्र व राज्य सरकार के सभी योजनाओं को राजनांदगांव के नगरीय क्षेत्रों में सफलता पूर्वक लागू करवाने का प्रयत्न कर रहा है। जिसमें कुछ छोटी-मोटी समस्याएं तो अवश्य आ रहीं है परंतु नगर निगम पुरी निष्ठा व समर्पण से इसका सामना कर रही है जो

उसकी सफलता की पहली विशेषता है।

=======================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. फड़िया, बी.एल.- भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन, आगरा
2. शर्मा, अशोक- भारत में स्थानीय प्रशासन, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2014
3. अर्गल, राजेश्वर- म्यूनिसीपल गवर्नमेन्ट इन इंडिया, इलाहाबाद, अग्रवाल प्रेस, 1954
4. मध्यप्रदेश नगर पालिक निगम अधिनियम, 1956 सभी संशोधनों सहित
5. मुखर्जी, राधामुकुंद- लोकल गवर्नमेन्ट इन ऐनिशियेट इंडिया, ऑक्सफोर्ड प्रेस, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी 1948
6. मासिक पत्रिका योजना, शहरी नियोजन विशेषांक सितंबर 2014
7. नगर पालिक निगम राजनांदगांव पर मेरे द्वारा किया गया सर्वेक्षण कार्य।

ISSN 0975-4083
9770975408002

JOURNAL OF

Centre for Research Studies

Rewa-486001 (M.P.) India

Registered under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997

www.researchjournal.in

Editor : Prof. Braj Gopal, Publisher - Gayatri Publications, Rewa (M.P.)